वंश
बेटी से,बेटे से या दोनों से ?

बेटी-बेटे जन्मे एक ही जैसे,तो बेटी, बेटे से कम कैसे ?

पूरन सिंह कीर नवीन

BlueRose ONE .com
Stories Matter
NewDelhi • London

BLUEROSE PUBLISHERS
India | U.K.

Copyright © Puran Singh Keer Naveen 2026

All rights reserved by author. No part of this publication may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without the prior permission of the author. Although every precaution has been taken to verify the accuracy of the information contained herein, the publisher assumes no responsibility for any errors or omissions. No liability is assumed for damages that may result from the use of information contained within.

BlueRose Publishers takes no responsibility for any damages, losses, or liabilities that may arise from the use or misuse of the information, products, or services provided in this publication.



For permissions requests or inquiries regarding this publication, please contact:

BLUEROSE PUBLISHERS
www.BlueRoseONE.com
info@bluerosepublishers.com
+91 8882 898 898
+4407342408967

ISBN: 978-93-7542-557-1

Cover Design: Deepak Katheria
Typesetting: Manisha Rawat

First Edition: May 2026



'लिंग-भेद, कुछ पुरुषों द्वारा महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को उनके स्वार्थपूर्ण इरादे से बदलने के लिये रचे गये एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र का परिणाम है।'

'Gender discrimination is the result of an unprecedented historical conspiracy plotted by some men to change the genderess social status of a woman with their selfish motives.'

'महिला के रूप में जन्मी प्रत्येक बेटी, बेटे की ही तरह प्रकृति की देन है, और इससे आगे बढ़कर यह भी कि महिला के रूप में जन्मी बेटी, लोगों को सुंदर दिखने के लिये नहीं, अपितु वह भी संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता के साथ औरों की भांति, उसके सभी कर्तव्यों के निर्वहन, अधिकारों के उपभोग तथा उन पर शासन करने के सामर्थ्य के साथ जन्मी है।'

यह पुस्तक मेरी मां स्वर्गीय श्रीमती नथिया बाई कीर की चिर स्मृति में समर्पित

लेखक

पूरन सिंह कीर नवीन बी.ए. (समाजशास्त्र)
(नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली प्रतिपादक, प्रोत्साहक
तथा स्वतंत्र चिंतक)

भूमिका

'किसी अच्छे काम की ज़िंदा मिसाल बनने की खुद

में काबिलियत रहते, क्या कोई काम बड़ा है ?

बन जाओ खुद ऐसी मिसाल, इतिहास

तुम्हें लिखने को खड़ा है।'

मैंने यह पुस्तक महिला के रूप में जन्मी बेटी को उसकी आदि समाज के कुछ पुरुषों के द्वारा कुछ महिलाओं के सहयोग से उसके साथ लिंग-भेद के रूप में किये गये ऐतिहासिक षड्यंत्र के परिणाम स्वरूप उसे मिली सामाजिक दासता के पूर्ण उन्मूलन के उद्देश्य से लिखी है।

लिंग-भेद के संदर्भ में महिला दासता के ऐतिहासिक उद्भव तथा इसके उन्मूलन के साथ महिला सशक्तिकरण के लिये अपेक्षित सामाजिक जागृति तथा कानूनी परिवर्तन के माध्यम से संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता आधारित संस्कृति स्थापित किये जाने की रणनीति तथा इसके क्रियान्वयन की सामाजिक प्रायोजना (Social project) को प्रभावी रुप से वर्णित करती यह एक अभूतपूर्व पुस्तक है।

इस पुस्तक में प्रयुक्त सभी विषय वस्तुएं, आज की महिलाओं के साथ समाज के द्वारा वंश तथा पुरुष प्रधानता के नाम पर लिंग-भेद के रूप में एक षड्यंत्र के ऐतिहासिक उद्भव तथा समाज से इसके उन्मूलन के सभी तर्कपूर्ण, युक्ति-युक्त, तथ्यात्मिक, सामाजिक तथा वैधानिक आदि उपाय वर्णित किये गए हैं।

समाज के संदर्भ में ऐतिहासिक अनुभव तथा साक्ष्य यह बताते हैं कि मिथ्या कहानी स्थापित किये जाने के लिये भीड़ या जन सामान्य लोगों का समर्थन तो अति आवश्यक होता है, लेकिन किसी सत्य या तथ्य को उद्घाटित तथा स्थापित किये जाने का कार्य तो एक या कुछेक व्यक्ति ही करते हैं।समाज में इसे स्थापित करने में समय चाहे जितना भी लगे, परंतु एक या कुछेक

व्यक्तियों के द्वारा ही सत्य के रूप में कई तथ्यों को समाज में स्थापित किये जाने के पर्याप्त ऐतिहासिक उदाहरण मिलते हैं।

मिथ्या सामाजिक मान्यताओं की कहानियों में से एक यह भी है कि पिता के नाम से ही या पुत्र के जन्म होने से ही पिता का वंश आगे बढ़ता है, जो लिंग-भेद आधारित होने के कारण उनमें से एक है, जिसे कुछ पुरुषों के द्वारा कुछ महिलाओं के सहयोग से महिलाओं को संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने से वंचित रखने के षड्यंत्रात्मक उद्देश्य की पूर्ति करने के लिये इसे लिंग-भेद के रूप में सृजित करके समाज में स्थापित किया गया।इसलिये यह तथ्य कि 'लिंग-भेद, कुछ पुरुषों द्वारा महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को उनके स्वार्थ पूर्ण इरादे से बदलने के लिये रचे गये एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र का परिणाम है।'

('Gender discrimination is the result of an unprecedented historical conspiracy plotted by some men to change the genderless social status of a woman with their selfish motives.') सत्य है।

समाज में लिंग-भेद के रूप में प्रचलित इस षड्यंत्र के उन्मूलन के बिना महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) के संदर्भ में पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) मिल पाना संभव नहीं है।

मनुष्य की आदि संस्कृति तथा सभ्यता के विकास की एक अवधि विशेष के कुछ ऐतिहासिक-पुरातात्विक साक्ष्य यह बताने के लिये काफी हैं कि उक्त ऐतिहासिक अवधि विशेष में मनुष्यों के बीच आज के पशुओं के समान ही किसी भी प्रकार का कोई लिंग-भेद नहीं था। आज जिन पुरुषों एवं महिलाओं के द्वारा महिलाओं के साथ जो लिंग-भेदात्मक व्यवहार किया जाता है, इसकी नींव कुछ पुरुषों के द्वारा स्वार्थ तथा षडयंत्र पूर्वक तरीके से, उन्हें पुरुषों से कमतर तथा निम्नतर बने रहने के लिये महिलाओं को प्रशिक्षित किया गया तथा उन्हें ऐसे प्रशिक्षित किये जाने में षड्यंत्रात्मक तरीकों से पुरुषों के साथ कुछ महिलाओं का सहयोग भी लिया गया।

कुछ पुरुषों के द्वारा उनकी स्वार्थ सिद्धि की पूर्ति के लिये षड्यंत्रात्मक तरीके से महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को पुरुषों के अधीन वाली प्रस्थिति (हैसियत) में परिवर्तित करके उसे सांस्कृतिक रूप से समाज में स्थापित करके, उसे जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) के उपभोग तथा उसके सभी अपेक्षित कर्तव्यों के निर्वहन करने के अधिकारों से वंचित किये जाने के उद्देश्य से एक पुरुष प्रधान संस्कृति की स्थापना के नाम पर उसके साथ एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र (Unprecedented historical conspiracy) किया गया। उक्त कालिक अवधि विशेष की आदि समाज में महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों की श्रेष्ठता स्थापित करने वाले षड्यंत्रों में से एक और षड्यंत्र यह भी था कि माता या बेटी के नाम से उसका वंश स्थापित नहीं हो सकता, अपितु पिता के नाम पर ही जन्मे बेटे के द्वारा ही पिता का वंश स्थापित हो सकता है तथा इसी प्रकार से वंश आगे बढ़ने की पुरुष प्रधान संस्कृति की लिंग-भेदात्मक तथा दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताएं स्थापित की गईं। अर्थात कुछ पुरूषों के द्वारा षड्यंत्र की नीयत रखते मनोवैज्ञानिक तरीके से महिलाओं के मस्तिष्क में उनकी अपेक्षा पुरुषों की श्रेष्ठ तथा शक्तिशाली छवि स्थापित करने के उद्देश्य से एक मनोवैज्ञानिक तरीका अपनाया गया। वह यह कि कुछ पुरुषों के द्वारा महिला को हीन कहकर उन्हें स्वयं से पीछे रखा गया तथा स्वयं को श्रेष्ठ कहकर स्वयं को उनसे से आगे रखा गया।

यदि कोई भी महिला को महिला होने के आधार पर, उसे समाज में पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) नहीं मिले और किसी के भी द्वारा, उसे कोई भी पद या सुख-सुविधा मिलने पर, उस महिला के द्वारा ऐसे पद या सुख-सुविधाओं के उपभोग करने का गुणगान किया जाये तो, यह एक प्रकार से जाने-अनजाने में उसके (महिला) स्वयं के ऊपर कुछ पुरुषों द्वारा स्थापित की गई षड्यंत्रात्मक दासता का गुणगान करने के अतिरिक्त उसके द्वारा कुछ और माना या समझा जाना मात्र उसका भ्रम है, लेकिन वास्तविकता नहीं।

लिंग-भेद न तो प्राकृतिक है और न जैव वैज्ञानिकीय, पुरुषों द्वारा अतीत में इसे चाहे जिस उद्देश्य से सृजित किया गया हो, लेकिन इसके पश्चात तो,

उन्होंने उनका स्वार्थ और श्रेष्ठता बनाये रखने के कारण इसे ऐतिहासिक रूप से सोच-समझकर महिलाओं की भूमिका को दासता के स्तर पर बनाये रखा। जिसे ऐतिहासिक पहल के द्वारा ही समाप्त किया जा सकता। तभी महिला को पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) की संस्कृति के साथ जीने का सहज अवसर मिल सकेगा, अन्यथा नहीं।

समाज के परिवारों में किसी बेटी को बेटे के समान तथा समाज में किसी भी महिला को पुरुष के समान शत-प्रतिशत अधिकार तथा संपूर्ण सामाजिक समानता न मिलने के बदले, उन्हें मिलने वाली कोई भी सुख-सुविधाएं न तो उनके अधिकार हैं और न उनके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में पुरुष या बेटे के समान संपूर्ण सामाजिक समानता, अपितु उसे ऐसा कुछ भी मिलना एक प्रकार की उन्मादी पुरुष श्रेष्ठता या पितृसत्ता की दासता के गुणगान के बदले मिलने वाला एक नकारात्मक प्रोत्साहन मात्र है और इसके अतिरिक्त कुछ नहीं।

किसी समाज विशेष के किसी पंथ (धर्म) के समुदाय या जाति विशेष के लोगों द्वारा लिंग-भेदात्मक या लिंग-मतारोपित (Gender-indoctrinated) व्यावहार किये जाने या महिलाओं को जीवन के प्रत्येक संदर्भ एवं प्रसंग में पुरुष के जैसे श्रेष्ठ एवं समान होने या न होने के सामाजिक दृष्टिकोण को माने जाने का परीक्षण आप अपने जीवन के एक वास्तविक या कृत्रिम उदाहरण के माध्यम से कर सकते हैं।वह यह कि पति या पत्नी की वास्तविक भूमिका में होने पर इसका परीक्षण दोनों में से कोई भी कर सकता है।वह ऐसे कि यदि आप पति हैं, तो उक्त जाति या समुदाय विशेष के लोगों से कोई अन्य बात करते-करते, यदि अपनी स्वयं की पत्नी का स्वास्थ्य खराब होने के कारण स्वयं के द्वारा उसके हाथ-पैर दबाने की जानकारी उनसे साझा करें और इसी प्रकार के कृत्रिम उदाहरण के माध्यम से पत्नि का स्वास्थ्य खराब होने पर स्वयं के द्वारा पत्नी के हाथ-पैर दबाने की जानकारी उनसे साझा करने पर, यदि ऐसे संदर्भ में एक पति द्वारा पत्नी के हाथ-पैर दबाने का कृत्य उनके लिये हास्य या हीनता का विषय हो, तो समझिये कि वे महिलाओं को पुरुष के समान नहीं समझते और यदि इसके विपरीत हो, तो समझिये कि वे लोग महिला को सामाजिक रुप से पुरुष के समान समझते ही नहीं अपितु, वे स्वयं

उन्हें संपूर्ण सामाजिक समानता की संस्कृति के उपभोग करने देने का समर्थन भी करते हैं।

ऐसी समाज के समुदाय या जाति विशेष के लोगों द्वारा किसी महिला के प्रति ऐसी सोच रखे जाने के लिये व्यक्ति कम तथा मूल रूप से उस समाज के समुदाय विशेष के द्वारा पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं का माना जाना अधिक उत्तरदाई है।इसलिए इस संदर्भ में ऐसे समुदाय विशेष के एक व्यक्ति विशेष की लिंग-मतारोपित मानसिकता में सकारात्मक परिवर्तन आने से, उक्त संपूर्ण समुदाय विशेष से लिंग-भेद का उन्मूलन असंभव नहीं तो, दीर्घ उन्मूलनगामी अवश्य हो सकता है। यदि इसे त्वरित उन्मूलनगामी बनाना है, तो उक्त समुदाय विशेष के द्वारा पालन की जाने वाली पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली को नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली से प्रतिस्थापित किया जाना ही एक मात्र त्वरित समाधान है।

किसी समुदाय विशेष में प्रचलित लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में मेरे द्वारा उक्त कथित विचार का यह अर्थ बिल्कुल नहीं है कि जब जग सुधरेगा, तब हम सुधरेंगे।अर्थात व्यक्तिगत स्तर पर, चाहे आपके बेटा हो या बेटी हो या कुछ भी न हो, तो भी किसी बेटी या किसी महिला के लिये संपूर्ण सामाजिक समानता की संस्कृति के उपभोग किये जाने के संदर्भ में सकारात्मक परिवर्तन लाना, न तो कोई अपराध और न किसी बेटी या महिला के प्रति दया, अपितु यह तो सामाजिक दृष्टिकोण से किसी बेटी या महिला के प्रति स्वयं की दूषित मानसिकता के परिमार्जन की एक साधना है।

मैंने इस पुस्तक लिखने में तीन मानकों का प्रयोग किया है। वे हैं- (१) 'मन कर्म तथा वचन से स्वयं या मतारोपित किया जाने वाला कोई भी कार्य, जो प्रकृति मनुष्य तथा राष्ट्र के हितों को प्रोत्साहित करने के बजाय उसे बाधित करता हो, तो ऐसे सभी कार्य सही नहीं माने जा सकते या सही नहीं माने जाने चाहिए।' (२) 'माना तो कुछ भी जा सकता है, लेकिन माना तो वही जाना चाहिए, जो सही है।' (Anything can be believed, but only that should be believed which is right.) तथा (३)

'किसी भी कार्य करने वालों की संख्या अधिक हो या कम, व्यक्ति को मात्र वही कार्य करना चाहिए, जो प्रकृति, मनुष्य या राष्ट्र के हितों को संवर्धित करता हो।'

मनोविज्ञान के अनुसार अधिकतर लोगों की मनोवृत्ति / सोच / मानसिकता (mentality) ऐसी होती है कि जो कार्य बहुत से लोग करते रहे हों या शुरू करने जा रहे हों, और यदि वह कार्य अच्छा तो क्या, यदि वह बुरा भी हो, तो भी लोग उसे सही समझते हैं और इसके विपरीत यदि कोई कार्य एकाध या कुछेक व्यक्ति करते रहे हों या शुरू करने जा रहे हों और यदि वह कार्य ग़लत तो क्या, यदि वह सही भी हो, तो भी लोग उसे ग़लत ही समझते हैं। लेकिन जो व्यक्ति इस मनोविज्ञान के सिद्धांत को जानते हैं, वे ऐसे लोगों की परवाह किये बग़ैर अकेले ही या कुछेक होते हुये भी प्रकृति, मनुष्य या राष्ट्र के हितार्थ उस कार्य को पूर्ण मनोयोग तथा समर्पण के साथ करते रहे हैं या शुरू कर देते हैं, इस सिद्धांत से अनभिज्ञ लोग चाहे उस कार्य को सही समझें या ग़लत।

समाज के अधिकतर लोग जाने अनजाने में उक्त तीनों कथित सैद्धांतिक मानकों से अनभिज्ञ होने के कारण, लिंग-मतारोपित (Gender-indoctrinated) होकर लिंग-भेद समर्थित सभी सामाजिक कुमान्यताओं के साथ सदियों से आज तक जीते आ रहे हैं ।

महिला के रूप में जन्मी बेटी, आज के समाज में लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में जो सकारात्मक परिवर्तन देख रही है, सामान्यतःये सकारात्मक परिवर्तन न तो उन बेटियों के माता-पिता के प्रयासों का परिणाम है और न समाज के द्वारा किये गये प्रयासों का परिणाम, क्योंकि बेटियों के माता-पिता तथा समाज के पुरुष वर्ग द्वारा तो, बेटियों को बेटे के समान तथा महिलाओं को पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग करने देने के स्तर की न तो उनके पास कोई व्यवहारिक नैतिकता है और न कोई नीति तथा नियत। इस संदर्भ में आप आज जो कुछ सकारात्मक परिवर्तन देखते हैं, ये तो राष्ट्रीय तथा अंतरराष्ट्रीय स्तर के कुछ कर्मठ तथा दृढ़ इच्छाधारी नारीवादी महिलाओं तथा नारीवादी पुरुषों के द्वारा राष्ट्रों के संवैधानिक मसौदों में करवाये गये कानूनी प्रावधानों के क्रियान्वयन के कुछ सकारात्मक परिणाम हैं।

नारीवादी महिलाओं तथा नारीवादी पुरुषों के द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिये आज महिला के रूप में जन्मी सभी बेटियों को चाहिए कि वे यह समझें कि आज के समाज के सामान्य व्यवहार के साथ विश्व का संपूर्ण पौराणिक साहित्य तथा आज के आधुनिक साहित्य की विभिन्न विधायें जैसे- फिल्में, नाटक आदि भी लिंग-भेद आधारित प्रतीत होते हैं।इसलिये उन्हें सुंदर दिखने के लिये पुरुष प्रदत्त सोलह श्रृंगार वाली लिंग-मतारोपित मानसिकता तथा पुरुष पिछलग्गू तथा पुरुष पसंदीदा अंध विवेकहीन दौड़ से बाहर निकल कर आंशिक सामाजिक समानता मिलने के नाम पर संतुष्ट न होकर, नारीवादी महिलाओं तथा नारीवादी पुरुषों की अपेक्षाओं के अनुरूप उन्हें संपूर्ण सामाजिक समानता प्राप्त करने के लिये समाज में प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की पितृसत्तात्मक सोच के उन्मूलन के लिये किसी के भी विरुद्ध लोकतांत्रिक रूप से विद्रोही भूमिका में जीने की आवश्यकता है।

आज की महिला के रूप में जन्मी बेटी को सोशल मीडिया पर कुछ पुरुषों से अधिक कुछ महिलाओं के द्वारा, कुछ अश्लील पुरुषों की अपेक्षा के अनुरूप, स्वयं को यौन प्रतीक (Sex symbol) के रूप में दृश्य तथा श्रव्य रूप में अश्लील साहित्य परोस रही हैं, जो नारी की सकारात्मक तथा नायकवादी छवि स्थापित करने के मार्ग में एक दुर्दांत बाधा है। महिला के रूप में जन्मी प्रत्येक बेटी को ऐसी अश्लील विषय वस्तुओं के अनुकरण से बचते हुये समाज में स्वयं की नायकवादी नारी की छवि स्थापित करने के लिये, पुरुषों की पिछलग्गू बने बिना और उन्हें सुधरने की ज़िद किये बिना स्वयं को लिंग-भेद की अर्चना तथा साधना मुक्त जीवन जीना होगा और इस तरह वह स्वयं की समाज में उसके साथ किये जा रहे लिंग-भेद के उन्मूलन के इतिहास को लिखने में निसंदेह रुप से सफल भी हो सकेगी।

मेरी इस पुस्तक के शीर्षक से यह आसानी से समझा जा सकता है कि मेरे द्वारा इस पुस्तक के लिखने के पीछे उद्देश्य क्या है।मेरा पहला विशिष्ट उद्देश्य यह कि हिंदू समाज के परिवार में जन्मी बेटियों को उनके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में बेटों के समान तथा महिलाओं को पुरुषों के समान, उनके सभी कर्तव्यों के निर्वहन, सभी अधिकारों के उपभोग और यदि उसे लोकतांत्रिक तरीके से जब कभी लोगों पर संवैधानिक शक्ति के द्वारा शासन करने का अवसर मिले तो, बिना कानूनी भय के पुरुषों के समान शासन

करने देने की सामाजिक स्वीकृति की सहज संस्कृति स्थापित हो तथा इसी संदर्भ में सामान्य उद्देश्य यह है कि हिंदू समाज के अतिरिक्त किसी भी समाज के संप्रदाय में जन्मी बेटियों एवं महिलाओं को भी जीने के लिये ऐसी ही कानून तथा समाज सम्मत सहज संस्कृति स्थापित हो सके।

व्यक्ति के जीवन के संदर्भ में प्रत्येक महिला को पुरुष के समान तथा प्रत्येक बेटी को बेटे के समान अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन करने देने की सहज संस्कृति का निर्माण तथा इसकी स्थापना के लिये संपूर्ण समाज में, विशेषकर पुरुषों के द्वारा इस पुस्तक में वर्णित नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों वाली सहज संस्कृति के साथ जीने की शुरुआत करना ही उनके द्वारा महिलाओं के साथ किये गये एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र के संदर्भ में एक सार्थक प्रायश्चित की ओर उठाया एक अभूतपूर्व मानवीय क़दम होगा।

मुझे आशा ही नहीं, अपितु पूर्ण विश्वास है कि वर्तमान समाज के कम से कम सभी बुद्धिजीवियों, तर्कवादियों तथा इंसानियत के चैंपियन दिखने वाले व्यक्ति मूल रूप से उनकी बेटियों के लिये तथा सामान्य रूप से समाज की सभी महिलाओं के जीवन के सर्वांगीण विकास के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में उनके बेटे तथा पुरुषों के समान व्यवहार करेंगे ताकि उन्हें (ऐसे पुरुषों को) इस संदर्भ में कम से कम पशुओं के बराबर तो समझा जा सके और इस संदर्भ में ऐसे व्यक्ति उनकी बेटियों तथा समाज की महिलाओं के सामने खड़े होकर, उनकी आंखों में आंखें डालकर तथा सिर उठाकर निष्पक्षता तथा गर्व के साथ अपनी बेटियों के पिता तथा समाज की समस्त महिलाओं के निष्पक्ष पुरुष साथी कहे जा सकें और वे ऐसी अभूतपूर्व लिंग-भेद उन्मूलन जैसी पहल (initiative) के साधक, सहभागी, साक्षी तथा नेतृत्वकर्ता बन सकें।

विषय सूची

अध्याय 1 इस विषय पर यह पुस्तक लिखने का विचार मेरे मस्तिष्क में कैसे आया ?.....1

अध्याय 2 लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की भूमिका का अध्ययन.....9

अध्याय 3 संपूर्ण सामाजिक समानता के संदर्भ में, भारतीय संविधान में उल्लेखित 6 मौलिक अधिकारों में सम्मिलित समानता के मौलिक अधिकार का विस्तृत विवरण-.....13

अध्याय 4 संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता का न होना लिंग-भेद के लिए उत्तरदायी कैसे?.....25

अध्याय 5 लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में, भारतीय संविधान में विहित 'हिंदू विवाह अधिनियम, 1955' की प्रमुख धाराएँ, अधिकारों और नियमों की समझ.....33

अध्याय 6 वंश की सामाजिक तथा जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं के मध्य अंतर की समझ.....44

अध्याय 7 वंश के जैव वैज्ञानिकीय परिप्रेक्ष्य में पुरुषों में Y क्रोमोजोम की अद्वितीयता के समान महिलाओं के X-क्रोमोजोम में माइटोकांड्रियल DNA की अद्वितीयता का अध्ययन.....61

अध्याय 8 वंश की सामाजिक प्रणाली तथा धार्मिक (पंथगत) मान्यताओं के मध्य अंतर की समझ.....68

अध्याय 9 वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों के प्रकार.....72

अध्याय 10 पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति का पश्चिमी इतिहास.....76

अध्याय 11 पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति पर पश्चिमी तथा भारतीय नारीवादी महिला लेखकों के विचारों का अध्ययन.....81

अध्याय 12 नारीवाद के विकास के ऐतिहासिक चरणों का अध्ययन.....97

अध्याय 13 लिंग-भेद : महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत के साथ पुरुषों के द्वारा किया गया एक अप्रत्याशित एतिहासिक षड्यंत्र का परिणाम.....102

अध्याय 14 समाज में प्रचलित लिंग-भेद के लिये धार्मिक (पंथ प्रेरित) सामाजिक तथा पौराणिक मान्यताओं की नकारात्मक भूमिकाओं के दुष्परिणामों का अध्ययन.....104

अध्याय 15 समाज में लिंग भेद उन्मूलन तथा लिंग समानता स्थापित किये जाने के प्रभावी उपायों तथा रणनीतियों का वर्णन.....108

अध्याय 16 प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत के अनुसार वंश की श्रेष्ठ सामाजिक प्रणाली का चुनाव.....120

अध्याय 17 वंश की नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ही सर्वश्रेष्ठ क्यों ?.....122

अध्याय 18 लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से हिंदू समाज के संदर्भ में नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों का वर्णन- एक सामाजिक प्रायोजना.....128

अध्याय 19 नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली को समाज में लागू करने में चुनौतियां तथा उनके समाधान.....176

अध्याय 20 पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के दोषों तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के गुणों का तुलनात्मक विश्लेषण.....179

अध्याय 21 पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले माता-पिता का उनकी बेटियों के प्रति एक सोचे-समझे तथा षड्यंत्रात्मक पहलू का स्पष्टीकरण.....186

अध्याय 22 वंश बेटी से, बेटे से या दोनों से ?.....190

अध्याय 1
इस विषय पर यह पुस्तक लिखने का विचार मेरे मस्तिष्क में कैसे आया ?

इस प्रश्न का उत्तर खोजने के लिये यदि मैं आपको मेरे विद्यार्थी जीवन के समापन अर्थात 1997 में मेरी स्नातक शिक्षा पूर्ण होने और 1998 में शिक्षक की सरकारी नौकरी मिलने के पश्चात, मेरे गृहस्थ जीवन के प्रारंभ की पटकथा में आगे बढ़ूं तो इस संदर्भ में यह अधिक प्रासंगिक होगा और वह यह कि 30 मई, 2004 को मेरे ही गांव की एक मिडिल पास लड़की के साथ, मध्य प्रदेश की राजधानी भोपाल में स्थित आर्य समाज मंदिर, पिपलानी, भोपाल से मेरा सादगीपूर्ण विवाह संपन्न हुआ।

मेरे विवाह के लगभग 2 वर्ष पश्चात, मेरे यहां पहली संतति के रूप में बेटी का जन्म हुआ और पहली बेटी के जन्म के लगभग 4 वर्ष पश्चात् जब दूसरी संतति का जन्म होने वाला था, तो ठीक इसी समय मेरे किसी निकट के रक्त संबंधी ने मुझे, मेरी पत्नी के गर्भस्थ शिशु का लिंग-परीक्षण करवाने का परामर्श दिया। मेरे द्वारा उक्त निकट रक्त संबंधी से लिंग-परीक्षण कराये जाने का कारण पूछा गया तो, उक्त निकट रक्त संबंधी ने कहा कि वंश बेटे के जन्म होने से ही आगे बढ़ता है। इसलिए दूसरी संतति को जन्म दिये जाने के पूर्व लिंग-परीक्षण कराये जाने से यह जाना जा सकता है कि दूसरी जन्म लेने वाली संतति बेटा है या बेटी। यदि लिंग-परीक्षण के पश्चात् यह ज्ञात होता है कि दूसरी संतति बेटी है, तो उसका गर्भपात करा दिया जाना उचित होगा और यदि बेटा है, तो वंश आगे बढ़ाने के लिये उसका जन्म होने दिया जाना चाहिए ।

मैं तो बेटी के संदर्भ में प्रचलित ऐसी सभी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं के विषय में पूरी तरह अनभिज्ञ था कि वंश बेटे के जन्म होने से ही आगे बढ़ता है, बेटी के जन्म से नहीं ।

मैंने उक्त निकट रक्त संबंधी का यह लिंग-परीक्षण करवाये जाने वाला प्रस्ताव या सुझाव एकदम सिरे से खारिज कर दिया और इस पर मेरे प्रति उसकी यह प्रतिक्रिया कि मेरे अकेले बदलने से क्या सभी लोग बदल सकते हैं, तो मेरे द्वारा उससे कहा गया कि मेरे बदलने से कम से कम मेरी पत्नी का द्वितीय गर्भस्थ शिशु भी यदि बेटी हुई, तो कम से कम वह एक बेटी तो जन्म से पहले गर्भपात के माध्यम नहीं मारी जायेगी और शायद मेरी यह मुहिम बेटों की चाह वाले लिंग-मतारोपित मानसिकता से ग्रसित माता- पिता के द्वारा अन्य बेटियों के गर्भपात से होने वाली मौतें रुक सकेंगी।मेरी इस व्यक्तिगत घटना से यह सहज अनुमान लगाया जा सकता है कि मेरे व्यक्तिगत जीवन में यह घटना घटने के पहले न जाने कब से आज तक कितनी बेटियों को, बेटा न होने के कारण परिवार में बेटियों की संख्या बढ़ने से बचने के लिये उन्हें जन्म से पूर्व ही, गर्भपात के नाम पर मौत के मुंह में धकेल दिया गया होगा। जिसके लिये सांस्कृतिक (परंपरागत) रूप से पुत्र के जन्म होने से ही पिता के वंश के आगे बढ़ने की दोष पूर्ण सामाजिक मान्यता उत्तरदायी रही है। यह सब पुत्र के जन्म होने से ही पिता का वंश आगे बढ़ने जैंसी दोषपूर्ण लिंग-मतारोपित (Gender-indoctrinated) सामाजिक मान्यता का ही परिणाम है और इससे आगे यह भी कि ऐसी लिंग-भेदात्मक या लिंग- मतारोपित मानसिकता वाली बेटी की मां में, उसके बेटे-बेटियों के साथ एक समान संवेदना रखने के संदर्भ में पशुओं की मां के समान भी नहीं दिख पाती, क्योंकि पशु की मां भी नर एवं मादा होने के आधार पर उसके शिशुओं की मां भी उसके शिशुओ के साथ किसी भी प्रकार का लिंग-भेदात्मक व्यवहार नहीं करती।

मुझे मेरे परिवार से विरासत में मिली पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली, लिंग-भेदात्मक सामाजिक दोषों से युक्त होने के कारण, मेरे द्वारा इसे त्यागते हुये, मेरे द्वारा प्रतिपादित नव उभय वंशीय प्रणाली से जीने के लिये उसे इससे प्रतिस्थापित करने का निर्णय लिया गया।

एक तथ्य यह भी कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है। समाज में परिवर्तन के संदर्भ में एक मनोवैज्ञानिक तथ्य यह भी है कि सामाजिक परिवर्तन नकारात्मक तो क्या, अपितु वह कितना भी सकारात्मक हो, समाज के अधिकतर लोगों द्वारा इसकी प्रारंभिक अवस्था में इसका विरोध तो किया ही

जाता है, लेकिन ऐतिहासिक अनुभव यह भी बताते हैं कि यदि वह सामाजिक परिवर्तन नकारात्मक के बजाय सकारात्मक हो, तो समय के साथ समाज के द्वारा उसे स्वीकार भी कर लिया जाता रहा है।

मेरे व्यक्तिगत जीवन में इस मानवीय संवेदनहीन घटना ने मेरी सोच में तीन यक्ष प्रश्नों को जन्म दिया।

पहला- 'वंश बेटी से, बेटे से या दोनों से ?'

दूसरा - 'वंश माता से, पिता से या दोनों से ?'

तथा- तीसरा एवं अंतिम-'बेटी-बेटे जन्मे एक ही जैसे, तो बेटी, बेटे से कम कैसे ?'

मेरे द्वारा उक्त तीनों यक्ष प्रश्नों के उत्तर खोजने के लिये सामाजिक, जैव वैज्ञानिकीय तथा पौराणिक दृष्टिकोण से उत्तर देने के लिये इस पुस्तक के अध्याय 6 में साक्ष्य परक तथ्यात्मिक तथा तार्किक प्रयास किया गया है। इसी तारतम्य में उक्त अध्याय में हिंदुओं के सर्वमान्य धार्मिक-पौराणिक ग्रंथ 'महाभारत' के अध्ययन के उपरांत साक्ष्य परक निष्कर्षों को भी वर्णित किया गया है जिसके अनुसार वंश की सामाजिक अवधारणा एक सामाजिक मान्यता अर्थात हिंदू समाज के द्वारा मानने या धारण या आरोपित करने जैसी सामाजिक रीति या मान्यता का होना मात्र सिद्ध होता है।अर्थात वंश की सामाजिक मान्यता का मूल रूप से जीव विज्ञान से कोई संबंध नहीं है।यह तो पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की एक परंपरागत विशेषता तथा सामाजिक मान्यता मात्र है।पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की इस लिंग-भेदात्मक तथा दोष पूर्ण सामाजिक मान्यता के अनुसार प्रत्येक पीढ़ी में पुत्र के जन्म होते रहने से ही पिता के वंश की निरंतरता मानी जाती है, बेटी के जन्म होने या होते रहने से नहीं।इस तर्कहीन तथा तथ्यहीन मान्यता के खंडन के समर्थन में मेरे द्वारा उक्त अध्याय में तथ्यात्मिक तथा साक्ष्य परक विषय वस्तु वर्णित की गई है। महाभारत में वर्णित राजा शांतनु के वंश वृद्धि की पौराणिक कहानी इस पुस्तक के अध्याय 6 में विस्तार से वर्णित की गई है, जिसके के अनुसार, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि यदि मैं इस दोषपूर्ण हिंदू सामाजिक मान्यता को मानता हूं, तो सबसे पहले तो वंश की इस दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता के माने जाने के कारण, मेरी बेटी को समाज में संपूर्ण

सामाजिक समानता (Complete social equality) की सहज संस्कृति के साथ जीने के अवसर नहीं मिलते।इसलिये मेरे द्वारा व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से बेटियों को बेटों के समान तथा महिलाओं को पुरुषों के बराबर सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने के अधिकारों की संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) दिये जाने के उद्देश्य से, मुझे परिवार से विरासत में मिली पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली को त्यागते हुए या इसे मेरे द्वारा प्रतिपादित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली से प्रतिस्थापित (Replaced) करते हुये पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सभी लिंग-भेदात्मक सामाजिक मान्यताओं को जड़ से उन्मूलित किये जाने की पहल का शुभारंभ मेरे व्यक्तिगत जीवन से ही शुरू करने का निर्णय लिया गया तथा उपरोक्त वर्णित कारणों से ही मेरे मस्तिष्क में इस विषय पर मेरे द्वारा यह पुस्तक लिखे जाने का विचार आया।

मेरे जीवन में घटी इस घटना के पश्चात् विशेषकर प्रत्येक बेटी के माता-पिता को बेटी के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन किये जाने को लेकर संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) का व्यवहार किये जाने को लेकर, यदि मनुष्यों से नहीं तो, कम से कम पशुओं से तो सीखा जा सकता है।ऐसा इसलिये क्योंकि दुनिया के किसी भी प्रजाति के नर अथवा मादा पशुओं द्वारा उनके शिशुओं के प्रति, उनके नर अथवा मादा होने के आधार पर उनके साथ किसी भी प्रकार का लिंग-भेदात्मक व्यवहार नहीं किया जाता, तो मनुष्यों के द्वारा ऐसी नैतिकता के संदर्भ में पशुओं से तो, यह सीखने का एक विषय हो सकता है, लेकिन प्राथमिक रूप से पहली बात यह भी कि कम से कम एक बेटी के अपने माता-पिता के द्वारा उनके अपने बेटे की अपेक्षा उनकी अपनी ही बेटी के साथ उसके जीवन के किसी भी संदर्भ तथा प्रसंग में लिंग-भेदात्मक तथा हीनता का व्यवहार नहीं किया जाना चाहिये, ताकि इस संदर्भ में उन्हें पशुओं से श्रेष्ठ नहीं तो, कम से कम उन्हें पशुओं के बराबर तो समझा जा सके।इस संदर्भ में महिला के रूप में होते हुये एक बेटी की मां में उसकी बेटी के प्रति ऐसी संवेदनहीनता का होना तो और अति शर्म की बात है।वह इसलिये कि वह स्वयं एक महिला के रुप में

मां होते हुये भी, उसके गर्भ से बेटी के जन्म होने की प्रसन्नता तो क्या, अपितु बेटी के जन्म होने की संभावना तक से नफ़रत करती सिद्ध होती है, और उसके गर्भ से जन्म लेने वाली प्रत्येक संतान में बेटे के जन्म होने की ही छवि देखते प्रसव होने की प्रतीक्षा करती है।

मैं यदि लिंग-भेद को मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से वर्णित करूं तो, यह कहा जा सकता है कि मनुष्य में लिंग-भेदात्मक व्यावहार, एक परंपरागत दोषपूर्ण, लिंग-मतारोपण (Gender- indoctrination) का ही एक रूप है, जिसे जन सामान्य के बोलचाल में पुत्रमोही मतारोपण के नाम से भी जाना जा सकता है।

मेरे निजी जीवन में एक तथाकथित घटना घटने के बाद, बेटी को उसके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में बेटे के ही समान सभी अधिकारों का उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने की संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) दिये जाने की संस्कृति स्थापित किये जाने को लेकर ही मेरे मस्तिष्क में इस विषय पर यह पुस्तक लिखने का विचार आया।

लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में, अंतर्राष्ट्रीय परिदृश्य से लेकर हमारे भारत के राष्ट्रीय परिदृश्य (National Scenario) पर दृष्टि डाले, तो यह निष्कर्ष निकलता है कि परिवार में माता-पिता के द्वारा उनकी बेटियों के लिये बेटों के समान तथा समाज में महिलाओं को पुरुषों के समान संपूर्ण सामाजिक समानता तथा अन्य सभी अधिकारों के उपभोग करने देने के लिये, न तो इनकी कोई नियत है और न कोई प्रस्तावित रणनीति। राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर हमें आज लिंग भेद उन्मूलन के संदर्भ में, जो कुछ सकारात्मक परिवर्तन दिखाई दे रहे हैं, ये तो कुछ नारीवादी महिलाओं तथा नारीवादी पुरुषों के द्वारा संबंधित राष्ट्रों के संविधानों में नारीवादी आंदोलन के दबावों से करवाये गये कुछ कानूनी प्रावधानों के कार्यान्वयन का परिणाम है। इस संदर्भ में हमारे राष्ट्र भारत की राष्ट्र शक्ति के रूप में अधिनियमित किये गये संविधान में भी लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में कुछ कानूनी प्रावधानों का समावेश किया गया है।इसलिये मैं अपनी मातृभूमि भारत की इस राष्ट्र शक्ति को भारत माता के रूप में स्वीकार करते हुये, उनके द्वारा ही मेरी इस पुस्तक की अपार सफलता के लिये उनकी स्तुति करना शुभ समझता हूं।

हमारी भारतीय संस्कृति में जहां कहीं न कहीं पुत्र मोह जैसी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता सदियों से ही नहीं, अपितु युगों से प्रचलित रही है, वहीं दूसरी ओर हमारी प्राचीन भारतीय संस्कृति की एक अनूठी विशेषता के रूप में हमारे राष्ट्र शक्ति के रूप में, हमारे राष्ट्र, भारत को मां के तुल्य, मातृभूमि के रुप में इसकी स्तुति की जाती रही है-

भारत माता स्तुति

इस भारत माता की स्तुति में, हम भारतीयों की ओर से हमारी मातृभूमि, भारत के प्रति गहरी श्रद्धा, समर्पण, रक्षा तथा इसकी नैसर्गिकता को बनाये रखने की भावना को व्यक्त किया गया है, जो प्राचीन भारतीय संस्कृति के पहचान का एक अभिन्न अंग है।

मातृभूमि के संदर्भ में, बाल्मीकि रामायण में कहा गया है-

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।'अर्थात माता तथा मातृभूमि का स्थान स्वर्ग से भी ऊपर होता है तथा इसी संदर्भ में वैदिक साहित्य के अर्थववेद में भी कहा गया है-' माता भूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या:।'अर्थात, भूमि मेरी माता है तथा मैं उसका पुत्र हूं। यह दर्शाता है कि हमारी भारतीय संस्कृति में पृथ्वी को अनादि काल से ही मातृभूमि के रूप में माना जाता रहा है। इन्हीं कथनों से प्रेरित होकर, मेरे द्वारा इस 'भारत माता स्तुति' के सृजन किये जाने का विचार मेरे मस्तिष्क में अनायास ही, 28 अगस्त, 2025 को सायंकाल, 8 बजकर 10 मिनट पर आया तथा मैंने इसका सृजन उसी दिन, 3 बजकर 30 मिनट तक, रात्रि के समय ही पूर्ण किया।अर्थात इस स्तुति के सृजन में कुल 7 घंटे 20 मिनट का समय लगा।जिसके गायन में लगभग 3 मिनट का समय लगता है। जिसे मेरे द्वारा यहां भारत माता के आकर्षक चित्र के साथ वर्णित की जा रही है-



हे भारत माता, हमें ऐसा वर दे दो।

जिससे तेरी गरिमा का, ध्यान सदा हमें हो।।
यदि तुम पर कोई शत्रू , डाले कूदृष्टी।
हम उसे मिटा डालें, कर अस्त्र-शस्त्र वृष्टी।।
जब शत्रु दमन कर दें, जयघोष के स्वर हमें दो।
उन जयघोषों में २, तेरी विजय की जय-जय हो।।
हे भारत माता, ...।
जिससे तेरी गरिमा का, ...।।

तेरे वन रखें हरे-भरे, वायु-जल स्वच्छ रखें।
ताकि हम सब सारे, सदा ही स्वस्थ रहें।।
ये तन तेरी मिट्टी के, इस गर्व से हमें भर दो।।
फिर तिरि रक्षा करने में २, मृत्यु का भय न हो।
हे भारत माता, ...।
जिससे तेरी गरिमा का, ...।।

यदि हम जब-जब जन्में, भारत में ही जन्में।
यह इच्छा हम सबकी, मरते तक हो मन में।।
कहीं भगत सिंह जैसे, बनने का साहस दो।
तेरा तिरंगा ध्वज हमें २, प्राणों से प्यारा हो।।
हे भारत माता, ...।
जिससे तेरी गरिमा का, ...।।

भारत माता की-जय
भारत माता की-जय
भारत माता की-जय

इस स्तुति के वर्णन के पश्चात अब हम हमारे मूल विषय आते हैं। वह यह कि मैंने समाज में महिलाओं के लिये पुरुष जनित लिंग-भेद जैसी पीड़ादायी सामाजिक समस्या को वैश्विक समस्या मानते हुये, विशेषकर भारतीय हिंदू समाज से इस समस्या को समूल रूप से उन्मूलित करने के उद्देश्य से मैंने यह पुस्तक लिखने का निर्णय लिया।आप इसी अनूठी पुस्तक को इसके आगामी अध्यायों में पढ़ने जा रहे हैं।

अध्याय 2
लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की भूमिका का अध्ययन

6 मार्च 2022 को मैं यह विचार कर रहा था कि प्रत्येक मनुष्य के पास कोई न कोई एक ऐसा सिद्धांत होना चाहिये, जिसके आधार पर वह उसके द्वारा मन, कर्म तथा वचन से संपादित किये जाने वाले कार्यों के उचित या अनुचित होने का परीक्षण कर सके। इसी विषय पर चिंतन के दौरान मैंने इस समस्या के समाधान के रूप में 6 मार्च, 2022 को 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' तथा इसी दिन इस संदर्भ में नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली आदि दो सिद्धांत प्रतिपादित किये।जिनके विषय में इस पुस्तक में विस्तृत व्याख्या की गई है।

मैंने व्यक्तिगत रूप से यह अनुभव किया कि इस सिद्धांत के त्रि-घटकों (Tri-factors) के रूप में सम्मिलित किये गये तीन कारक-'प्रकृति', 'मानव' तथा 'राष्ट्र' व्यक्ति के जीवन को प्रत्यक्ष रूप से सर्वाधिक प्रभावित करते हैं तथा उक्त तीनों कारक इस भौतिक जगत में अद्वितीय शक्ति के प्रत्यक्ष स्रोत होने के करण, इस संसार तथा व्यक्ति के जीवन में ये सकारात्मक अथवा नकारात्मक रूप से बृहद तथा त्वरित परिवर्तन लाने का सामर्थ्य रखते हैं।

समाज को सामाजिक रूप से व्यवस्थित और संचालित करने के लिये पारंपरिक रूप से वंश की कई सामाजिक प्रणालियां प्रचलित हैं। जिनका विवरण इसी पुस्तक के अध्यय 9 में वर्णित किया गया है तथा उनमें से उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली को संशोधित करते हुये, नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के प्रकार को भी वर्णित किया गया है तथा इस नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली को लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में इसकी भूमिका को उक्त तथाकथित अध्याय के अध्ययन द्वारा इसे आसानी से समझा जा

सकता है।इस अध्याय में 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' की इस संदर्भ में भूमिका के विषय में जाना जा सकता है।

समाज में राष्ट्र शक्ति के द्वारा लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में अपेक्षित तथा त्वरित परिवर्तन किये जा सकते हैं। इसी विचार को समाज में स्थापित करने के उद्देश्य से मैंने इस सिद्धांत को 6 मार्च, 2022 को प्रतिपादित किया। जिसकी यहां संक्षिप्त व्याख्यात्मक परिभाषा को वर्णित किया जाना भी प्रासंगिक है -

'प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा, मन, कर्म तथा वचन से, प्रकृति, मानव तथा राष्ट्र के हितों को हतोत्साहित नहीं, अपितु प्रोत्साहित करने वाली वैश्विक संस्कृति (Global Culture) के निर्माण तथा इसकी स्थापना करने वाले कृत्यों को संपादित करते जीना ही 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र-हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत'कहलाता है।'

मैंने लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में इस सिद्धांत में सम्मिलित दो कारक- 'मानव' तथा 'राष्ट्र' की प्रभावी भूमिका को रेखांकित करने का प्रयत्न किया है। अर्थात मानव सभ्यता तथा संस्कृति विकास के आदि काल की अवधि विशेष में लिंग-भेद जैसी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता का निर्माण कहीं न कहीं 'मानव' तथा राष्ट्र (राज्य) जैसी मिलती-जुलती संस्थाओं ने मिलकर किया है। आज के परिप्रेक्ष्य में लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में समाज के विशेषकर अधिकतर पुरुष लोग तो यह चाहते ही नहीं हैं कि महिलाओं को व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) मिल सके।इससे आगे यह भी कि अधिकतर पुरुष के रूप में बेटियों के पिता तथा महिला के रूप में उनकी मां, ये दोनों अभी तक भी नहीं चाहते कि समाज में उनकी बेटियों को उनके बेटों के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) मिले। राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर की कुछ संस्थाओं, पुरुष नारीवादीयों तथा महिला नारीवादियों को छोड़ दें, तो इनके अतिरिक्त लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में इस सिद्धांत के एक कारक-'राष्ट्र' के रूप में, राष्ट्र शक्ति से ही निर्णायक भूमिका अदा किये जाने की अपेक्षा रखी जा सकती है तथा इस संदर्भ में विभिन्न राष्ट्रों के साथ हमारा राष्ट्र-भारत भी इस क्षेत्र में निर्णायक भूमिका अदा कर रहा है, जिसे कोई भी नहीं नकार सकता।इस संदर्भ में

विभिन्न राष्ट्रों के अतिरिक्त हमारे राष्ट्र भारत की भी निर्णायक भूमिका का इतिहास रहा है। इस संदर्भ में कुछ उदाहरणों को यहां रेखांकित किया जाना अति प्रासंगिक है। जैसे -

1. भारत पर अंग्रेज़ों के द्वारा लगभग 200 वर्षों से स्थापित लंबी दासता के बाद, इसे 15 अगस्त 1947 को स्वतंत्रता मिली।

2. इसके पश्चात 26 जनवरी 1950 से भारत में, डॉ. बी.आर. अंबेडकर द्वारा निर्मित भारतीय संविधान लागू हुआ। जिसमें संवैधानिक रूप से सम्मिलित मौलिक अधिकारों में, लिंग-भेद उन्मूलन के विचार से तथा भारत के सभी नागरिकों को, लिंग, रंग, पंथ, जाति, जन्म स्थान आदि भिन्नताओं के आधार पर, किसी भी प्रकार के भेदभाव की समाप्ति के साथ, उन्हें समान परिस्थितियों में, एक समान अधिकारों के उपभोग करने के मौलिक अधिकार को विधिक रूप से अंगीकार तथा कार्यान्वित किया।

3. भारत में लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से राष्ट्रीय तथा राजकीय स्तरों पर क्रमशः राष्ट्रीय महिला आयोग तथा राज्य महिला आयोग जैसी सरकारी संस्थाओं को संवैधानिक संस्था का दर्ज़ा प्रदान करते हुये, उन्हें महिलाओं के संदर्भ में पुरुषों के समान संपूर्ण सामाजिक समानता (complete social equality) दिलाने वाली नीतियों को प्रस्तावित करने तथा इस संदर्भ में पहले से प्रचलित कानूनों के प्रभावी क्रियान्वयन की समीक्षा किये जाने के लिये उत्तरदाई बनाया गया।

4. लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में यदि पश्चिमी राष्ट्र में गिने जाने वाले शक्तिशाली राष्ट्र, अमेरिका की राष्ट्र शक्ति की इस संदर्भ में चर्चा करें तो, 1920 में वहां की सभी महिलाओं को, प्रजातांत्रिक सरकार के चुनाव करने के लिये पुरुषों के समान पहली बार मताधिकार दिया गया।

5. और यह भी कि विश्व के विभिन्न राष्ट्रों के द्वारा संयुक्त राष्ट्र संघ की स्थापना करते हुये, इसके माध्यम से प्राप्त किये जाने वाले विभिन्न उद्देश्यों में, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर, अपने-अपने राष्ट्रों में लिंग-भेद जैसे

सामाजिक दोष के उन्मूलन के लिये विभिन्न नीतियों को पारित करके, उन्हें संबंधित राष्ट्रों में कार्यान्वित करवाने के लिये प्रभावी क़दम उठाये गए हैं।

इस संदर्भ में उपरोक्त वर्णित उदाहरणों से यह भली-भांति समझा जा सकता है कि लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में एक राष्ट्र की राष्ट्रशक्ति की कितनी निर्णायक भूमिका होती है। इससे आगे यह भी कि यदि ऐसी राष्ट्रशक्ति के साथ समाज के सभी लोग एक साथ उठ खड़े हों तो, लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में राष्ट्रशक्ति के साथ समाज का समन्वय तथा सहयोग अभूतपूर्व तथा अति सकारात्मक परिणामों में फलीभूत हो सकता है।

अध्याय 3
संपूर्ण सामाजिक समानता के संदर्भ में, भारतीय संविधान में उल्लेखित 6 मौलिक अधिकारों में सम्मिलित समानता के मौलिक अधिकार का विस्तृत विवरण-

सबसे पहले हम यह जानने का प्रयत्न करते हैं कि भारतीय संविधान (The Constitution of India) में भारतीय नागरिकों को संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग किये जाने के संदर्भ में, समानता का मौलिक अधिकार (Right to Equality) में सम्मिलित अनुच्छेद 14 से 18 क्या है ?

इस विषय वस्तु की संपूर्ण जानकारी इंटरनेट के Stuy hub वेबसाइट के वेब एड्रेस - https://studyhub.net.in/indian_constitution/right-to-equality/ से एक्सेस की गई है।

समानता के मौलिक अधिकार (Right to equality) के संदर्भ में अनुच्छेद 14 से 18 तक क्या है?

विधि के समक्ष समता (Equality before Law) विधि के समक्ष समता तथा विधियों का समान संरक्षण में अंतर (Difference between Equality before Law and Equal Protection of Laws)

समता के सिद्धांत के अपवाद (Exceptions of Rule of Equality)

धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध (Prohibition of Discrimination on Grounds of Religion, Race, Caste, Sex or Place of Birth)

अपवाद (Exceptions) :

अनुच्छेद 15 (2)

अनुच्छेद 15 (3)

अनुच्छेद 15 (4)

अनुच्छेद 15 (5)

लोक नियोजन में अवसर की समता का प्रावधान :

अनुच्छेद 16 (1)

अनुच्छेद 16 (2)

अनुच्छेद 16 (3)

अनुच्छेद 16 (4)

अनुच्छेद 16 (5)

अनुच्छेद 16 (6)

आरक्षण से संबंधित प्रमुख शब्दों का अर्थ :

आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग (Economically Weaker Sections)

अनुच्छेद 17 : अस्पृश्यता का उन्मूलन (Abolition of Untouchability)

अनुच्छेद 18 : उपाधियों का उन्मूलन (Abolition of Titles)

अनुच्छेद 14 के अनुसार, भारत के राज्यक्षेत्र में किसी भी व्यक्ति को न तो कानून के समक्ष समानता से वंचित किया जा सकता है, और न ही विधियों के समान संरक्षण से। इस अनुच्छेद में दो पृथक वाक्यांश सम्मिलित हैं: प्रथम – 'विधि के समक्ष समता', एवं द्वितीय – 'विधियों का समान संरक्षण'।

प्राकृतिक न्याय – इस अवधारणा से आशय उन न्यूनतम न्यायिक मानकों से है, जिनका पालन प्रत्येक प्रशासनिक व न्यायिक निकाय द्वारा किया जाना अनिवार्य होता है, जब वे नागरिकों के अधिकारों अथवा विवादों से संबंधित निर्णय ले रहे हों।

प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत मुख्यतः दो मौलिक तत्वों पर आधारित होते हैं – I. कोई भी व्यक्ति अपने ही प्रकरण में न्यायाधीश की भूमिका नहीं निभा सकता।

II. प्रत्येक पक्ष को अपना पक्ष रखने का उचित अवसर दिया जाना चाहिए; अर्थात् , बिना सुनवाई के दंड नहीं दिया जा सकता।

विधि के समक्ष समता तथा विधियों का समान संरक्षण में अंतर

(Difference between Equality before Law and Equal Protection of Laws)

विधि के समक्ष समता	विधियों का समान संरक्षण
ब्रिटिश विधिक प्रणाली से प्रेरित।	*अमेरिकी संविधान से प्रेरित।*
प्रत्येक व्यक्ति कानून के समक्ष समान है; कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं।	*समान परिस्थितियों में समान व्यवहार सुनिश्चित करता है।*
कानून सभी व्यक्तियों के प्रति एक समान व्यवहार करेगा।	*एक समान विधिक प्रावधानों के अंतर्गत सभी के साथ एक समान व्यवहार।*
कोई भी व्यक्ति – अमीर या गरीब – कानून से ऊपर नहीं।	*बिना भेद सम्मानपूर्वक समान व्यवहार।*
यह एक नकारात्मक अवधारणा है।	*यह एक सकारात्मक अवधारणा है।*

विधि का शासन (Rule of Law)

प्रोफेसर ए. वी. डायसी के अनुसार, विधि का शासन का तात्पर्य यह है कि कोई भी व्यक्ति कानून से ऊपर नहीं है। समाज के प्रत्येक सदस्य – चाहे वह किसी उच्च पद पर हो या नहीं – सामान्य विधियों के अधीन होता है और न्यायालय की अधिकारिता में आता है। धन-धान्य से सम्पन्न व्यक्ति से लेकर आर्थिक रूप से कमजोर नागरिक तक सभी पर समान विधि लागू होती है। डायसी के सिद्धांत के अंतर्गत तीन मौलिक अवधारणाएँ सम्मिलित हैं –

1. **मनमानी शक्ति का अभाव –** किसी व्यक्ति को केवल विधिक उल्लंघन के आधार पर ही दंडित किया जा सकता है, न कि किसी व्यक्तिगत इच्छा या असंवैधानिक कृत्य के लिए।
2. **कानून के समक्ष समता** – समाज के प्रत्येक व्यक्ति, चाहे वह सामाजिक, आर्थिक या पद-प्रतिष्ठा में भिन्न क्यों न हो, विधि के अधीन समान होता है।
3. **संविधान का सामान्य विधि से उत्पन्न होना** – यह धारणा भारत में प्रभावी नहीं है, क्योंकि भारत में नागरिकों के अधिकारों का प्रारंभिक स्रोत संविधान है, न कि सामान्य विधि।

समता के सिद्धांत के अपवाद (Exceptions of Rule of Equality)

अनुच्छेद 14 में उल्लेखित समता का सिद्धांत पूर्णतः निरंकुश नहीं है; इसके कुछ विशिष्ट अपवाद भी हैं:

- राष्ट्रपति तथा राज्यपाल के विरुद्ध उनके कार्यकाल के दौरान न्यायालयीय द्वारा आदेश पारित नहीं किये जा सकते। उनके विरुद्ध कोई अभियोग चलाने से पूर्व दो माह की पूर्व सूचना देना अनिवार्य है।
- संसद या राज्य विधानमंडल के किसी सदस्य द्वारा सभा में कही गई बात या डाले गए मत के लिये किसी न्यायालय में कार्यवाही नहीं हो सकती। यह प्रावधान अनुच्छेद 105 तथा 194 के अंतर्गत संरक्षित है।
- विदेशी राष्ट्राध्यक्ष, राजनयिक, एवं संयुक्त राष्ट्र संघ और उसकी एजेंसियाँ भारतीय न्यायालयों की नागरिक और दंडाधिकारी क्षेत्राधिकार से मुक्त होती हैं।

धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म स्थान के आधार पर विभेद का निषेध (Prohibition of Discrimination on Grounds of Religion, Race, Caste, Sex or Place of Birth)

अनुच्छेद 15 (1) के अनुसार, राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्मस्थान के आधार पर कोई भी विभेद नहीं करेगा।

इस अनुच्छेद में प्रयुक्त 'केवल' और 'विभेद' शब्द अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं- 'केवल' का तात्पर्य यह है कि वर्जना केवल निर्दिष्ट आधारों पर लागू होती है, न कि किसी अन्य कारण पर।

'विभेद' से तात्पर्य है – किसी व्यक्ति के साथ अन्य की तुलना में विपरीत व्यवहार करना। यदि कोई कानून इन उल्लेखित आधारों पर असमान व्यवहार करता है, तो वह अवैध माना जाएगा।

अपवाद (Exceptions) :

1. राज्य, महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष प्रावधान बना सकता है, जैसे –
    - स्थानीय संस्थाओं में महिला आरक्षण,
    - मातृत्व अवकाश,
    - बच्चों के लिए नि:शुल्क शिक्षा की व्यवस्था।
2. राज्य, सामाजिक और शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों, तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के लिए विशेष प्रावधान कर सकता है, जैसे –
    - शैक्षणिक संस्थानों में शुल्क माफी,
    - प्रवेश में छूट,
    - आरक्षण संबंधी व्यवस्था।
      ये संस्थान चाहे राज्य-सहायता प्राप्त, निजी, अथवा अल्पसंख्यक हों, सभी पर लागू हो सकते हैं।

अनुच्छेद 15 (2)

कोई भी नागरिक, केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, जन्म स्थान अथवा इन में से किसी भी आधार पर –
(क) दुकानों, सार्वजनिक भोजनालयों, होटलों और मनोरंजन स्थलों में प्रवेश से वंचित नहीं किया जाएगा;
(ख) राज्य द्वारा आंशिक या पूर्ण रूप से वित्तपोषित अथवा सामान्य जनता के उपयोग हेतु समर्पित कुओं, तालाबों, स्नानघाटों, सड़कों एवं सार्वजनिक स्थलों के उपयोग से वंचित नहीं किया जाएगा।
इस उपखंड का प्राथमिक उद्देश्य भारत में व्याप्त अस्पृश्यता का पूर्ण उन्मूलन करना है।

अनुच्छेद 15 (3)

इस उपबंध के तहत, राज्य को महिलाओं और बच्चों के लिए विशेष व्यवस्था करने की स्वतंत्रता दी गई है। उदाहरणस्वरूप –

- महिलाओं हेतु विशेष शैक्षणिक संस्थान,
- विशिष्ट कल्याणकारी योजनाएं।

अनुच्छेद 15 (4)

यह खंड प्रथम संविधान संशोधन अधिनियम, 1951 के अंतर्गत जोड़ा गया। इसके अनुसार, अनुच्छेद 15 या 29 (2) में कुछ भी ऐसा नहीं होगा जो राज्य को सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों तथा अनुसूचित जाति और जनजाति के लिये विशेष प्रावधान करने से रोके। उदाहरण –

- नौकरियों एवं शिक्षा में आरक्षण,
- छात्रवृत्तियाँ,
- प्रवेश में प्राथमिकता।

अनुच्छेद 15 (5)

93वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 2005 द्वारा जोड़ा गया।यह उपखंड राज्य को यह अधिकार देता है कि वह सामाजिक एवं शैक्षणिक रूप से पिछड़े नागरिकों, अनुसूचित जाति व जनजाति के लोगों के लिये शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश के लिये विशेष प्रावधान बना सके।यह नियम सभी राज्य-सहायता प्राप्त निजी, एवं अल्पसंख्यक संस्थानों पर लागू हो सकता है।

लोक नियोजन में अवसर की समता का प्रावधान

अनुच्छेद 16 (1)

यह उपबंध निर्धारित करता है कि राज्य के अधीन किसी भी पद पर नियोजन अथवा नियुक्ति से संबंधित विषयों में प्रत्येक भारतीय नागरिक को समान अवसर प्राप्त होगा।

अनुच्छेद 16 (2)

राज्य के अधीन किसी भी नियोजन या पद के लिए धर्म, वंश, जातीय पहचान, लैंगिक भेद, स्रोत, जन्मस्थान, निवास स्थान अथवा इन तत्वों में से किसी एक के आधार पर किसी नागरिक को अयोग्य घोषित नहीं किया जा सकता और न ही उससे भेदभाव किया जा सकता है।

टिप्पणी: राज्य के अधीन नियुक्ति अथवा नियोजन में अवसर की समानता के इस सामान्य सिद्धांत के चार अपवाद निर्धारित हैं।

अनुच्छेद 16 (3)

संसद को यह अधिकार प्राप्त है कि वह विधि निर्माण कर किसी राज्य विशेष में निवास को सरकारी नियुक्तियों हेतु एक आवश्यक अर्हता घोषित कर सके, यद्यपि इसके लिये यथोचित औचित्य का होना अनिवार्य है।

अनुच्छेद 16 (4)

राज्य यह अधिकार रखता है कि वह राज्य सेवाओं में पिछड़े वर्गों के लिये आरक्षण का प्रावधान करे, यदि यह पाया जाए कि ऐसे वर्गों का प्रतिनिधित्व सेवाओं में पर्याप्त नहीं है।

अनुच्छेद 16 (5)

किसी धार्मिक संस्था में कार्य करने वाले किसी कार्यान्वयन निकाय की नियुक्ति में किसी विशिष्ट धर्म के व्यक्ति को प्राथमिकता दी जा सकती है।

अनुच्छेद 16 (6)

राज्य को यह विधिक छूट प्राप्त है कि वह अनुच्छेद 16 (4) में उल्लेखित वर्गों के अतिरिक्त आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिये भी नियुक्तियों अथवा पदों में, वर्तमान आरक्षण के अतिरिक्त, 10 प्रतिशत आरक्षण लागू कर सके।

टिप्पणी: अनुच्छेद 16 के प्रावधान संविदात्मक सेवाओं अथवा निजी क्षेत्र पर लागू नहीं होते।

आरक्षण से संबंधित प्रमुख शब्दों का अर्थ

पिछड़ा वर्ग : भारतीय संविधान के अनुच्छेद 340 में पिछड़े समुदायों की स्थिति की जाँच के लिये एक आयोग की नियुक्ति का प्रावधान किया गया है।

प्रथम पिछड़ा वर्ग आयोग की स्थापना वर्ष 1953 में काकालेलकर की अध्यक्षता में की गई थी, यद्यपि इसके द्वारा प्रस्तुत सिफारिशों को राष्ट्रपति द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था।

द्वितीय पिछड़ा वर्ग आयोग का गठन वर्ष 1979 में हुआ, जिसके अध्यक्ष बी.पी. मंडल थे। यह आयोग मंडल आयोग के नाम से व्यापक रूप से विख्यात है। आयोग ने वर्ष 1980 में अपनी अंतिम रिपोर्ट सरकार को सौंप दी थी।

इस आयोग ने 3743 जातियों को सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ा घोषित किया था।आयोग ने पिछड़े वर्गों के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण की

सिफारिश की थी, यह तर्क देते हुए कि इन वर्गों का शैक्षणिक एवं सामाजिक प्रतिनिधित्व अत्यंत अल्प है।

वर्ष 1990 में बी.पी. सिंह सरकार द्वारा मंडल आयोग की सिफारिशों को लागू कर दिया गया, जिससे पिछड़े वर्गों को 27 प्रतिशत आरक्षण प्रदान किया गया।

वर्ष 1992 के इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ प्रकरण में उच्चतम न्यायालय ने इस आरक्षण को वैधानिक स्वीकृति प्रदान की।

क्रीमीलेयर (धनाढ्य पिछड़े वर्ग) : इंदिरा साहनी वाद में उच्चतम न्यायालय ने क्रीमीलेयर की धारणा को प्रस्तुत किया। इसके अनुसार, पिछड़े वर्गों के संपन्न व्यक्तियों को आरक्षण का लाभ नहीं मिलेगा।इस श्रेणी में सरकार के ग्रुप-A एवं ग्रुप-B श्रेणी के अधिकारी सम्मिलित हैं।सरकार समयानुसार क्रीमीलेयर के मानदंडों में परिवर्तन करती है।वर्तमान में इसकी वार्षिक आय सीमा ₹8 लाख निर्धारित है।यह अवधारणा अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों पर लागू नहीं होती।

बैकलॉग : जब किसी आरक्षित वर्ग के लिये निर्धारित पद किसी कारणवश रिक्त रह जाते हैं, तो वे बैकलॉग श्रेणी के अंतर्गत समाहित हो जाते हैं।बैकलॉग भर्ती, आगामी चयन प्रक्रिया में आरक्षित पदों के साथ सन्निहित हो जाती है।

पदोन्नति में आरक्षण : इंदिरा साहनी वाद में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि पदोन्नति में आरक्षण प्रवर्तित नहीं किया जा सकता।

हालाँकि, 77वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 1995 द्वारा संविधान में अनुच्छेद 16 (4क) को जोड़ा गया, जिसके तहत अनुसूचित जाति एवं जनजाति को पदोन्नति में आरक्षण का अधिकार दिया गया।

इसके अतिरिक्त, 85वाँ संविधान संशोधन अधिनियम 2001 द्वारा इन वर्गों के लिए परिणामिक वरिष्ठता का नियम लागू किया गया।

एम. नागराज बनाम भारत संघ वाद 2007 में उच्चतम न्यायालय ने तीन आधारों पर इस आरक्षण को वैध ठहराया—

- अनुसूचित जाति/जनजाति का पिछड़ापन,
- सेवाओं में उनका अपर्याप्त प्रतिनिधित्व,
- तथा इससे प्रशासनिक दक्षता पर नकारात्मक प्रभाव न पड़ना।

टिप्पणी: जर्नल सिंह बनाम लक्ष्मी नारायण वाद में मात्रात्मक आंकड़ों की आवश्यकता को हटा दिया गया।

आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग (Economically Weaker Sections)

103वें संविधान संशोधन के माध्यम से सरकार ने आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्गों को शासकीय नौकरियों एवं शैक्षणिक संस्थानों में 10 प्रतिशत आरक्षण देने की व्यवस्था की।इस आरक्षण का लाभ उन व्यक्तियों को मिलेगा जो अनुसूचित जाति, जनजाति, अथवा अन्य पिछड़े वर्गों के आरक्षण के अंतर्गत समाहित नहीं होते हैं।

आर्थिक रूप से कमज़ोर वर्ग के लिये निर्धारित मूल्यांकन मापदंड निम्नलिखित हैं:

- परिवार की वार्षिक आय ₹8 लाख से अधिक नहीं होनी चाहिए।
- कृषि भूमि की मात्रा 5 एकड़ से कम हो।
- आवासीय मकान का क्षेत्रफल 1000 वर्ग फीट से कम हो।
- नगरपालिका क्षेत्र में स्थित भूखंड की माप 100 वर्ग गज से अधिक न हो।
- नगरपालिका क्षेत्र से बाहर स्थित भूखंड 200 वर्ग गज से कम हो।

अनुच्छेद 17 : अस्पृश्यता का उन्मूलन (Abolition of Untouchability)

अनुच्छेद 17 भारत में अस्पृश्यता के समूल अंत की घोषणा करता है और किसी भी प्रकार की अस्पृश्यता संबंधी गतिविधियों को वर्जित घोषित करता

है। इस अनुच्छेद के अंतर्गत अस्पृश्यता को बढ़ावा देने वाले किसी भी कृत्य को दंडनीय अपराध घोषित किया गया है।

यह प्रावधान भारत में सदियों से व्याप्त छुआछूत की सामाजिक प्रथा को समाप्त करने की महत्वपूर्ण संवैधानिक व्यवस्था है। इस अनुच्छेद के तहत सभी नागरिकों को समान सामाजिक सम्मान और सम्मानजनक जीवन जीने का मौलिक अधिकार प्राप्त है।

अनुच्छेद 17 और अनुच्छेद 35 के अधिकार क्षेत्र में, संसद ने वर्ष 1955 में 'अस्पृश्यता अपराध अधिनियम' पारित किया था। इस अधिनियम का उद्देश्य अस्पृश्यता से जुड़ी किसी भी सामाजिक गतिविधि को दंडनीय बनाना था। बाद में, वर्ष 1976 में इस अधिनियम में संशोधन करके इसका नाम बदलकर 'नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955' कर दिया गया। इस संशोधन द्वारा दंडात्मक प्रावधानों को अधिक कठोर और प्रभावी बना दिया गया।

यद्यपि भारतीय संविधान में अस्पृश्यता की स्पष्ट परिभाषा नहीं दी गई है, किन्तु मैसूर उच्च न्यायालय ने एक वाद में स्पष्ट किया कि अनुच्छेद 17 में उल्लेखित अस्पृश्यता का अर्थ केवल शाब्दिक नहीं, बल्कि ऐतिहासिक और सामाजिक सन्दर्भों में लिया जाना चाहिए।यह सामाजिक बुराई उस व्यवस्था की ओर संकेत करती है, जिसमें कुछ जातियों को जन्म के आधार पर सामाजिक रूप से बहिष्कृत किया जाता था या उन्हें न्यूनतर नागरिक के रूप में माना जाता था।

अनुच्छेद 18: उपाधियों का उन्मूलन (Abolition of Titles)

अनुच्छेद 18 भारत में ब्रिटिशकालीन सामंती उपाधियों के प्रचलन को समाप्त करता है।उस काल में 'महाराजा', 'राय बहादुर', 'राज साहब', तथा 'दीवान बहादुर' जैसी उपाधियाँ दी जाती थीं, जो सामाजिक असमानता और भेदभाव को बढ़ावा देती थीं।यह अनुच्छेद इस प्रकार की सामंती परंपराओं को संविधान विरोधी मानते हुए निषिद्ध करता है, क्योंकि ये समता के मूल अधिकार के प्रतिकूल हैं।

अनुच्छेद 18 चार प्रमुख उपबंधों के माध्यम से उपाधियों के निषेध को लागू करता है:

1. राज्य, केवल सेना अथवा शिक्षा संबंधी उपाधियाँ प्रदान कर सकता है, अन्य कोई भी उपाधि प्रदान नहीं की जाएगी।
2. भारत का कोई नागरिक, किसी विदेशी राज्य से कोई उपाधि स्वीकार नहीं कर सकता।
3. विदेशी व्यक्ति, जो भारतीय राज्य के अधीन कोई सार्वजनिक पद धारण करता हो, वह बिना राष्ट्रपति की अनुमति के किसी विदेशी उपाधि को स्वीकार नहीं कर सकता।
4. किसी भी व्यक्ति – चाहे वह भारतीय नागरिक हो या विदेशी, यदि वह राज्य के अधीन किसी भी पद पर नियुक्त है, तो वह बिना राष्ट्रपति की अनुमति के किसी विदेशी उपाधि, पुरस्कार, उपहार या भेंट को स्वीकार नहीं कर सकता।

नोट : भारत सरकार द्वारा प्रत्येक वर्ष प्रदान किए जाने वाले भारत रत्न, पद्म विभूषण, पद्म भूषण और पद्मश्री को उपाधियाँ नहीं माना गया है।सुप्रीम कोर्ट ने इन राष्ट्रीय सम्मानों की संवैधानिक वैधता को मान्यता दी है, क्योंकि ये कोई विशेषाधिकार या सामाजिक स्थिति प्रदान नहीं करते, बल्कि ये राष्ट्र के प्रति विशेष योगदान को सम्मानित करने के लिए प्रदान किये जाते हैं।

विशेष: सन् 2025 की स्थिति में, भारतीय संविधान में उल्लेखित 6 मौलिक अधिकारों में सम्मिलित, इस समानता के मौलिक अधिकार के अंतर्गत आने वाले विभिन्न प्रावधानों को किसी भारतीय नागरिक के जीवन के किसी संदर्भ अथवा प्रसंग में उपभोग किये जाने के पूर्व इनकी अद्यतन विधिक स्थिति को जानने के लिये विधिक परामर्श लिया जाना अनिवार्य है।

विशेष-इस अध्याय में भारतीय संविधान में उल्लेखित समानता के मौलिक अधिकार से संबंधित विभिन्न प्रावधान सामाजिक जागृति के उद्देश्य वर्णित किये गये हैं, इन्हें जीवन में प्रयुक्त किये जाने के पूर्व संबंधित विषय विशेषज्ञ से कानूनी परामर्श लिया जाना अनिवार्य है।

अध्याय 4
संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता का न होना लिंग-भेद के लिए उत्तरदायी कैसे?

क्या आपको अपने जीवन की कोई ऐसी घटना याद है, जब आपकी गरिमा (Dignity) को चोट पहुँची हो ? आपको उस समय कैंसा महसूस हुआ था ?

पुरुष अथवा महिला की समाज में संपूर्ण सामाजिक समानता आधारित पहचान उसकी गरिमा से संबंधित हैं। इस संदर्भ में हमारे भारत के संविधान निर्माता, डॉ. बी. आर. अंबेडकर के दो कथनों को यहाँ उद्धृत करना प्रासंगिक होगा -

" अपने आत्मसम्मान को दाँव पर लगाकर जीवित रहना अशोभनीय है।आत्मसम्मान जीवन का सबसे ज़रूरी हिस्सा है। इसके बिना व्यक्ति नगण्य है।आत्मसम्मान के साथ जीवन बिताने के लिए व्यक्ति को कठिनाइयों पर विजय प्राप्त करनी होती है। केवल कठिन और निरंतर संघर्ष से ही व्यक्ति बल, विश्वास और मान्यता प्राप्त कर सकता है। "

" मनुष्य नाशवान है।हर व्यक्ति को किसी-न-किसी दिन मरना है, परंतु व्यक्ति को यह संकल्प लेना चाहिए कि वह अपने जीवन का बलिदान, आत्मसम्मान के उच्च आदर्शों को विकसित करने और अपने मानव जीवन को बेहतर बनाने में करेगा। किसी साहसी व्यक्ति के लिए आत्मसम्मान रहित जीवन जीने से अधिक अशोभनीय और कुछ नहीं है। "

डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने भारत के सभी नागरिकों के इसी आत्मसम्मान तथा गरिमा की रक्षा के लिए, भारतीय संविधान में उल्लेखित मौलिक अधिकारों में समानता का मौलिक अधिकार (The Fundamental Right to Equality)] भी अधिसूचित किया है। इसे हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं -

" किसी भी व्यक्ति या समूह को सामाजिक अवसरों, विशेषाधिकारों तथा लोक नियोजन में जाति, लिंग, आयु, मूलवंश, धर्म या किसी अन्य स्थिति, जैसे मनमाने आधारों पर वंचित नहीं किया जाएगा। "

उक्त परिभाषा में उल्लेखित आधारों पर किसी के द्वारा भी, किसी के साथ भी, किसी भी संदर्भ एवं प्रसंग में किया जाने वाला भेदभावपूर्ण व्यवहार, अक्षम्य एवं दंडनीय अपराध है।भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त इस अधिकार का कोई उल्लंघन करता है, तो कोई भी व्यक्ति उसके इस अधिकार की रक्षा तथा उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को दंडित करवाने के लिए भारत की सर्वोच्च न्यायालय की शरण में जा सकता है।

समाज में प्रचलित लिंग-भेद के लिए, संपूर्ण सामाजिक समानता तथा संपूर्ण राजनैतिक समानता का न होना कैसे उत्तरदायी हैं ? इसे जानने के पहले 'संपूर्ण सामाजिक समानता' तथा 'संपूर्ण राजनैतिक समानता' इन दो विचारों को लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में मेरे दृष्टिकोण से यहाँ परिभाषित करना प्रासंगिक समझता हूँ।

मेरे दृष्टिकोण से, किसी भी राष्ट्र की राजनैतिक सत्ता तथा समाज में किसी महिला को महिला होने के आधार पर, दोनों ही क्षेत्रों में किसी भी अधिकार के उपभोग तथा किसी भी कर्त्तव्य के निर्वहन करने में पुरुषों की अपेक्षा किसी भी प्रकार की निम्नता, हीनता या अयोग्यता का अभाव होना ही संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता है और यदि समाज तथा राजनीति में ऐसा नहीं है, तो समाज में लिंग-भेद उन्मूलन के लिए ऐसा होना या किया जाना अति आवश्यक है। ऐसा किये जाने पर ही लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में महिला को उसकी प्रकृति प्रदत्त प्रस्थिति (Natural status of women) को ईमानदारी से उसे लौटाने जैसा होगा, अन्यथा तो औपचारिकता ही है।

इसके बाद हम हमारे मूल विषय पर आते हैं कि क्या आज की महिला व्यावहारिक रूप से संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता का उपभोग कर पा रही है? इसका सीधा सा जवाब है-नहीं। कैसे ? आइए समझते हैं।

लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में भारतीय समाज में देखते हैं, तो भारतीय समाज के लोगों में, विशेषकर पुरुषों के द्वारा महिलाओं के साथ तथा कुछ संदर्भ में महिलाओं के द्वारा महिलाओं के साथ भी लिंग-भेदात्मक व्यवहार

किये जाने के एक-दो उदाहरण नहीं हैं, अपितु समाज की सभी जातियों तथा संप्रदायों में परंपरागत रूप से लिंग-भेद आधारित संस्कृति विद्यमान है।आज महिलाओं के सर्वांगीण विकास के इस लिंग-भेदात्मक संस्कृति के स्थान पर, संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता आधारित संस्कृति की नितांत आवश्यकता है।आज समाज में जो कुछ सामाजिक समानता दिख रही है, वह मूलतः समाज के द्वारा दी गई सामाजिक समानता नहीं है, अपितु यह सामाजिक समानता, राष्ट्र शक्ति के भय से माने जाने वाली बाध्यकारी सामाजिक सामानता परिलक्षित होती है।

भारतीय राजनैतिक परिदृश्य में यदि देखें, तो सैद्धांतिक रूप से, भारतीय संविधान में सभी भारतीय नागरिकों के लिए व्यक्ति के लिंग, जाति, धर्म (पंथ) , रंग, जन्म स्थान तथा आर्थिक स्थिति आदि आधारों की भिन्नता होते हुए भी या इन्हें आधार न मानते हुए सभी के लिए समान परिस्थितियों में एक समान रूप से, समानता के मौलिक अधिकार के उपभोग किये जाने की संवैधानिक गारंटी प्रदान की गई है।इस मौलिक अधिकार में लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से, 'लिंग' (Gender) शब्द का प्रयोग भी किया गया है।

अब यहाँ क्रमशःभारतीय समाज के लोगों के मानस पटल पर भारतीय समाज के संदर्भ में लिंग-भेद के वर्तमान कालिक स्वरूप को जानने तथा समझने के लिए यहाँ कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं -

(अ) भारतीय समाज के परिदृश्य से संबंधित कुछ लिंग-भेद के जीवंत स्थितिगत उदाहरण-

(1) पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्मी बेटी के लिये उसके विवाह के समय उसे कुछ (या कुछ से अधिक दो-दस लाख रुपये की) धन-दौलत देकर, इसके पश्चात् माता-पिता के द्वारा उसके प्रति दायित्व से मुक्ति का अनुभव करना माता-पिता की ओर से उसके लिये संपूर्ण सामाजिक समानता नहीं है, अपितु विवाह के पश्चात् भी अथवा विवाह के पूर्व भी उसके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में बेटे के ही समान सभी सामाजिक अधिकारों के उपभोग तथा उसके सभी सामाजिक कर्त्तव्यों के निर्वहन करने देने की सहज पारिवारिक

संस्कृति के साथ उसे जीने देना ही, उसकी संपूर्ण सामाजिक समानता है, अन्यथा नहीं।

(2) माता-पिता के द्वारा उनकी बेटी के विवाह के लिए धनवान लड़के की तलाश करना, वह भी इसलिये कि विवाह के पश्चात् , बेटी तथा उसके होने वाले बच्चों पर इनकी तरफ से कम से कम या नहीं के बराबर धन-दौलत खर्च करना पड़े और आर्थिक तंगी नहीं आने के कारण उसे माता-पिता से मदद न लेना पड़े। माता-पिता के द्वारा इस सोच के साथ बेटी का विवाह करना, उसके लिये बेटे के समान संपूर्ण सामाजिक समानता नहीं है।यह भी माता-पिता के द्वारा उनकी बेटी के साथ लिंग-भेद किये जाने की व्यवहारिक स्थिति का एक उदाहरण है।

(3) माता-पिता के द्वारा यह कहा जाना कि उनके द्वारा बेटी को, बेटे के समान पढ़ा-लिखाकर, उसे बेटे के समान विद्वान बना दिया तथा उसे उसके पैरों पर खड़ा कर दिया गया है।यह भी बेटी के लिये संपूर्ण सामाजिक समानता नहीं है, अपितु यह भी उसके लिये एक आंशिक सामाजिक समानता है।

(4) माता-पिता के द्वारा बेटी के विवाह के पश्चात् , उसे (बेटे के समान दिये जाने वाले हिस्से से दस गुना कम) कोई एकाध घर या कोई एकाध आधी एकड़ कृषि भूमि का दिया जाना भी, उसके लिये माता-पिता की तरफ से दी जाने वाली संपूर्ण सामाजिक समानता नहीं है, अपितु उसके लिये यह भी एक आंशिक सामाजिक समानता है।

(5) बेटे की चाह में एक-दो बेटियों से अधिक बेटियों को जन्म दिया जाना तथा बेटे का जन्म होते ही, आगे फिर किसी बेटी के रूप में संतति के जन्म होने की इच्छा न करना भी, उसके माता-पिता के द्वारा उनकी बेटी के साथ किये जाने वाले लिंग-भेद की स्थिति का एक जीवंत उदाहरण है।

(6) बेटे की शिक्षा किसी निजी विद्यालय में पूर्ण करायी जाना तथा बेटी की शिक्षा पर कम खर्च करने की सोच के साथ किसी शासकीय

विद्यालय में पूर्ण करायी जाना भी बेटी के साथ लिंग-भेद या सामाजिक भेदभाव किये जाने की स्थिति का एक जीवंत उदाहरण है।

(7) बेटे के द्वारा किसी लड़की के साथ अंतर्जातीय विवाह करने पर माता-पिता के द्वारा किसी हीनता विशेष का अनुभव न किया जाना और बेटी के द्वारा अंतर्जातीय विवाह किये जाने पर माता-पिता के द्वारा हीनता का अनुभव किया जाना भी बेटी के साथ माता-पिता के द्वारा लिंग-भेद किये जाने की सामाजिक स्थिति का एक जीवंत उदाहरण है।

(8) भारत में RSS जैसे गैर-राजनैतिक संगठन तथा कई मुस्लिम धार्मिक तथा सामाजिक संगठनों में संगठन प्रमुखों के पदों पर महिलाओं की नियुक्ति नहीं किया जाना भी, भारतीय समाज में पुरुषों के द्वारा महिलाओं के प्रति होने वाले लिंग-भेदात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

(9) भारतीय समाज के कई धार्मिक (पंथगत) समुदायों के द्वारा उनके समुदायों की महिलाओं के लिये उनके महत्त्वपूर्ण धार्मिक पदों पर नियुक्त न किया जाना, धार्मिक स्थलों पर पुरुषों के समान प्रवेश पर प्रतिबंध तथा कई धार्मिक (पंथगत) कृत्यों को संपादित किये जाने पर प्रतिबंध होना भी, भारतीय समाज में पुरुषों के द्वारा महिलाओं के साथ किये जाने वाले लिंग-भेदात्मक या सामाजिक भेदभावात्मक व्यवहार किया जाना दृष्टिगोचर होता है।

(10) जब दो लड़के एवं लड़कियों का किन्हीं भी कारणों से अंतर्जातीय (Inter-caste) या अंतर्धार्मिक (Inter-faith) विवाह होता है, तो उन दोनों में से मात्र लड़की का ही अंतर्जातीय (Inter-caste) या अंतर्धार्मिक (Inter-faith) विवाह नहीं होता, अपितु लड़के का विवाह भी उसी प्रारूप में होता है।ऐसी स्थिति में यदि लड़की के द्वारा स्वयं के परिवार के उपनाम, जाति या धर्म (पंथ) आदि के नामों पर मिली सामाजिक पहचान को छोड़ते हुए, लड़के की जाति, धर्म (पंथ) या उपनाम को अपनाया जाने की बाध्यता का

होना, जबकि लड़के के द्वारा ऐसा नहीं किया जाना, ऐसी मानसिक स्थिति वाले लड़के तथा लड़कियां लिंग-मतारोपित (Gender-indoctrinated मानसिकता से ग्रसित दिखाई देते हैं।इसमें लड़के की मूल पारिवारिक-सामाजिक पहचान तो कहीं न कहीं बनी रहती है, लेकिन लड़की की मूल पारिवारिक- सामाजिक पहचान के साथ उसका स्वाभिमान भी धूमिल होता प्रतीत होता है। इस कारण समाज में महिला की स्वतंत्रत सामाजिक पहचान स्थापित किये जाने के वैश्विक नारीवादी आंदोलनों की राह में ऐसे महिला-पुरुष या लड़के-लड़कियां कहीं-न-कहीं वरदान तो नहीं, अपितु बाधाएं अवश्य सिद्ध होते हैं।

(11) भारतीय समाज में प्रायः यह सुना जाता है कि महिला की कोई जाति या कोई धर्म नहीं होता, वह जिस जाति या धर्म (पंथ) के पुरुष से विवाह करती है, तो वह उसी जाति या धर्म (पंथ) की हो जाती है। यह भी सही नहीं है, क्योंकि यदि महिला की जाति या उसका कोई धर्म (पंथ) नहीं होता, तो क्या पुरुष की जाति या धर्म (पंथ) उसे प्रकृति ने बनाकर दिया है ? उत्तर है-नहीं। बल्कि महिला के विषय में पुरुष या महिला के द्वारा ऐसे सोचे, समझे या किये जाने की बाध्यता भी भारतीय समाज में उसके साथ किये जाने वाले लिंग-भेद की स्थिति की ओर संकेत करती है।

(12) नारीवादी दृष्टिकोण से, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं के अनुसार, बेटियों को व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में संपूर्ण सामाजिक समानता की संस्कृति माने जाने के विरुद्ध, किसी लड़के को विवाह के द्वारा प्रायः घर जमाई बनाने की ही तरह, एक बेटी के माता-पिता के द्वारा उसकी बेटी को घर बहू बनवाने के लिये बेटि या उसके माता-पिता की ओर से विवाह हेतु लड़के की खोज करना तथा ऐसे विवाह होने की स्वीकृति देना, बेटि (लड़की) तथा उसके पक्ष की ओर से, लड़के तथा उसके पक्ष के माता-पिता के द्वारा उसे दास बनाये जाने के लिये उत्साहपूर्वक निमंत्रण देने के समान है। लड़की तथा

उसके माता-पिता की ओर से ऐसी परंपरागत सोच भी जाने-अनजाने में एक लिंग-भेद की साधना का ही एक रूप है।

बहुत नहीं, तो थोड़ी ही सही, पर ऐसी भी कुछ महिलाएँ हैं, जिन्होंने अन्य जाति तथा धर्म (पंथ) के पुरुषों से विवाह करने के पश्चात् भी उन्होंने न उनकी जाति बदली है, न धर्म और न उनका उपनाम।उन्होंने ऐसा इसलिये किया, क्योंकि जाति , धर्म (पंथ) तथा उपनाम मनुष्य ने बनाये हैं, प्रकृति ने नहीं और वे स्वाभिमानी महिलाएँ भी उन्हीं मनुष्यों में से कुछेक हैं। यह तथ्य अलग है उनकी एतिहासिक पीढ़ियों की महिलाओं के साथ इस संदर्भ में कुछ पुरुषों के द्वारा कैसे षड्यंत्र किया गया। उक्त षड्यंत्र का साक्ष्यपरक वर्णन भी इसी पुस्तक में अंकित है।

(ब) भारतीय राजनैतिक परिदृश्य से संबंधित कुछ लिंग-भेद के जीवंत स्थितिगत उदाहरण-

(1) भारतीय राजनीति में, प्रधानमंत्री जैसे राजनैतिक पदों पर, चुनाव में जीतने वाली राजनीतिक पार्टियों के द्वारा आज तक श्रीमती इंदिरा गांधी के अतिरिक्त, अन्य महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों को ही प्रधानमंत्री जैसे राजनैतिक पदों के लिए चुना जाना भी भारत के राजनैतिक परिदृश्य में लिंग-भेद के विचार को माने जाने के संकेत मिलते हैं।

(2) भारतीय राजनैतिक परिदृश्य में लोकसभा एवं विधानसभाओं के चुनावों में राजनीतिक दलों के द्वारा, पुरुषों के बराबर संख्याओं में महिला उम्मीदवारों को चुनावी मैदान में न उतरा जाना भी, भारतीय राजनैतिक परिदृश्य में महिलाओं के साथ होने वाले लिंग-भेदात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

(3) भारतीय राजनीति में, महिलाओं को राजनैतिक पदों में 50 प्रतिशत आरक्षण न दिया जाना या इस संदर्भ में देरी करना भी या देर से दिया जाना भी महिलाओं के साथ इस क्षेत्र में लिंग-भेदात्माक व्यवहार को दर्शाता है।

(4) भारतीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा महिलाओं को सेना में स्थायी कमीशन दिये जाने के निर्देश के पश्चात् केंद्र सरकार द्वारा इस दिशा में पहल कर पाना भी, भारतीय राजनीति में महिलाओं के साथ किये जाने वाले लिंग-भेदात्मक व्यवहार को दर्शाता है।

(5) बेटी के विवाह के पश्चात, उसके ससुराल के संदर्भ में उसकी सामाजिक हैसियत परंपरागत रूप से घर बहू की हैसियत में परिवर्तित होना तथा ऐसी स्थिति में बेटे की हैसियत यथावत रहना अर्थात उसकी हैसियत घर जमाई में परिवर्तित न होना, जो दोनों के ही साथ नहीं होना चाहिए, लेकिन वैसा सामान्यतः सभी बहूओं के साथ होना भी लिंग-भेद की एक जीवंत स्थिति को दर्शाता है।

उपरोक्त स्थितिगत उदाहरणों के अध्ययन से यह आसानी से समझ जा सकता है कि भारतीय समाज में ही नहीं, अपितु विश्व के सभी राष्ट्रों में, राजनैतिक तथा सामाजिक समानता के संदर्भ में देखा जाए, तो उनके राजनैतिक परिदृश्य में सैद्धांतिक रूप से लिंग-भेद के उदाहरण तो लगभग नहीं के बराबर हैं, लेकिन व्यावहारिक रूप में इसका प्रभाव सभी स्तरों पर दिखाई देता है।

इसी संदर्भ में यदि हम सामाजिक परिदृश्य को देखें, तो पुरुषों के द्वारा महिलाओं के संदर्भ में, लिंग-भेद रहित व्यवहार किये जाने की स्थिति संतोषजनक नहीं दिखाई देती, क्योंकि उनके लिये इस संदर्भ में किसी भी समाज में संपूर्ण सामाजिक समानता की संस्कृति न तो स्थापित है और न प्रचलित।उनके सर्वांगीण विकास के लिये ऐसी संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता की व्यावहारिक संस्कृति निर्मित करके उसे समाज में प्रचलित किये जाने की नितांत आवश्यकता है।

अध्याय 5
लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में, भारतीय संविधान में विहित 'हिंदू विवाह अधिनियम, 1955' की प्रमुख धाराएँ, अधिकारों और नियमों की समझ

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की प्रमुख धाराएँ, अधिकार और नियम-

अगर आप हिंदू हैं और यदि किसी हिंदू से विवाह करने जा रहे हैं, तो आपको हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 अवश्य पढ़ना चाहिए, क्योंकि यह अधिनियम, विवाह से संबंधित कानून प्रदान करता है, जैसे विवाह की कानूनी मान्यता की शर्तें, विवाह शून्य, तलाक आदि जानने के लिए इसका आगे अध्ययन करें-

इसका आगे अध्ययन करनेके पूर्व पाठकों के मस्तिष्क में कुछ प्रश्न हो सकते हैं। जैसे-

(1) हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के प्रमुख प्रावधान क्या है?

(2) हिंदू विवाह अधिनियम किन पर लागू होता है?

(3) हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की महत्त्वपूर्ण धाराएँ क्या हैं?

(4) कौनसे कानूनी आधार हैं, जिन पर तलाक के लिए आवेदन कर सकते हैं?

तो आइए अब हम इस अधिनियम की विभिन्न विषय वस्तुओं को इसके विभिन्न शीर्षकों के अंतर्गत समझने का प्रयत्न करते हैं-

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 क्या है?

हिंदू विवाह अधिनियम, 1995 एक ऐसा कानून है, जो हिंदू विवाह के लिए शुरु से अंत तक नियम बनाता है। इस अधिनियम में विवाह की औपचारिकताओं और विवाह-विच्छेद या तलाक के आधारों से संबंधित

नियम हैं। हिंदू विवाह अधिनियम छह अध्यायों में विभाजित है, जिनमें 29 धाराएँ हैं।

हिंदू विवाह अधिनियम का उद्देश्य हिंदू विवाहों को अधिक सुव्यवस्थित बनाना और हिंदू विवाह में व्यक्तियों के अधिकारों की रक्षा करना है।इस कानून से पहले, हिंदू विवाहों और उनसे संबंधित जीवनसाथी के अधिकारों को नियंत्रित करने के लिए लगभग कोई प्रावधान नहीं थे। इससे लोगों के विवाहों में समस्याएँ पैदा होती थीं और कानूनों की कमी के कारण अदालतों में न्याय पाना असंभव था।

इस प्रकार, भारत में हिंदुओं, बौद्धों, जैनियों और सिखों के बीच विवाहों को विनियमित करने के लिए 1995 का हिंदू विवाह अधिनियम लागू किया गया।इस कानून ने पति-पत्नी दोनों के लिए कानूनी सीमाएँ और अधिकार निर्धारित करके दम्पतियों के बीच व्यवस्था स्थापित की। इसने विवाह संबंधी औपचारिकताओं और तलाक के नियमों के लिए आधार तैयार किए।

हिंदू विवाह अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ

यहाँ हिंदू विवाह अधिनियम की सबसे आवश्यक विशेषताओं की सूची दी गई है :

द्विविवाह का निषेध- हिंदू विवाह अधिनियम किसी व्यक्ति को एक समय में एक से अधिक पत्नी या पति रखने से रोकता है।

अधिनियम की धारा 5 में कहा गया है कि एक व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति से तब तक विवाह नहीं कर सकता, जब तक कि उसका पिछला विवाह तलाक के माध्यम से समाप्त न हो जाए या यदि उसका पिछला विवाह पति या पत्नी की मृत्यु के कारण समाप्त हो गया हो।

विवाह के लिए न्यूनतम आयु- अधिनियम की धारा 5 (iii) के अनुसार विवाह के समय पुरुष की आयु कम से कम 21 वर्ष तथा महिला की आयु कम से कम 18 वर्ष होनी चाहिए। इस आयु से पहले विवाह अमान्य माना जाता है (कानून के अनुसार यह वैध विवाह नहीं है) ।

कवर किए गए व्यक्ति- अधिनियम में कहा गया है कि कोई भी हिंदू व्यक्ति, जिसमें बौद्ध, जैन और सिख धर्म के अनुयायी भी शामिल हैं, चाहे वह भारत में रहता हो या भारत के बाहर, सीधे तौर पर इसके अधीन है। हिंदू विवाह अधिनियम और विवाह से संबंधित उसके सभी कानूनों के प्रति उत्तरदायी है।

विवाह के लिए मानसिक स्थिरता - विवाह के समय दम्पति को मानसिक रूप से स्वस्थ होना चाहिए। यदि कोई एक या दोनों व्यक्ति विवाह के लिए सहमति देने के लिए मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं हैं, मानसिक विकार या पागलपन के कारण विवाह के लिए अयोग्य हैं तो विवाह को अमान्य (कानून द्वारा मान्यता प्राप्त नहीं) माना जाता है।

पंजीकरण - विवाहित जोड़े विवाह के उपरांत रजिस्ट्रार से अपना विवाह प्रमाण पत्र प्राप्त कर सकते हैं। कुछ राज्यों में विवाह पंजीकरण अनिवार्य है, जबकि अन्य में ऐसा नहीं है। हालाँकि, यदि किसी के पास ये प्रमाण पत्र नहीं हैं, तो विवाह को तब तक अमान्य नहीं माना जाता, जब तक कि विवाह दोनों पक्षों के पारंपरिक रीति-रिवाजों और समारोहों के साथ संपन्न हो।

वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना - अधिनियम के अनुसार, यदि एक साथी बिना किसी वैध कारण के दूसरे को छोड़ देता है, तो दूसरा साथी अपने जीवनसाथी को वापस लाने के लिए अदालत की मदद ले सकता है।

तलाक - यह अधिनियम विवाह के एक वर्ष बाद तलाक के लिए आवेदन करने की अनुमति देता है। जोड़े विवाह के एक वर्ष से पहले तलाक के स्थान पर न्यायिक पृथक्करण का विकल्प चुन सकते हैं। हालाँकि, यदि किसी व्यक्ति को विवाह में अत्यधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, तो वह तलाक की माँग कर सकता है।

यह अधिनियम असाधारण आधार भी प्रदान करता है, जिसके तहत केवल पत्नी ही अपने पति से तलाक ले सकती है, भले ही पति तलाक के लिए सहमत न हो।

हिंदू विवाह अधिनियम की प्रयोज्यता

हिंदू विवाह अधिनियम1955 निम्नलिखित व्यक्तियों पर लागू होता है:

- कोई भी व्यक्ति, जो किसी भी रूप या विकास में धर्म से हिंदू है, जिसमें लिंगायत (वीरशैव, ब्रह्म, प्रार्थना या आर्य समाज का अनुयायी शामिल है।
- कोई भी व्यक्ति, जो धर्म से बौद्ध, जैन या सिख है।
- भारत में निवास करने वाला कोई भी व्यक्ति, जो धर्म से मुस्लिम, पारसी, ईसाई या यहूदी नहीं है।

अमान्य और अमान्यकरणीय विवाह

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 की धारा-5 के अनुसार, विवाह को वैध बनाने के लिए दंपत्ति को कुछ शर्तों को पूरा करना होगा। यदि वे ऐसा नहीं करते हैं, तो विवाह को अमान्य या अमान्यकरणीय माना जाता है।

शून्यकरणीय विवाह

हिंदू विवाह अधिनियम किसी विवाह को शून्यकरणीय मानता है (अर्थात् विवाह अधिनियम के तहत वैध है और उसे अवैध घोषित किया जा सकता है) निम्नलिखित में से किसी भी मामले में:

- यदि एक पक्ष प्रजनन करने में असमर्थ है, तो इसे बाद में रद्द किया जा सकता है।
- जब कोई व्यक्ति मानसिक बीमारी के कारण विवाह के लिए सहमति नहीं दे पाता है, मानसिक विकार के कारण विवाह के लिए अयोग्य हो जाता है या उसे पागलपन के दौरे पड़ते रहते हैं, तो विवाह को रद्द किया जा सकता है।
- यदि विवाह के समय पत्नी, दूल्हे की जानकारी के बिना किसी अन्य पुरुष से गर्भवती थी, तो विवाह रद्द किया जा सकता है।

अमान्य विवाह

हिंदू विवाह अधिनियम निम्नलिखित में से किसी भी मामले में विवाह को शून्य (अधिनियम के तहत अवैध) मानता है:

- यदि एक पक्ष पहले से ही विवाहित है और उसका जीवनसाथी जीवित है।
- यदि दोनों पक्ष निषिद्ध रिश्ते की सीमा के भीतर हैं, जब तक कि उनके रीति-रिवाज या प्रथाएँ उनके बीच विवाह की अनुमति नहीं देती हैं।
- यदि पक्षकार एक-दूसरे के सपिण्ड हैं, जब तक कि उनके रीति-रिवाज या प्रथाएँ उनके बीच विवाह की अनुमति न दें।

हिंदू विवाह अधिनियम की महत्त्वपूर्ण धाराएँ

यहाँ हिंदू विवाह अधिनियम 1955 की आवश्यक धाराओं की सूची दी गई है:

(i) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-7 हिंदू विवाह के समारोहों से संबंधित है। इसमें कहा गया है कि हिंदू जोड़े को दोनों पक्षों के पारंपरिक रीति-रिवाजों के अनुसार विवाह करना चाहिए। सप्तपदी या अग्नि के सात फेरे, इस अधिनियम के तहत कानूनी रूप से मान्यता प्राप्त सबसे महत्त्वपूर्ण विवाह समारोह है।

(ii) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-9 के अनुसार, यदि कोई भी साथी बिना किसी उचित कारण के अपने पति या अपनी पत्नी को छोड़ देता है, तो दूसरा साथी अदालत का रुख कर सकता है। यदि छोड़ने वाले पक्ष के पास छोड़ने का कोई वैध कारण नहीं है, तो अदालत उसके अधिकारों को बहाल करेगी और उसे वापस लौटने और अपने जीवनसाथी के साथ रहने के लिए कहेगी।

(iii) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-10 न्यायिक पृथक्करण से संबंधित है। यह दोनों पति-पत्नी को विशिष्ट आधारों पर न्यायिक पृथक्करण की अनुमति देती है। न्यायिक पृथक्करण विवाह को भंग नहीं करता, हालाँकि यह पति-पत्नी के वैवाहिक दायित्वों को निलंबित कर देता है और उन्हें अलग रहने की अनुमति देता है।

(iv) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-13 तलाक के आधारों से संबंधित है। इस धारा में दिए गए आधारों पर किसी भी पक्ष को तलाक के लिए आवेदन करने का अधिकार है। व्यभिचार, परित्याग, क्रूरता, विकृत मन, त्याग आदि तलाक के कुछ स्वीकार्य कारण हैं।

(v) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-13 बी आपसी सहमति से तलाक से संबंधित है। यह अधिनियम उन पक्षों को आपसी सहमति से अलग होने की अनुमति देता है, जब उन्हें लगता है कि उनका विवाह ठीक नहीं चल रहा है और उसे सुधारा नहीं जा सकता। तलाक लेने के लिए दंपत्ति की शादी को कम से कम एक साल हो जाना चाहिए।

(vi) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-14 में कहा गया है कि दोनों पक्षों को विवाह के एक वर्ष के भीतर तलाक के लिए याचिका प्रस्तुत नहीं करनी चाहिए, सिवाय इसके कि पति-पत्नी असाधारण वैवाहिक कठिनाइयों का सामना कर रहे हों।

(vii) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-15 में तलाकशुदा साथी को दोबारा शादी करने का अधिकार कब है, यह बताया गया है। इसमें प्रावधान है कि तलाकशुदा पक्ष अदालत द्वारा तलाक का आदेश पारित करने और तलाक के आदेश के खिलाफ अपील दायर करने की समय सीमा समाप्त होने के बाद दोबारा शादी कर सकते हैं।

(viii) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-24 तलाक की कार्यवाही के दौरान भरण-पोषण और खर्चों से संबंधित है।इसका अर्थ है

कि पति या पत्नी, तलाक या अन्य वैवाहिक कार्यवाही के समय, दूसरे जीवनसाथी से वित्तीय सहायता माँग सकते हैं।

(ix) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-25 स्थायी गुजारा भत्ता और भरण-पोषण से संबंधित है। इस धारा के तहत, अदालत तलाक, कानूनी अलगाव या विवाह के रद्द होने के बाद पति या पत्नी में से किसी एक को दूसरे साथी को एक निश्चित राशि की वित्तीय सहायता देने का आदेश दे सकती है।

(x) हिंदू विवाह अधिनियम की धारा-26, माता-पिता के तलाक की स्थिति में बच्चों की देखभाल, भरण-पोषण और शिक्षा से संबंधित है।अदालत यह तय करती है कि बच्चे की देखभाल किसके पास होगी, और बच्चे के कल्याण को अपना प्राथमिक उद्देश्य मानती है।

हिंदू विवाह अधिनियम के तहत तलाक के आधार

अधिनियम की धारा-13 के तहत दिए गए वैध आधारों पर न्यायालय, हिंदू विवाह को भंग कर सकता है।यहाँ वे आधार दिए गए हैं, जिनके तहत कोई व्यक्ति तलाक के लिए अर्जी दे सकता है:

(i) क्रूरता -कोई व्यक्ति वैवाहिक जीवन में शारीरिक या मानसिक शोषण का शिकार हो सकता है। ऐसे मामलों में वे तलाक की माँग कर सकते हैं।

(ii) व्यभिचार - यदि किसी व्यक्ति के साथी ने जानबूझकर अपने साथी के अलावा किसी अन्य व्यक्ति के साथ यौन संबंध बनाए हैं तो वह तलाक की माँग कर सकता है।

(iii) धर्म परिवर्तन - यदि जीवनसाथी ने हिंदू धर्म को छोड़कर किसी अन्य धर्म को अपना लिया है, तो तलाक दिया जा सकता है।

(iv) साथी को छोड़ना - यदि पति या पत्नी में से किसी एक को उसके साथी ने दो वर्ष या उससे अधिक समय से छोड़ रखा है, तो वे तलाक की माँग कर सकते हैं।

(v) रोग - यदि किसी साथी को लाइलाज मानसिक विकार का पता चला है, वह लगातार या रुक-रुक कर किसी मानसिक विकार या संक्रामक यौन रोग से पीड़ित है, तो दूसरा साथी तलाक की माँग कर सकता है।

(vi) मृत्यु की धारणा: यदि किसी व्यक्ति का साथी सात वर्ष या उससे अधिक समय से जीवित नहीं देखा गया है तो वह तलाक के लिए याचिका दायर कर सकता है।

संसार का त्याग: यदि किसी व्यक्ति के जीवन-साथी ने किसी धार्मिक संप्रदाय में प्रवेश करके संसार का त्याग कर दिया है, तो वह तलाक के लिए याचिका दायर कर सकता है।

हिंदू विवाह अधिनियम और विशेष विवाह अधिनियम के बीच अंतर-

यहाँ हिंदू और विशेष विवाह अधिनियमों के बीच मुख्य अंतर को समझाने वाली एक तालिका दी गई है।

विशेषताएँ	हिंदू विवाह अधिनियम	विशेष विवाह अधिनियम
प्रासंगिकता	हिंदू विवाह अधिनियम 1955 भारत में केवल हिंदुओं के लिए प्रासंगिक है।	यह अधिनियम भारत के सभी लोगों के लिए है, चाहे उनकी स्थिति, जाति, धर्म, पहचान आदि कुछ भी हो।
लचीलापन	हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 भारत में केवल हिंदुओं को ही आपस में विवाह करने की अनुमति देता है।	इस अधिनियम के अनुसार, कोई भी व्यक्ति किसी भी धर्म या जाति की परवाह किए बिना किसी से भी विवाह कर सकता है।यह अधिनियम किसी भारतीय को किसी विदेशी निवासी से भी विवाह करने की अनुमति देता है।
विवाह नामांकन	हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 के अनुसार, विवाह सप्तपदी या सात फेरों जैसे हिंदू रीति-रिवाजों के अनुसार होना चाहिए। इसमें विवाह रजिस्ट्रार द्वारा विवाह संपन्न कराने की अनिवार्यता नहीं है।	विशेष विवाह अधिनियम, समारोहों के माध्यम से विवाह संपन्न करने की अनुमति देता है तथा विवाह के बाद एक निश्चित अवधि के भीतर विवाह रजिस्ट्रार के पास विवाह पंजीकरण अनिवार्य करता है।

हिंदू विवाह अधिनियम, 1955 केवल हिंदू विवाहों के लिए आधार तैयार करता है और हिंदू विवाहों में स्थिरता और विश्वसनीयता प्रदान करता है।

इसने विवाह के लिए कानून बनाए, जिसमें विवाह की पात्रता और विवाह के प्रत्येक चरण से संबंधित नियम शामिल हैं। इससे लोगों के लिए मुश्किल समय में अदालत में न्याय पाना आसान हो जाता है।सरकार ने एक विशेष विवाह अधिनियम भी पेश किया है, जिसे उसने भारत के सभी निवासियों के लिए, चाहे उनका धर्म और जाति कुछ भी हो, विकसित किया है, जिससे यह अधिक सुलभ हो गया है।इस अधिनियम के विभिन्न प्रावधान के अध्ययन से हम निम्नलिखित निष्कर्षों पर पहुँचते हैं। जैसे -

(1) इस अधिनियम के माध्यम से लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए हिंदू धर्म की महिलाओं तथा पुरुषों को विवाह के संदर्भ में लगभग एक समान अधिकारों के उपभोग तथा कर्त्तव्यों के निर्वहन करने के अधिकार दिए गये हैं।

(2) इस नियम के अंतर्गत हिंदू धर्म लिंग-भेदात्मक जैसी गौत्र नामक प्रचलित सामाजिक मान्यता का अधिनियम में कोई उल्लेख नहीं है।

(3) इस अधिनियम में महिला को लिंग-भेद जैसी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता की पीड़ा से संरक्षित करने के लिए यह प्रावधान किया गया कि यह अधिनियम असाधारण आधार भी प्रदान करता है, जिसके तहत केवल पत्नी ही अपने पति से तलाक ले सकती है, भले ही पति तलाक के लिए सहमत न हो।

(4) लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से इस अधिनियम में यह भी प्रावधान किया गया है कि यह हिंदू व्यक्ति को एक समय में एक से अधिक पत्नी या पति रखने से रोकता है।

(5) इस अधिनियम में पति-पत्नी के विवाह को रद्द किये जाने के लगभग एक समान आधार उल्लेखित किये गये हैं।यह प्रावधान भी लिंग समानता की ओर संकेत करता है।

(नोट: उपरोक्त अध्याय में प्रस्तुत जानकारी इंटरनेट सर्च द्वारा प्राप्त Cleartax वेबसाइट के एक आलेख (https://cleartax.in/s/hindu-marriage-act) से ली गई है, जिसकी लेखिका मायाश्री आचार्य हैं, जो पेशे

से एक वकील हैं। 13 मई, 2025 को यह आलेख अद्यतन किया गया है। पाठकों से मेरा यह निवेदन है कि इस अधिनियम के प्रावधानों का कानूनी संदर्भ में उपयोग करने के पूर्व विधिक परामर्श अवश्य लिया जाना चाहिए।

विशेष-इस अध्याय में भारतीय संविधान में उल्लेखित 'हिंदू विवाह अधिनियम 1955'से संबंधित विभिन्न प्रावधान सामाजिक जागृति के उद्देश्य से वर्णित किये गये हैं, इन्हें जीवन में प्रयुक्त किये जाने के पूर्व संबंधित विषय विशेषज्ञ से कानूनी परामर्श लिया जाना अनिवार्य है।

अध्याय 6
वंश की सामाजिक तथा जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं के मध्य अंतर की समझ

विश्व के विभिन्न राष्ट्रों की समाजों के विभिन्न पंथ प्रेरित संप्रदायों से हटकर, हिंदू समाज की विभिन्न जातियों में वंश की सहायक सामाजिक मान्यताओं के रूप में गोत्र तथा उपनाम के साथ भी वंश लेखन या मौखिक वर्णन करने की सामाजिक मान्यताओं का पालन किया जाता है।

सबसे पहले हम सामाजिक, पौराणिक तथा जैव वैज्ञानिकीय दृष्टिकोण से वंश की अवधारणा के अर्थों को समझने के लिये इसके विभिन्न पहलुओं को समझने का प्रयास करते हैं। जैसे-

(1) सामाजिक

(2) पौराणिक तथा

(3) जैव वैज्ञानिकीय पहलू

(1) सामाजिक पहलू- सामाजिक रूप से वंश का अर्थ परिवार, कबीले या समुदाय की पीढ़ियों के बीच संबंधों और विरासत से होता है। यह सांस्कृतिक, धार्मिक (पंथ प्रेरित) और पारंपरिक मूल्यों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचाने के तरीके को दर्शाता है।

(2) पौराणिक पहलू - वंश की विभिन्न सामाजिक मान्यताओं के अनुसार समाज के विभिन्न समुदायों में वंश के आगे बढ़ने की एक समान सामाजिक मान्यताएं नहीं, अपितु भिन्न-भिन्न आधारों पर विभिन्न समाजिक मान्यताएँ प्रचलित हैं।

हिंदू समाज के लोगों के द्वारा उनके धार्मिक (पंथ प्रेरित) ग्रंथों में वर्णित वंश की विभिन्न पौराणिक मान्यताओं के आधार पर भी समाज में वंश की सामाजिक मान्यताओं का निर्धारण तथा पालन किया जाता है। इस संदर्भ में

हिंदुओं के सर्वमान्य पौराणिक ग्रंथ महाभारत में भी राजा प्रतीप के आगे की पीढ़ी के राजा शांतनु के द्वारा परंपरागत पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन किये जाने के कारण पुत्र के जन्म होने से ही वंश आगे बढ़ने वाली सामाजिक मान्यता की पुष्टि होती है, परंतु इसके साथ ही महाभारत में वंश की सामाजिक मान्यता, जैववैज्ञानिकीय न होकर किसी व्यक्ति पर आरोपित की जाने वाली वंश की सामाजिक मान्यता मात्र सिद्ध होती है, जैसा कि महाभारत की उक्त पौराणिक घटना का इसी अध्याय में आगे किये गये वर्णन से सिद्ध होता है।

(2) जैव वैज्ञानिकीय पहलू- जैव वैज्ञानिकीय दृष्टिकोण से, 'वंश का अर्थ प्रजनन के माध्यम से आनुवंशिक विरासत को उनकी आगामी पीढ़ियों में स्थानांतरित करते रहने की एक प्रजाति विशेष की जैविक श्रृंखला से होता है।इस दृष्टि से जीवों के बीच पारिवारिक या वंशानुगत संबंधों से होता है। यह जीन और DNA के माध्यम से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचने वाली प्रजातीय विशेष की विशेषताओं और लक्षणों को दर्शाता है।

वंश की सामाजिक तथा जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं के मध्य अंतर की समझ को उनकी निम्नलिखित विशेषताओं के तुलनात्मक अध्ययन के द्वारा और अधिक स्पष्टता से समझा जा सकता है। जैसे -

(1) सामाजिक मान्यताएँ पूर्णतया मनुष्यकृत होती हैं, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताएँ प्रकृति जनित होती हैं।

(2) सामाजिक मान्यताओं को समाज विशेष के लोगों की इच्छा अथवा आवश्यकताओं के अनुसार परिवर्तित, संवर्धित, संशोधित या उन्मूलित किया जा सकता है, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं को चाह कर भी परिवर्तित या उन्मूलित किया जाना लगभग असंभव होता है।

(3) सामाजिक मान्यताओं की प्रकृति मनुष्य प्रदत्त होती है, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं की विशेषताएँ प्रकृति प्रदत्त होती हैं।

(4) समाज के द्वारा दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं को उन्मूलित किया जा सकता है, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं को

समाज के व्यक्तियों द्वारा इस प्रकार से परिवर्तित या उन्मूलित किया जाना लगभग असंभव होता है।

(5) सामाजिक मान्यताओं का अस्तित्व मात्र समाज के माने जाने पर निर्भर होता है, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताओं का प्रकृति प्रदत्त अस्तित्व होता है।

(6) समाज को सामाजिक रूप से व्यवस्थित तथा संचालित किये जाने के लिए सामाजिक मान्यताओं की अहम भूमिका होती है, जबकि जैव वैज्ञानिकीय मान्यताएँ प्रकृति के पेड़-पौधों तथा जीव-जंतुओं की प्रजातियों के जीवन से संबंधित सभी प्रक्रियाओं के सतत् संचालन में महत्त्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाती हैं।

यदि वंश की समाजशास्त्रीय अवधारणा को समझें, तो इसके अनुसार वंशानुक्रम या वंश की सामाजिक प्रणाली, जिसे अंग्रेजी में 'Descent' कहते हैं, किसी धर्म (पंथ) की मूलभूत मान्यता नहीं होती, अपितु इसका तात्पर्य सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से किसी समाज विशेष के समुदाय की सामाजिक मान्यता प्राप्त प्रणाली से है, जिसमें माता-पिता के माध्यम से नातेदारी संबंधों का पता लगाया जाता है।अर्थात् लोग अपने पूर्वजों से किस प्रकार संबंधित होते हैं, यह सामाजिक प्रणाली आधारित सामाजिक संगठनों का मूलभूत पहलू है, विशेष रूप से यह समझने में कि किसी समाज का समुदाय विशेष, परिवार, विरासत तथा सामाजिक समूह की संरचना कैसे करता है। वंशानुक्रम का पता एक या दोनों माता-पिता के माध्यम से लगाया जा सकता है और यह सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से समाज के किसी समुदाय विशेष के भीतर समूह की सदस्यता, अधिकार और दायित्व को निर्धारित करने वाली वंश की सामाजिक प्रणाली होती है।

यदि सामाजिक संदर्भ में वंश या वंशानुक्रम (Descent) की संक्षिप्त व्याख्या करें, तो यह कहा जा सकता है कि यह सामाजिक मान्यताओं पर आधारित वंश की वह सामाजिक प्रणाली आधारित व्यवस्था है, जो जैव वैज्ञानिकीय, सांस्कृतिक धार्मिक (पंथपरक) तथा सामाजिक आदि विभिन्न आधारों पर संतानों को उनके माता-पिताओं एवं पूर्वजों से जोड़ती है। इसमें जन्मगत अथवा रक्त-संबंधियों को भी अक्सर सम्मिलित किया जाता है, जो वास्तविक

तथा काल्पनिक संबंधों में बंधे होते हैं और ये संबंध समाज द्वारा मान्य होते हैं।

सामाजिक संदर्भ में वंश को परिभाषित करते हुए पिडिंगटन लिखते हैं – " वंशानुक्रम, वंश के वे नियम हैं, जो एक व्यक्ति को सामाजिक समूह में जन्मजात सदस्यता को नियमित करते हैं, यद्यपि इस प्रकार की सदस्यता विशिष्ट स्थितियों में गोद लेने की प्रथा द्वारा भी प्राप्त की जाती है। "

बोहनन के अनुसार – " जब एक विवाहित जोड़े से एक संतान पैदा होती है, तो उसका उन दोनों से संबंध वंशानुक्रम संबंध के नाम से जाना जाता है। "

इस परिभाषा में बोहनन ने वंशानुक्रम को माता-पिता एवं बच्चों के संबंध को प्रकट करने वाली सामाजिक व्यवस्था के रूप में दर्शाया है।

रिवर्स ने 1907 में ब्रिटिश एसोसिएशन के समक्ष वंशानुक्रम का तात्पर्य ऐसे समूह को माना है, जिसकी सदस्यता जन्मजात है, जहाँ लोग यह निश्चय कर सकते हैं कि वे माता-पिता में से किस पक्ष में हैं।

मरडॉक लिखते हैं – " वंशानुक्रम (वंश) पूर्णतःएक सांस्कृतिक सिद्धांत की ओर संकेत करता है, जिसमें एक व्यक्ति को सामाजिक दृष्टि से एक विशिष्ट रक्त बंधुत्व से जोड़ा जाता है। "

फोरटेस के अनुसार – " एक वंशानुक्रम समूह, व्यक्तियों की ऐसी व्यवस्था है, जो वैध सामाजिक एवं वैयतिक उद्देश्यों को प्राप्त करने में सहायक होती है।'

वंश की उपरोक्त परिभाषाओं से यह कहीं भी प्रदर्शित नहीं होता कि वंश-वृद्धि के लिए पुत्र के जन्म की अनिवार्यता है और किसी व्यक्ति की वंश-संबद्धता ग्रहण करने के लिये उक्त व्यक्तियों की जैविक संतति का होना ही अनिवार्य है। दांपत्य जोड़े से संततियों का जन्म होने या उनके द्वारा अन्य किसी की जैविक संततियों को गोद लेने भर से भी वंश-वृद्धि होने की सामाजिक मान्यता रही है।

इसके पश्चात् यदि उपनाम जिसे अंग्रेजी में 'Surname' कहते हैं, इसकी सामाजिक अवधारणा को उदाहरण के माध्यम से समझने का प्रयास करें। जैसे- 'राजू सिंह नवीन आत्मज विजय सिंह नवीन' इसमें पुत्र के नाम के अंत

में 'नवीन' शब्द जुड़ा है, वही नाम उसके पिता के 'विजय सिंह' नामक नाम के अंत में भी जुड़ा हुआ था। किसी व्यक्ति के नाम के अंत में जुड़ने वाला कोई शब्द उसी रूप तथा संदर्भ में उसकी संततियों अथवा वंश-संबद्धता ग्रहण करने वाले व्यक्तियों के द्वारा उनके नामों के अंत में पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रयुक्त होता चला जाता है, तो ऐसा प्रयुक्त होने वाला शब्द ही उपनाम' कहलाता है।

इसके पश्चात् गोत्र की सामाजिक अवधारणा को समझने का प्रयास करें। सबसे पहली बात यह कि गोत्र जैसी सामाजिक अवधारणा का अस्तित्व अथवा सामाजिक मान्यता का प्रचलन मात्र हिंदू समाज के अधिकतर समुदायों के धर्मावलंबियों में ही देखने को मिलता है। अन्य किन्हीं पंथों के संप्रदायों के अनुयायियों की सामाजिक मान्यताओं में नहीं।

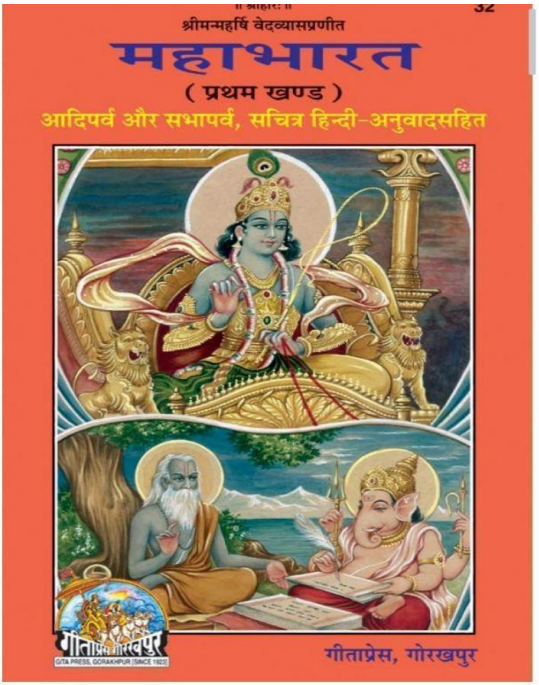
जिन हिंदू धर्म के अनुयायी उनकी संबद्धता जिन गोत्रों (उपनामों) के नाम से जोड़ते हैं, वे गोत्रों के नाम उनके किन्हीं काल्पनिक अथवा वास्तविक पूर्वजों के नाम होते हैं।

समाज में प्रचलित वंश, उपनाम तथा गोत्र जैसी मान्यताएँ, जैव वैज्ञानिकीय मान्यताएँ नहीं है, अपितु ये तीनों ही सामाजिक मान्यताएँ हैं। अर्थात् ये समाज के द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी प्रयुक्त होने के लिये मान ली गई रीतियाँ मात्र होती हैं।

उक्त तीनों सामाजिक मान्यताओं में से हिंदुओं में प्रचलित 'गोत्र' जैसी मान्यता को जैव वैज्ञानिकीय मान्यता होने से कहीं अधिक आरोपित की जाने वाली सामाजिक मान्यता होने की पुष्टि होती है। इसे प्रमाणित करने के लिए यह तर्क अपने आप में अकाट्य है कि विश्व के विभिन्न राष्ट्र के विभिन्न समाजों में वंश की सामाजिक प्रणालियाँ समाज में एक से कहीं अधिक विशेषताओं के साथ समाज में प्रचलित हैं और यदि ये जैव वैज्ञानिकीय मान्यता होतीं, तो क्या ऐसा हो पाता? निःसंदेह, ऐसा बिल्कुल नहीं। इस संदर्भ में हिंदुओं के सर्वमान्य पौराणिक ग्रंथ - 'महाभारत' में वर्णित एक पौराणिक घटना के उदाहरण से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। इसकी पुष्टि के साक्ष्य के रूप में - प्रकाशक— गीता प्रेस, गोरखपुर —२७३००५ (गोबिंद भवन-कार्यालय, कोलकाता संस्थान) फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०, फैक्स : (०५५१) २३३६९९७,

e-mail : booksales@gitapress.org के द्वारा प्रकाशित महाभारत (प्रथम खंड) का साहित्याचार्य पंडित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम' द्वारा हिंदी अनुवादित कृति के 104वे एवं 105वे अध्याय के आरंभिक भागों के पहले पृष्ठों के दो स्क्रीनशॉट दिये जा रहे हैं। ये सभी स्क्रीनशॉट

वेब लिंक
https://www.google.com/url?sa=t&source=web&rct=j&opi=89978449&url=https://archive.org/download/mahabharata-by-gita-press-in-hindi-and-sanskrit/Mahabharata%2520Volume%25201.pdf&ved=2ahUKEwiRv8Cqq7WRAxWkzjgGHZjwBhIQFnoECCAQAQ&usg=AOvVaw29-wBbSykkZXLwkI3CX8vM पर तथा इस पौराणिक कृति को इस डाउनलोडिंग लिंक-
https://share.google/QbGcLAzqKHkD8EQbn से डाउनलोड करके भी इसकी डिजिटल कृति के नीचे संदर्भित किये गये स्क्रीनशॉट्स सत्यापित किए जा सकते हैं।



।। श्रीहरिः ।।

श्रीमन्महर्षि वेदव्यासप्रणीत

महाभारत

(प्रथम खण्ड)

[आदिपर्व और सभापर्व]

(सचित्र, सरल हिंदी-अनुवाद)

त्वमेव माता च पिता त्वमेव
त्वमेव बन्धुश्च सखा त्वमेव ।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव
त्वमेव सर्वं मम देवदेव ।।

अनुवादक—

साहित्याचार्य पण्डित रामनारायणदत्त शास्त्री पाण्डेय 'राम'

सं० २०७२ सत्रहवाँ पुनर्मुद्रण ३,५००

कुल मुद्रण ८६,७००

प्रकाशक—

गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५

(गोबिन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)

फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०; फैक्स : (०५५१) २३३६९९७

web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org

गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop.in से online खरीदें।

चतुरधिकशततमोऽध्यायः

भीष्मकी सम्मतिसे सत्यवतीद्वारा व्यासका आवाहन और व्यासजीका माताकी आज्ञासे कुरुवंश-की वृद्धिके लिये विचित्रवीर्यकी पत्नियोंके गर्भसे संतानोत्पादन करनेकी स्वीकृति देना

भीष्म उवाच

पुनर्भरतवंशस्य हेतुं संतानवृद्धये ।
वक्ष्यामि नियतं मातस्तन्मे निगदतः शृणु ।। १ ।।
ब्राह्मणो गुणवान् कश्चिद् धनेनोपनिमन्त्र्यताम् ।
विचित्रवीर्यक्षेत्रेषु यः समुत्पादयेत् प्रजाः ।। २ ।।

भीष्मजी कहते हैं—मातः! भरतवंशकी संतानपरम्पराको बढ़ाने और सुरक्षित रखनेके लिये जो नियत उपाय है, उसे मैं बता रहा हूँ; सुनो। किसी गुणवान्* ब्राह्मणको धन देकर बुलाओ, जो विचित्रवीर्यकी स्त्रियोंके गर्भसे संतान उत्पन्न कर सके ।। १-२ ।।

वैशम्पायन उवाच

ततः सत्यवती भीष्मं वाचा संसज्जमानया ।
विहसन्तीव सव्रीडमिदं वचनमब्रवीत् ।। ३ ।।

वैशम्पायनजी कहते हैं—जनमेजय! तब सत्यवती कुछ हँसती और साथ ही लजाती हुई भीष्मजीसे इस प्रकार बोली। बोलते समय उसकी वाणी संकोचसे कुछ अस्पष्ट-सी हो जाती थी ।। ३ ।।

सत्यमेतन्महाबाहो यथा वदसि भारत ।
विश्वासात् ते प्रवक्ष्यामि संतानाय कुलस्य नः ।। ४ ।।

उसने कहा—'महाबाहु भीष्म! तुम जैसा कहते हो वही ठीक है। तुमपर विश्वास होनेसे अपने कुलकी संततिकी रक्षाके लिये तुम्हें मैं एक बात बतलाती हूँ ।। ४ ।।

न ते शक्यमनाख्यातुमापद्धर्मं तथाविधम् ।
त्वमेव नः कुले धर्मस्त्वं सत्यं त्वं परा गतिः ।। ५ ।।

'ऐसे आपद्धर्मको देखकर वह बात तुम्हें बताये बिना मैं नहीं रह सकती। तुम्हीं हमारे कुलमें मूर्तिमान् धर्म हो, तुम्हीं सत्य हो और तुम्हीं परम गति हो ।। ५ ।।

तस्मान्निशम्य सत्यं मे कुरुष्व यदनन्तरम् ।
(यस्तु राजा वसुर्नाम श्रुतस्ते भरतर्षभ ।
तस्य शुक्रादहं मत्स्याद् धृता कुक्षौ पुरा किल ।।
मातरं मे जलाद्धृत्वा दाशः परमधर्मवित् ।
मां तु स्वगृहमानीय दुहितृत्वे ह्यकल्पयत् ।।)
धर्मयुक्तस्य धर्मार्थं पितुरासीत् तरी मम ।। ६ ।।

'अतः मेरी सच्ची बात सुनकर उसके बाद जो कर्तव्य हो, उसे करो।

'भरतश्रेष्ठ! तुमने महाराज वसुका नाम सुना होगा। पूर्वकालमें मैं उन्हींके वीर्यसे उत्पन्न हुई थी। मुझे एक मछलीने अपने पेटमें धारण किया था। एक परम धर्मज्ञ मल्लाहने जलमेंसे मेरी माताको पकड़ा, उसके पेटसे मुझे निकाला और अपने घर लाकर अपनी पुत्री बनाकर रखा। मेरे उन धर्मपरायण पिताके पास एक नौका थी, जो (धनके लिये नहीं) धर्मार्थ चलायी जाती थी ।। ६ ।।

सा कदाचिदहं तत्र गता प्रथमयौवनम् ।
अथ धर्मविदां श्रेष्ठः परमर्षिः पराशरः ।। ७ ।।
आजगाम तरीं धीमांस्तरिष्यन् यमुनां नदीम् ।
स तार्यमाणो यमुनां मामुपेत्याब्रवीत् तदा ।। ८ ।।
सान्त्वपूर्वं मुनिश्रेष्ठः कामार्तो मधुरं वचः ।
उक्तं जन्म कुलं मह्यमस्मि दाशसुतेत्यहम् ।। ९ ।।

पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः

व्यासजीके द्वारा विचित्रवीर्यके क्षेत्रसे धृतराष्ट्र, पाण्डु और विदुरकी उत्पत्ति

वैशम्पायन उवाच

ततः सत्यवती काले वधूं स्नातामृतौ तदा ।
संवेशयन्ती शयने शनैर्वचनमब्रवीत् ।। १ ।।

वैशम्पायनजी कहते हैं—जनमेजय! तदनन्तर सत्यवती ठीक समयपर अपनी ऋतुस्नाता पुत्रवधूको शय्यापर बैठाती हुई धीरेसे बोली— ।। १ ।।

कौसल्ये देवरस्तेऽस्ति सोऽद्य त्वानुप्रवेक्ष्यति ।
अप्रमत्ता प्रतीक्षैनं निशीथे ह्यागमिष्यति ।। २ ।।

'कौसल्ये! तुम्हारे एक देवर हैं, वे ही आज तुम्हारे पास गर्भाधानके लिये आयेंगे। तुम सावधान होकर उनकी प्रतीक्षा करो। वे ठीक आधी रातके समय यहाँ पधारेंगे' ।। २ ।।

श्रुश्रुवास्तद् वचनं श्रुत्वा शयाना शयने शुभे ।
साचिन्तयत् तदा भीष्ममन्यांश्च कुरुपुङ्गवान् ।। ३ ।।

सासकी यह बात सुनकर कौसल्या पवित्र शय्यापर शयन करके उस समय मन-ही-मन भीष्म तथा अन्य श्रेष्ठ कुरुवंशियोंका चिन्तन करने लगी ।। ३ ।।

ततोऽम्बिकायां प्रथमं नियुक्तः सत्यवागृषिः ।
दीप्यमानेषु दीपेषु शरणं प्रविवेश ह ।। ४ ।।

उस समय नियोगविधिके अनुसार सत्यवादी महर्षि व्यासने अम्बिकाके महलमें (शरीरपर घी चुपड़े हुए, संयतचित्त, कुत्सित रूपमें) प्रवेश किया। उस समय बहुत-से दीपक वहाँ प्रकाशित हो रहे थे ।। ४ ।।

तस्य कृष्णस्य कपिलां जटां दीप्ते च लोचने ।
बभ्रूणि चैव श्मश्रूणि दृष्ट्वा देवी न्यमीलयत् ।। ५ ।।

व्यासजीके शरीरका रंग काला था, उनकी जटाएँ पिंगलवर्णकी और आँखें चमक रही थीं तथा दाढ़ी-मूँछ भूरे रंगकी दिखायी देती थी। उन्हें देखकर देवी कौसल्याने (भयके मारे) अपने दोनों नेत्र बंद कर लिये ।। ५ ।।

सम्बभूव तया सार्धं मातुः प्रियचिकीर्षया ।
भयात् काशिसुता तं तु नाशक्नोदभिवीक्षितुम् ।। ६ ।।

माताका प्रिय करनेकी इच्छासे व्यासजीने उसके साथ समागम किया; परंतु काशिराजकी कन्या भयके मारे उनकी ओर अच्छी तरह देख न सकी ।। ६ ।।

ततो निष्क्रान्तमागम्य माता पुत्रमुवाच ह ।
अप्यस्या गुणवान् पुत्र राजपुत्रो भविष्यति ।। ७ ।।

जब व्यासजी उसके महलसे बाहर निकले, तब माता सत्यवतीने आकर उनसे पूछा—'बेटा! क्या अम्बिकाके गर्भसे कोई गुणवान् राजकुमार उत्पन्न होगा?' ।। ७ ।।

निशम्य तद् वचो मातुर्व्यासः सत्यवतीसुतः ।
नागायुतसमप्राणो विद्वान् राजर्षिसत्तमः ।। ८ ।।
महाभागो महावीर्यो महाबुद्धिर्भविष्यति ।
तस्य चापि शतं पुत्रा भविष्यन्ति महात्मनः ।। ९ ।।

माताका यह वचन सुनकर सत्यवतीनन्दन व्यासजी बोले—'माँ! वह दस हजार हाथियोंके समान बलवान्, विद्वान्, राजर्षियोंमें श्रेष्ठ, परम सौभाग्यशाली, महापराक्रमी तथा अत्यन्त बुद्धिमान् होगा। उस महामनाके भी सौ पुत्र होंगे ।। ८-९ ।।

किं तु मातुः स वैगुण्यादन्ध एव भविष्यति ।
तस्य तद् वचनं श्रुत्वा माता पुत्रमथाब्रवीत् ।। १० ।।
नान्धः कुरूणां नृपतिरनुरूपस्तपोधन ।
ज्ञातिवंशस्य गोप्तारं पितॄणां वंशवर्धनम् ।। ११ ।।
द्वितीयं कुरुवंशस्य राजानं दातुमर्हसि ।

'किंतु माताके दोषसे वह बालक अन्धा ही होगा।' व्यासजीकी यह बात सुनकर माताने कहा—'तपोधन! कुरुवंशका राजा अन्धा हो यह उचित नहीं है। अतः कुरुवंशके लिये दूसरा राजा दो, जो जातिभाइयों तथा समस्त कुलका संरक्षक और पिताका वंश बढ़ानेवाला हो' ।। १०-११½ ।।



स जज्ञे विदुरो नाम कृष्णद्वैपायनात्मजः ।
धृतराष्ट्रस्य वै भ्राता पाण्डोश्चैव महात्मनः ।। २८ ।।

वही बालक विदुर हुआ, जो श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासका पुत्र था। एक पिताका होनेके कारण वह राजा धृतराष्ट्र और महात्मा पाण्डुका भाई था ।। २८ ।।

धर्मो विदुररूपेण शापात् तस्य महात्मनः ।
माण्डव्यस्यार्थतत्त्वज्ञः कामक्रोधविवर्जितः ।। २९ ।।

महात्मा माण्डव्यके शापसे साक्षात् धर्मराज ही विदुररूपमें उत्पन्न हुए थे। वे अर्थतत्त्वके ज्ञाता और काम-क्रोधसे रहित थे ।। २९ ।।

कृष्णद्वैपायनोऽप्येतत् सत्यवत्यै न्यवेदयत् ।
प्रलम्भमात्मनश्चैव शूद्रायाः पुत्रजन्म च ।। ३० ।।

श्रीकृष्णद्वैपायन व्यासने सत्यवतीको भी सब बातें बता दीं। उन्होंने यह रहस्य प्रकट कर दिया कि अम्बिकाने अपनी दासीको भेजकर मेरे साथ छल किया है, अतः शूद्रा दासीके गर्भसे ही पुत्र उत्पन्न होगा ।। ३० ।।

स धर्मस्यानृणो भूत्वा पुनर्मात्रा समेत्य च ।
तस्यै गर्भं समावेद्य तत्रैवान्तरधीयत ।। ३१ ।।

इस तरह व्यासजी (मातृ-आज्ञापालनरूप) धर्मसे उऋण होकर फिर अपनी माता सत्यवतीसे मिले और उन्हें गर्भका समाचार बताकर वहीं अन्तर्धान हो गये ।। ३१ ।।

एते विचित्रवीर्यस्य क्षेत्रे द्वैपायनादपि ।
जज्ञिरे देवगर्भाभाः कुरुवंशविवर्धनाः ।। ३२ ।।

विचित्रवीर्यके क्षेत्रमें व्यासजीसे ये तीन पुत्र उत्पन्न हुए, जो देवकुमारोंके समान तेजस्वी और कुरुवंशकी वृद्धि करनेवाले थे ।। ३२ ।।

इति श्रीमहाभारते आदिपर्वणि सम्भवपर्वणि विचित्रवीर्यसुतोत्पत्तौ पञ्चाधिकशततमोऽध्यायः ।। १०५ ।।

इस प्रकार श्रीमहाभारत आदिपर्वके अन्तर्गत सम्भवपर्वमें विचित्रवीर्यके पुत्रोंकी उत्पत्तिविषयक एक सौ पाँचवाँ अध्याय पूरा हुआ ।। १०५ ।।

जिन अध्यायों के प्रथम पृष्ठों के इन स्क्रीनशॉट्स में इस जानकारी का उल्लेख है कि राजा शांतनु की द्वितीय पत्नी सत्यवती से उत्पन्न चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य में से चित्रांगद का देवताओं के साथ युद्ध करते हुये मारे जाने तथा द्वितीय पुत्र, विचित्रवीर्य का अंबिका तथा अंबालिका के साथ विवाह होने के पश्चात् उनके द्वारा भी बिना कोई संतान जन्म दिये ही तपेदिक रोग से निधन हो जाने के पश्चात् , सत्यवती के द्वारा भीष्म पितामह से राजा शांतनु के वंश को आगे बढ़ाने के लिए परामर्श लिये जाने के उपरांत भीष्म पितामह के तत्कालीन आर्य जाति में प्रचलित नियोग नामक सामाजिक मान्यता का पालन करते हुए, किसी पवित्र अंतःकरण वाले ब्राह्मण को आमंत्रित करके, दोनों विधवा पुत्रवधुओं से संतान उत्पन्न करवाई जाने के पश्चात् , राजा शांतनु की वंश वृद्धि किये जाने का परामर्श दिया गया। सत्यवती के द्वारा इस परामर्श को माने जाने के पूर्व उनके द्वारा भीष्म को उनके जीवन में घटी एक घटना को सुनाये जाने के दृष्टांत अनुसार उनका राजा शांतनु से विवाह होने के पूर्व महर्षि पाराशर मुनि के द्वारा इन पर **प्रेमासक्त** (मोहित) होने के कारण इनके साथ समागम किये जाने से उत्पन्न व्यास (वेदव्यास /कृष्ण द्वैपायन) के जन्म होने की जानकारी उनसे साझा की गई। इसके पश्चात् भीष्म पितामह ने सत्यवती को तत्कालीन आर्य संस्कृति में नियोग नामक सामाजिक मान्यता का अनुकरण करते हुये ही राजा शांतनु की दोनों विधवा पुत्रवधुओं- अंबिका, अंबालिका के गर्भ से व्यास के द्वारा नियोग के माध्यम से संतति उत्पन्न करके राजा शांतनु की वंश वृद्धि करवाने के लिये सत्यवती को स्वीकृति दी गई। इसके उपरांत सत्यवती के पूर्व समागमी पुरुष, पाराशर मुनि से उत्पन्न पुत्र, वेदव्यास (कृष्णद्वैपायन) के द्वारा उनकी दोनों विधवा पुत्रवधुओं, अंबिका-अंबालिका तथा उनकी दासी के साथ समागम से उत्पन्न हुये पुत्रों – धृतराष्ट्र पांडु तथा विदुर के द्वारा राजा शांतनु के वंश को आगे बढ़ाने की पौराणिक कहानी वर्णित है।

उक्त वर्णित वृत्तांत के अध्ययन के संदर्भ में महाभारत की इस संदर्भित कृति के अनुसार भारत में राजा प्रतीप के राज्य से कहानी का अध्ययन करना प्रारंभ करें, तो इनके पुत्र राजा शांतनु तथा उनकी द्वितीय पत्नी सत्यवती से उत्पन्न दो पुत्र, चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य, दोनों में से 'चित्रांगद' का देवताओं से युद्ध करते हुये मारे जाने तथा द्वितीय पुत्र विचित्रवीर्य का अंबिका और

अंबालिका से विवाह होने के पश्चात् कोई भी संतान जन्म देने के पूर्व ही राजयक्ष्मा (तपेदिक) रोग से निधन हो जाने की स्थिति में राजा शांतनु के वंश को आगे बढ़ाने के लिये राजा शांतनु तथा गंगा से उत्पन्न गंगापुत्र भीष्म (देवव्रत) ' द्वारा आर्यों में प्रचलित 'नियोग' नामक तात्कालिक सामाजिक मान्यता का, रानी सत्यवती के द्वारा अनुकरण किये जाने का परामर्श तथा इसके पश्चात् रानी सत्यवती तथा महर्षि पराशर के द्वारा व्यास (कृष्ण द्वैपायन) नामक उत्पन्न पुत्र के द्वारा, इनकी विधवा पुत्रवधुओं-अंबिका तथा अंबालिका तथा अंबालिका की प्रधान दासी के साथ नियोग किये जाने से उत्पन्न पुत्रों के द्वारा शांतनु की वंश वृद्धि करवाये जाने का विचार, गंगापुत्र भीष्म के समक्ष रखने से लेकर गंगापुत्र भीष्म की इस पर सहमति के पश्चात् राजा शांतनु की द्वितीय पत्नी सत्यवती के पहले समागमी पुरुष, महर्षि पाराशर से उत्पन्न व्यास के द्वारा राजा शांतनु तथा सत्यवती की दोनों विधवा पुत्रवधूओं (अंबिका तथा अंबालिका के साथ समागम किये जाने के उपरांत उत्पन्न संतानों (पुत्रों) के द्वारा राजा शांतनु की वंश-वृद्धि किये जाने की सामाजिक मान्यता आरोपित किये जाने का वृत्तांत वर्णित है। नियोग के माध्यम से अंबिका के गर्भ से धृतराष्ट्र, अंबालिका के गर्भ से 'पांडु' तथा अंबिका की प्रधान दासी के गर्भ से विदुर के जन्म होने की कहानी वर्णित है। इससे विदित होता है कि राजा शांतनु के वंशवाहकों (वंशज) -धृतराष्ट्र, पांडु तथा विदुर आदि राजा शांतनु की पुत्रवधुओं से जन्मे जैविक पुत्रों का राजा शांतनु से कोई जैव वैज्ञानिकीय संबंध नहीं होने के उपरांत भी, उस समय के तत्कालीन समाज के द्वारा राजा शांतनु के द्वारा पारंपरिक रूप से प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन किये जाने के कारण तत्कालीन सामाजिक मान्यता के अनुसार उक्त तीनों पुत्रों को राजा शांतानु के वंशवाहकों (वंशजों) के रूप में माने जाने की पुष्टि होती है, जबकि धृतराष्ट्र, पांडु तथा विदुर का जैव वैज्ञानिकीय संबंध तो मात्र उनकी माता सत्यवती से था, न कि राजा शांतनु से। अर्थात् जैव वैज्ञानिकीय मान्यता के आधार पर धृतराष्ट्र, पांडु तथा विदुर आदि से सत्यवती का ही रक्त-संबंध था, न कि राजा शांतनु का, क्योंकि उनका जन्म सत्यवती के पूर्व समागमी पुरुष , महर्षि पाराशर से उत्पन्न संतति, व्यास, जिन्हें कृष्णद्वैपायन तथा वेदव्यास आदि नामों से भी जाना जाता था, से हुआ था, लेकिन उक्त तीनों पुत्रों को व्यास के वंश का न मानकर उन पर राजा प्रतीप के पुत्र, राजा शांतनु के कुरु वंश के माने जाने की सामाजिक मान्यता

आरोपित की गई तथा इस तरह उन्हें राजा शांतानु के वंशज पुत्र माने गए, क्योंकि शांतनु का कुरु वंश था, इन्हें राजा शांतनु की वंश-संबद्धता ग्रहण करवायी गई। इसलिए ये तीनों राजा शांतनु के वंशवाहक (वंशज) माने गए।

हिंदुओं के सर्वमान्य ग्रंथ महाभारत, जिसे पंचम वेद के नाम से भी जाना जाता है, में राजा शांतनु के वंश-वृद्धि वृत्तांत के अध्ययन के उपरांत, हिंदुओं में प्रचलित वंश की सामाजिक मान्यता के संदर्भ में यह प्रश्न ही नहीं बनता कि हिंदुओं में प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण में वंश की मान्यता के अनुसार पिता का वंश उसके द्वारा जन्मे जैविक पुत्र से आगे बढ़ता है या जैविक पुत्री से, अपितु कोई जैविक संतति के जन्म हुये बिना भी वंश आगे बढ़ने की सामाजिक मान्यता सिद्ध होती है, जैसा कि महाभारत में राजा शांतनु के वंश के आगे बढ़ने की पौराणिक कथा (कहानी) से प्रमाणित होता है। इनकी द्वितीय पत्नी सत्यवती (मत्स्यगंधा) के जैविक पुत्र, कृष्णद्वैपायन व्यास के जैविक संतति के द्वारा उनके वंश को आगे बढ़ाने की कहानी वर्णित है, जिसमें राजा शांतनु तथा उनकी द्वितीय पत्नी से उत्पन्न चित्रांगद तथा विचित्रवीर्य के कोई भी जैविक संतति नहीं होने के पश्चात् भी, राजा शांतनु की सतत् वंश-वृद्धि होने की कहानी वर्णित है। अर्थात् निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि हिंदू के सर्वमान्य ग्रंथ, महाभारत जिसे पंचम वेद के नाम से जाना तथा माना जाता है, के अनुसार हिंदू समाज की जिन जातियों के द्वारा वंश की पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन किया है, उस जाति के पिताओं को उनके नाम से वंश को आगे बढ़ाने के लिये न तो स्वयं की जैविक पुत्री की आवश्यकता है और न ही किसी जैविक पुत्र की।उनके नाम से वंश को आगे बढ़ाने के लिए उनके वंश की वंश संबद्धता स्वीकार करने वाले किसी पुरुष व्यक्ति की आवश्यकता का होना सिद्ध होता है। यह बात अलग है कि किसी पंथ विशेष के समुदाय के व्यक्तियों को, उनके समुदाय में प्रचलित, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता (पुत्र से ही वंश आगे बढ़ने की बात) को ही माना जाना है। तो यह विषय सत्यानुवेषण का नहीं, अपितु यह लिंग-मतारोपण का विषय हो सकता है, जो एक सामाजिक व्याधि है, जिसका उपचार नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के पालन द्वारा ही संभव है, अन्यथा नहीं।

अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि जिन संततियों का राजा शांतनु से कोई जैव वैज्ञानिकीय संबंध न होने के उपरांत भी उन्हें उनके वंशज मान लिये गए, तो नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार पुत्र के समान ही पुत्री का तो कम-से-कम पुत्र के समान ही उनके माता-पिता से जैव वैज्ञानिकीय संबंध होता है और यदि नहीं भी होता तो क्या, तो भी उसके द्वारा माता अथवा पिता के वंशवाहक (वंशज) के रूप में माने जाने की सामाजिक स्वीकृति या सामाजिक मान्यता दिये जाने के संदर्भ में संकोच या असत्यता क्या है? क्या वर्तमान कालिक हिंदू समाज के द्वारा इस सत्यता को न माने जाने के कारण के रूप में मात्र पुरुषवादी श्रेष्ठता की हठधर्मिता के अतिरिक्त और कोई अन्य उत्तरदायी है? निश्चित तथा निसंदेह रूप से कहा जा सकता है कि इसके लिये सिर्फ और सिर्फ हिंदुओं में प्रचलित पुरुष श्रेष्ठता के भाव से भ्रमित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली ही उत्तरदायी है।

हिंदू समाज की महिलाओं को, हिंदू समाज के पुरुषों के समान संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग किये जाने के उद्देश्य से ही मेरे द्वारा 'नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली' का प्रतिपादन किया गया है। हिंदू समाज के प्रत्येक अनुयायी के द्वारा नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन किये जाना से ही हिंदू पुरुषों के द्वारा हिंदू महिलाओं के साथ लिंग-भेदात्मक व्यवहार किये जाने को लेकर खड़े किये गये प्रश्न का औचित्यपूर्ण, न्याय संगत तथा व्यवहारिक उत्तर है और उनके लिये इस संदर्भ में किये जाने वाले एक अभूतपूर्व प्रायश्चित का व्यवहारिक तथा जीवंत उदाहरण भी स्थापित हो सकता है कि हिंदू समाज के सभी समुदायों एवं संप्रदायों में व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भों तथा प्रसंगों में एक बेटी को बेटे के समान तथा एक महिला को पुरुष समान संपूर्ण सामाजिक समानता के सभी अधिकारों के उपभोग तथा कर्त्तव्यों के निर्वहन करने की सामाजिक मान्यता आधारित संस्कृति विद्यमान है ।

जैव वैज्ञानिकीय तथ्य

यदि जीव विज्ञान के अनुसार वंश के संबंध में माता-पिता, दोनों के DNA के वंशानुगत (पीढ़ी-दर-पीढ़ी) उत्परिवर्तन (Mutation) की वास्तविकता को जानें, तो हमें ज्ञात होता है कि पिता का DNA 5 से 7 पीढ़ियों के पश्चात् पीढ़ी-दर-पीढ़ी उत्परिवर्तन (Mutation) होने के कारण अन्य सभी पिताओं की भांति मात्र एक प्रतिशत अस्तित्व में रहता है। इस कारण प्रथम पीढ़ी के पुरुष पूर्वज के साथ किसी भी प्रकार के वैज्ञानिकीय परीक्षणों के माध्यम से जैव वैज्ञानिकीय संबंध की पहचान करना लगभग असंभव होता है, जबकि माँ से प्राप्त माइटोकांड्रिया के रूप में प्राप्त DNA में यह उत्परिवर्तन (Mutation) पीढ़ी-दर-पीढ़ी लाखों वर्षों में भी मात्र 10% के लगभग होता है। अर्थात्, माँ से प्राप्त माइटोकांड्रिया के रूप में DNA 90% तक (As it is) बिना किसी उत्परिवर्तन (Mutation) के उसकी संततियों को पारित होता रहता है। जिसके कारण विभिन्न जैव वैज्ञानिकीय परीक्षणों के माध्यम से लाखों वर्ष पूर्व वाले मां के जैव वैज्ञानिकीय वंश की पहचान की जा सकती है, लेकिन लाखों वर्ष पूर्व जन्मे पुरुष के वंश की नहीं।

व्यक्तियों को माता-पिता से दो प्रकार के DNA प्राप्त होते हैं - परमाणु DNA तथा माइटोकॉन्ड्रियल DNA (mtDNA) I

परमाणु DNA) और माइटोकॉन्ड्रियल DNA के बीच मुख्य अंतर यह है कि परमाणु DNA कोशिका के नाभिक में पाया जाता है और यह माता-पिता दोनों से 50-50 प्रतिशत प्राप्त होकर उनकी आनुवंशिक जानकारी देता है और यह पाँच से सात पीढ़ियों के उत्परिवर्तित (Mutated) होते-होते इसके मूल DNA का एक प्रतिशत भाग ही शेष बचता है, जबकि माइटोकॉन्ड्रियल DNA, कोशिका के माइटोकॉन्ड्रिया में पाया जाता है और यह केवल माँ से ही उसकी नर एवं मादा संततियों को विरासत में मिलता है। माइटोकॉन्ड्रियल DNA उसकी संततियों को पिता से नहीं मिलता, अपितु यह विशेष DNA माता से ही प्राप्त होता है। परमाणु DNA, 5 से 7 पीढ़ियों के पश्चात् 99% बदल जाता है, वहीं दूसरी ओर माँ से मिलने वाला माइटोकॉन्ड्रियल DNA हजारों लाखों वर्षों में भी मात्र 10% बदलता है, शेष 90% ज्यों-का-त्यों (As it is) उस माँ से जन्म लेने वाली संततियों की पीढ़ियों में स्थानांतरित होता रहता है।अर्थात् , माता की अपने ही संततियों से उसके जैव वैज्ञानिकीय

संबंध (जैविक वंश) की निकटता बनी रहती है, जबकि पिता की ओर से ऐसी जैव वैज्ञानिकीय संबंध की निकटता की पहचान 5-7 पीढ़ियों के बाद 99% समाप्त हो जाती है।

वंश की जैव वैज्ञानिकीय मान्यता के संदर्भ में निष्कर्षत: यह कहा जा सकता है कि माता से उसकी संततियों को माइटोकॉन्ड्रियल कोशिका के कारण ही उससे जन्म लेने वाली संततियों को भोजन ग्रहण करने के पश्चात्, जीवित रहने से लेकर किसी भी कार्य को संपन्न करने के लिये, इसी के होने के कारण ऊर्जा मिलती है। इस संदर्भ में, अमेरिका में स्थित, National Human Genome Institute of America (NHGRI) नामक संस्था के कुछ अनुसंधानों के प्रोजेक्ट से जुड़ी, वैज्ञानिक लिसा एच. चैडविक, पी.एच.डी. (Lisa H.Chadwick, Ph.D.) , संचालक, जीनोम विज्ञान विभाग को उद्धृत किया जाना भी प्रासंगिक होगा - " माइटोकॉन्ड्रियल DNA एक गोलाकार गुणसूत्र है, जो माइटोकॉन्ड्रिया नामक कोशिकांग (Organelle) के अंदर पाया जाता है।कोशिका-द्रव में स्थित माइटोकॉन्ड्रिया, कोशिका के ऊर्जा उत्पादन और चयापचय कार्यों का स्थल है। संतान को माइटोकॉन्ड्रिया के परिणाम स्वरूप माइटोकॉन्ड्रियल DNA अपनी माँ से विरासत में मिलता है। "

अध्याय 7
वंश के जैव वैज्ञानिकीय परिप्रेक्ष्य में पुरुषों में Y क्रोमोजोम की अद्वितीयता के समान महिलाओं के X-क्रोमोजोम में माइटोकांड्रियल DNA की अद्वितीयता का अध्ययन

उक्त लेख 'Why are Mitochondrial and Y Chromosome DNA Good for Detecting Distant Ancestry ?' नामक अंग्रेज़ी शीर्षक का हिंदी अनुवाद – 'माइटोकॉन्ड्रियल और Y-गुणसूत्र DNA दूरस्थ वंशावली का पता लगाने के लिए क्यों अच्छे हैं?' के अंतर्गत 27 सितंबर, 2016 को प्रकाशित हुआ था। इसे यहाँ इस पुस्तक के इस अध्याय की शीर्षक की व्याख्या के संदर्भ में ज्यों-का-त्यों प्रस्तुत किया जा रहा है-

भारत से एक जिज्ञासु वयस्क द्वारा Y-गुणसूत्र तथा माइटोकॉन्ड्रियल DNA के आधार पर वंश की पहचान के विषय में एक प्रश्न पूछा जाता है। वह यह -

'मैंने सुना है कि माइटोकॉन्ड्रियल और Y-क्रोमोज़ोम DNA यह पता लगाने के लिए उपयोगी होते हैं कि दो लोग दूर से संबंधित हैं या नहीं, लेकिन किसी के जैव वैज्ञानिक टीम वंश के बारे में जानने के लिए इस प्रकार के DNA सामान्य DNA से बेहतर क्यों होते हैं? '

आपने बिलकुल सही सुना ! ये दो तरह के DNA बता सकते हैं कि क्या आप और मैं हज़ारों साल पहले के एक ही रिश्तेदार से जुड़े हैं। हमारा बाकी DNA, ऑटोसोमल DNA सिर्फ़ 5 या 6 पीढ़ियों तक ही उपयोगी है।

जैव वैज्ञानिकीय आधार पर वंश या रिश्तेदारी का पता लगाने वाले DNA परीक्षण के समय DNA में होने वाले बदलावों को देखकर काम करते हैं। आपके ज़्यादातर ऑटोसोमल DNA में काफ़ी तेज़ी से बदलाव आते हैं।

दूसरी ओर, माइटोकॉन्ड्रियल DNA (mtDNA) और Y-क्रोमोज़ोम (Y-DNA) का DNA लंबे समय तक एक जैसे ही रहते हैं।इसका मतलब है कि हम इन दोनों DNA का पता समय में और भी पीछे तक लगा सकते हैं।

हालाँकि, Y-DNA और mtDNA आपको सब कुछ नहीं बता सकते। केवल पुरुषों में वाई गुणसूत्र होता है, इसलिए आप केवल अपने पैतृक वंश का पता लगा सकते हैं।और माइटोकॉन्ड्रियल DNA माँ से बच्चे में जाता है, इसलिए यह आपको केवल आपके मातृ पूर्वजों के बारे में ही बता सकता है।

बाकी उत्तर के लिए मैं यह समझाऊँगा कि एक ही जगह के लोगों का DNA, खासकर Y-DNA और mtDNA, एक जैसे क्यों होते हैं और हम DNA में अंतर का उपयोग करके यह कैसे बता सकते हैं कि कोई व्यक्ति कहाँ से आया है।

यदि हम केवल माइटोकॉन्ड्रियल DNA और Y-DNA को देखें तो इस परिवार के अधिकांश भाग असंबंधित लग सकते हैं।एक ही क्षेत्र के लोगों का DNA दूर-दराज़ के लोगों की तुलना में ज़्यादा मिलता-जुलता होता है।आप उनके DNA में ये समानताएँ देख सकते हैं।इसका कारण यह है कि उस समय लोग ज्यादा घूमते-फिरते नहीं थे।

कल्पना कीजिये कि एक समूह अफ़्रीका से यूरोप जाता है और वहीं बस जाता है।दरअसल, यही लगभग एक लाख साल पहले हुआ था और यही वह जगह है, जहाँ से सभी मूल यूरोपीय आए थे।

लंबे समय तक, शायद ही कोई और वहाँ आया।सभी का DNA उन्हीं मूल खोजकर्ताओं से आया था, तो यह आपके परिवार जैसा ही है, लेकिन बहुत बड़े पैमाने पर ।

अगर बस इतना ही होता, तो शायद किसी के DNA से उसकी वंशावली का पता लगाना काफ़ी न होता।हर किसी का DNA बहुत ज़्यादा एक जैसा होता।आपको एक और चीज़ की ज़रूरत है-नये DNA अंतर, जो एक क्षेत्र में दिखाई देते हैं और दूसरे में नहीं।

समय के साथ DNA में परिवर्तन

अफ्रीका और यूरोप के लोगों के बीच का अंतर इस बात से जुड़ा है कि हमारा DNA समय के साथ बदल सकता है और बदलता भी है।ज़्यादा नहीं, लेकिन इतना ज़रूर कि उसे ट्रैक किया जा सके।

अपने DNA को एक बहुत लंबी किताब की तरह समझिए। सदियों पहले, प्रिंटिंग प्रेस के आविष्कार से पहले, मठों में भिक्षुओं द्वारा किताबों की हाथ से नकल की जाती थी, और नकल करते समय भिक्षु कभी-कभी गलतियाँ भी कर देते थे।

कल्पना कीजिए कि एक भिक्षु एक नया मठ स्थापित करने के लिए निकलता है और इनमें से एक त्रुटि वाली पुस्तक ले जाता है।अब उस मठ की हर पुस्तक में वही त्रुटि होगी।

इस भिक्षु द्वारा नकल की जा रही पांडुलिपि में की गई कोई भी गलती नई किताब की सभी प्रतियों में भी दिखाई देगी।यही बात हमारे DNA और आने वाली पीढ़ियों पर भी लागू होती है।

DNA के साथ भी यही होता है। आपके शरीर में DNA की प्रतिलिपि बनते समय उसमें गलतियाँ हो सकती हैं और होती भी हैं, और ये " गलतियाँ " , जिन्हें उत्परिवर्तन (Mutation) कहते हैं, आने वाली पीढ़ियों को हस्तांतरित हो जाती हैं।

अगर यूरोप में किसी पुस्तक की प्रतिलिपि बनाते समय कोई भिक्षु कोई गलती करता है, तो उस पुस्तक की उस समय से सभी यूरोपीय प्रतियों में वही गलती होगी, लेकिन ये गलतियाँ शायद अफ्रीका के भिक्षुओं द्वारा की गई गलतियों से अलग होंगी, उदाहरण के लिए।

अगर किसी पुरातत्वविद् को इनमें से कोई किताब मिल जाए, तो वह उस मठ का पता लगा सकेगा जहाँ से वह आई थी। अगर उसमें अफ़्रीकी भिक्षु वाली गलती है, तो वह अफ़्रीका से आई है, और अगर उसमें यूरोपीय गलती है, तो वह यूरोप से आई है।

DNA के साथ भी यही बात है। जिन लोगों के पूर्वज दुनिया के एक ही हिस्से से हैं, उनके DNA में एक जैसी " गलतियाँ " होने की संभावना ज़्यादा होती

है, और हम इन गलतियों को देखकर पता लगा सकते हैं कि आप कहाँ से हैं।

Y-DNA और mtDNA के साथ पीछे मुड़कर देखना यह सब तो ठीक है, लेकिन आप Y-गुणसूत्र और माइटोकॉन्ड्रिया से DNA का पता बाकी DNA की तुलना में अधिक समय पहले क्यों लगा सकते हैं?

इसका कारण पुनर्संयोजन नामक प्रक्रिया से जुड़ा है । यह मूलतः DNA में कुछ फेरबदल है, जो तब होता है, जब DNA माता-पिता से बच्चे में स्थानांतरित होता है।आपके सभी DNA में हर पीढ़ी में फेरबदल होता है... माइटोकॉन्ड्रिया और Y-गुणसूत्रों को छोड़कर।

आइये अपने भिक्षु की पुस्तक पर वापस चलते हैं। वास्तविकता के ज़्यादा करीब यह होगा कि भिक्षु के पास हमेशा पुस्तक की दो प्रतियाँ हों, शायद एक में गलती हो और एक में नहीं और अगले मठ को देने से पहले, वह उनमें से प्रत्येक से पन्ने निकालकर एक नई पुस्तक तैयार करता है।

उदाहरण के लिए, वह किताब का पहला भाग लेकर उसे दूसरे भाग के साथ मिला सकता है या शायद पहली किताब से सिर्फ़ पहला अध्याय और बाकी दूसरी किताब से या फिर कोई और संभावित संयोजन।

पुनर्संयोजन को इस तरह समझें, जैसे कि इनमें से दो किताबों से अध्याय लेकर एक नई किताब बनाई जा रही हो।

ठीक है, तो अब आपके पास एक किताब है जिसमें गलती हो भी सकती है और नहीं भी, तो इस पन्ने के फेरबदल की वजह से, कई बार आप यह नहीं बता पाते कि किताब यूरोपीय मठ से आई है, हालाँकि वह यूरोपीय मठ से आई थी।

इंसानों में भी ऐसा ही होता है।हमारा DNA 23 जोड़ी गुणसूत्रों में बँटा होता है। हर जोड़ी में से एक आपको माँ से और दूसरा पिता से मिलता है।

इससे पहले कि आप अपना DNA अपने बच्चे को दें, एक जोड़ी में दो गुणसूत्रों के बीच DNA की अदला-बदली होती है। यह पीढ़ी दर पीढ़ी होता रहता है।

जैसा कि आप सोच सकते हैं, समय के साथ DNA का पता लगाना मुश्किल होता जाता है।हमारे DNA के केवल दो हिस्से हैं, Y क्रोमोसोम और माइटोकॉन्ड्रियल DNA, जो ऐसा नहीं कर पाते।

केवल पुरुषों में ही Y-गुणसूत्र होते हैं, इसलिए वे बिना किसी अदला-बदली के पिता से पुत्र में स्थानांतरित होते हैं। माइटोकॉन्ड्रियल DNA के साथ भी ऐसा ही है, जो बिना किसी पुनर्संयोजन के माँ से बच्चे में स्थानांतरित होता है।

नाभिकीय DNA सभी पूर्वजों से विरासत में मिलता है, जबकि mtDNA मां के ही जैव विज्ञानकीय वंश से विरासत में मिलता है।

यही कारण है कि हम इनमें से प्रत्येक को अतीत में इतनी दूर तक खोज सकते हैं।इनमें वे छोटी-मोटी गलतियाँ तो होती हैं, जिनकी हम बात कर रहे थे, लेकिन समय के साथ पुनर्संयोजन के कारण ये विकृत नहीं होतीं, लेकिन जिस तरह से ये विरासत में मिलते हैं, उसके कारण माइटोकॉन्ड्रिया और Y-गुणसूत्र आपको पूरी कहानी नहीं बता सकते।

बिल्ली की खाल उतारने के एक से ज़्यादा तरीके Y-DNA और mtDNA वंशावली से जुड़े सवालों के जवाब देने के लिए काफी अच्छे हैं, लेकिन इनकी कुछ सीमाएँ भी हैं।

Y-DNA और mtDNA की एक कमी यह है कि वे पीढ़ियों के बीच कैसे हस्तांतरित होते हैं।

चूँकि Y-गुणसूत्र पिता से पुत्र में स्थानांतरित होता है, इसलिए आप केवल पैतृक पूर्वजों के बारे में ही जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। एक पुत्र अपने Y-DNA का पता अपने पिता, अपने पिता के भाइयों, अपने पिता के भाई के पुत्र तक लगा सकता है, और फिर अपने पिता के पिता, अपने भाइयों, पुत्रों, पोतों आदि तक लगा सकता है।

लेकिन वह Y-गुणसूत्र से अपनी माँ के वंश के बारे में कुछ नहीं जान पाता, और न ही अपने पिता की माँ के वंश के बारे में, वगैरह। Y-DNA के माध्यम से उसके जीव विज्ञानकीय वंश का एक बड़ा हिस्सा पूरी तरह से अदृश्य है।

माइटोकॉन्ड्रियल DNA भी ऐसा ही है क्योंकि यह माँ से बच्चे में जाता है।इसलिए माइटोकॉन्ड्रियल DNA देखकर आपको केवल अपनी माँ, मातामही (नानी) , प्रमातामही (परनानी) आदि के बारे में ही जानकारी मिल सकती है।

इसके अलावा, इस प्रकार के DNA यह पता लगाने के लिये उतने उपयोगी नहीं होते कि लोग आपस में निकट संबंधी हैं, जैसे माता-पिता और उनके बच्चे, या भाई-बहन।बहुत से लोगों में इस प्रकार के DNA के समान संस्करण पाये जाते हैं।

अच्छी खबर यह है कि ऐसे और भी DNA टेस्ट हैं, जो इस काम में कहीं बेहतर हैं।ये टेस्ट ऑटोसोमल DNA नामक एक तकनीक का प्रयोग करते हैं, जो X और Y के अलावा बाकी 22 जोड़ी गुणसूत्रों का एक समूह होता है, और इस ऑटोसोमल DNA का इस्तेमाल वंशावली जानने के लिए भी किया जा सकता है।आपको बस DNA में कई जगहों पर नज़र डालनी होगी।

लेखक: फियोना टैम्बुरिनी

जब यह उत्तर 2016 में प्रकाशित हुआ था, तब फियोना आनुवंशिकी विभाग में Ph.D. की छात्रा थीं और अमी भट्ट की प्रयोगशाला में मनुष्यों और सूक्ष्मजीवों के बीच आनुवंशिक अंतःक्रियाओं का अध्ययन कर रही थीं।उन्होंने यह उत्तर स्टैनफोर्ड एट द टेक' कार्यक्रम में भाग लेते हुए लिखा था।

उक्त लेख के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि यदि पुरुष Y DNA रखने के संदर्भ में महिलाओं की अपेक्षा अद्वितीय है, तो महिला भी X-क्रोमोज़ोम के माध्यम से उसकी नर एवं मादा संतति को माइटोकॉन्ड्रियल DNA स्थानांतरित करने के संदर्भ में पुरुष की अपेक्षा अद्वितीय है।

महिला और पुरुष के मध्य जैविक समानताएं अधिक हैं तथा जैविक असमानताएँ बहुत कम हैं। इन दोनों के मध्य जो जैविक असमानताएँ हैं, वे असमानताएं मात्र प्रजनन के माध्यम से संबंधित प्राणी की प्रजाति को बनाये रखने के उद्देश्य हैं। ऐसा इस उद्देश्य से नहीं कि महिला एवं पुरुष या नर एवं

मादा में से कौन श्रेष्ठ है अथवा कौन हीन या उनमें से कौन शक्तिशाली है अथवा कौन कमज़ोर।

इन असमानताओं के आधार पर यह नहीं कहा जा सकता कि पुरुष, महिला से श्रेष्ठ या शक्तिशाली है या महिला, पुरुष से। इन कुछ जैविक भिन्नताओं के बिना न तो पुरुष अपने आप संतान उत्पन्न कर सकता है और न ही कोई महिला।

पुरुष और महिला के मध्य सामाजिक रूप से जो लिंग भेदात्मक असमानताएँ दिखाई देती है।वे कुछ पुरुषों द्वारा निर्मित की गई हैं, प्रकृति अथवा जीव-विज्ञान के द्वारा नहीं।

नोट: उपरोक्त अध्याय में प्रस्तुत जानकारी इंटरनेट सर्च द्वारा प्राप्त The Tech Interactive वेबसाइट के एक आलेख (https://www.thetech.org/ask-a-geneticist/articles/2016/mtdna-and-y-dna-ancestry/) से ली गई है।

अध्याय 8
वंश की सामाजिक प्रणाली तथा धार्मिक (पंथगत) मान्यताओं के मध्य अंतर की समझ

वंश की विभिन्न दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं को वंश की स्वस्थ सामाजिक मान्यताओं से प्रतिस्थापित किये जाने के पूर्व सामाजिक तथा धार्मिक (पंथगत) मान्यताओं के मध्य अंतर को जानना-समझना अति आवश्यक है, ताकि लोग दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं को धार्मिक (पंथगत) मान्यता होने के भ्रम से बाहर निकाल कर, वंश की दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं को वंश की स्वस्थ सामाजिक मान्यताओं से प्रतिस्थापित कर सकें।

वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियाँ किसी धर्म (पंथ) विशेष के पालन किये जाने के संदर्भ में प्रतिपादित नहीं की गई थीं और न कभी की जाती हैं, अपितु समाजशास्त्र के अनुसार वंशानुक्रम या वंश की सामाजिक प्रणाली, जिसे अंग्रेजी में 'Descent' कहते हैं, किसी धर्म या पंथ की मूलभूत मान्यता नहीं होती, अपितु इसका तात्पर्य सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से किसी समाज विशेष के समुदाय की सामाजिक मान्यता प्राप्त सामाजिक प्रणाली से है, जिसमें माता-पिता के माध्यम से नातेदारी संबंधों का पता लगाया जाता है।अर्थात् लोग अपने पूर्वजों से किस प्रकार संबंधित होते हैं।यह सामाजिक संगठनों का मूलभूत पहलू है।विशेष रूप से यह समझने में कि किसी समाज का समुदाय विशेष किस प्रकार परिवार, विरासत तथा सामाजिक समूहों की संरचना करता हैं।वंशानुक्रम का पता एक या दोनों माता-पिता के माध्यम से लगाया जा सकता है और यह सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से समाज के किसी समुदाय विशेष के भीतर समूह की सदस्यता, अधिकार और दायित्व को निर्धारित करने वाली वंश की सामाजिक प्रणाली होती है।

किसी समाज के किसी समुदाय विशेष की कुछ सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए किसी समाज के समुदाय विशेष की सहमति से कुछ सामाजिक मान्यताएँ प्रतिपादित की जाती हैं, ताकि संबंधित समुदाय की, सामाजिक समस्या विशेष का समाधान हो सके।

वहीं 'धार्मिक मान्यताओं' से तात्पर्य किसी सामाजिक समूह विशेष के लोगों की व्यक्तिगत आंतरिक विश्वासों में, कोई अलौकिक शक्ति होने के प्रति आंतरिक पवित्रता के भावों के साथ उक्त शक्ति के प्रति समर्पण तथा संबंधित विश्वासों के अनुकरण की पारंपरिक मान्यता, को धार्मिक मान्यता के रूप में जाना तथा माना जाता है।

सामाजिक तथा धार्मिक मान्यताओं के अंतरों को हम निम्नलिखित बिंदुओं के अंतर्गत समझने का प्रयास करेंगे-

(1) सामाजिक मान्यताएँ समाज के व्यक्तियों की जीवनशैली से संबंधित मान्यताएँ होती हैं, जैसे-भोजन ग्रहण करने के पहले हाथ धोने की परंपरा आदि, जबकि धार्मिक मान्यताओं के अंतर्गत आलौकिक विश्वास के अनुकरण से संबंधित मान्यताएँ होती हैं, जैसे-हिंदुओं के द्वारा सूर्य को 'देवता' समझकर स्तुति करना।

(2) सामाजिक मान्यताएँ समाज की आवश्यकताओं के अनुसार प्रायः बदलती रहती हैं, जबकि धार्मिक (पंथगत) मान्यताएँ प्रायः नहीं बदलती हैं।

(3) एक ही व्यक्ति के द्वारा सामाजिक मान्यताएँ तथा धार्मिक मान्यताएँ साथ-साथ माने जाने के कारण कभी-कभी उनके द्वारा माने जाने वाली सामाजिक मान्यताओं को भी धार्मिक मान्यताएँ मानी जाने लगती हैं, जबकि ऐसा भ्रमित स्थिति में इन्हें धार्मिक मान्यताएँ नहीं मानी जानी चाहिए।

(4) हिंदू समाज की पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं को मानने वाले अधिकतर जातियों के लोगों द्वारा माता-पिता के देहांत के उपरांत सिर मुंडन करावाया जाना भी एक ऐसी ही सामाजिक मान्यता है, जिसे भ्रम वश धार्मिक (पंथगत) मान्यता मानी जाने लगी है।यह हिंदू धर्म (पंथ) की मूलभूत मान्यता नहीं है।इस संदर्भ में नरेंद्र मोदी, जो हमारे देश भारत के 18वे प्रधानमंत्री हैं, जिनकी माँ की मृत्यु होने के उपरांत उन्होंने सिर मुंडन नहीं करवाया था, तो क्या वे हिंदू नहीं हैं ?

(5) किसी भी धार्मिक मान्यता में लिंग-भेदात्मक धार्मिक मान्यता को आंख बंद करके क्यों स्वीकार किया जाना चाहिए।अर्थात एक हिंदू बेटी, महिला होने के आधार पर उसके माता-पिता के देहांत होने के उपरांत, इस धार्मिक

मान्यता के अनुसार वह सिर केश मुंडन नहीं करवा सकती, क्योंकि वह महिला है, यदि वह महिला है , तो क्या वह हिंदू नहीं है ?

किसी हिंदू व्यक्ति की मृत्यु के बाद उनके पुत्रों द्वारा सिर के केश का मुंडन कराये जाने को किसी धार्मिक मान्यता से इसलिये भी नहीं जोड़ा जा सकता, क्योंकि हिंदुओं की आस्था का सबसे पवित्र ग्रंथ वाल्मीकि रामायण या रामचरितमानस जैसे ग्रंथ में राम के पिता राजा दशरथ की मृत्यु के पश्चात् , उनके किसी भी पुत्र के द्वारा सिर के केश का मुंडन नहीं कराया गया, इसलिए इसे सामाजिक मान्यता ही माना जा सकता है, धार्मिक (पंथगत) मान्यता नहीं।

धार्मिक (पंथगत) विश्वास, व्यक्ति की आंतरिक पवित्रता की आस्था की साधना का व्यक्तिगत विषय है, न कि सार्वजनिक। इसमें स्वयं के अतिरिक्त किसी अन्य व्यक्ति, जैसे-पुत्र-पुत्री, भाई-बंधु या अन्य किसी की सहभागिता वांछनीय हो सकती है, अनिवार्य नहीं।तो फिर माता या पिता की मृत्यु उपरांत, सिर केश मुंडन करवाये जाने जैसी धार्मिक मान्यता का क्या औचित्य है ?

सामाजिक मान्यताएँ ऐसी हों, जो व्यक्ति के जीते जी तथा उसकी मृत्यु के पश्चात् भी लोगों की जीवन शैली में सम्मिलित होकर उनकी सामाजिक समस्याओं के हल करने में सहायक हों तथा उसकी मृत्यु के उपरांत भी उसकी मानवीय गरिमा को ऐतिहासिक रूप से स्थापित करती हों, जिनमें कोई लिंग-भेद न हो।सिरकेश मुंडन जैसी धार्मिक मान्यता हिंदू धर्म की मूल मान्यता नहीं है और यह मान्यता व्यक्ति के जीवन से संबंधित किसी भी समस्या के समाधान में सार्थक नहीं है।

(6) सामान्यत: एक समान कई सामाजिक मान्यताओं को भिन्न धार्मिक समुदायों के लोगों के द्वारा भी माना जाता है, जबकि धार्मिक मान्यताएँ धार्मिक समुदाय विशेष के लोगों द्वारा ही मानी जाती हैं, जैसे-सामाजिक मान्यता के माने जाने के तौर पर वृद्ध लोगों के नाम से संबोधित करने के लिए उनके नाम के पूर्व या पश्चात् कोई आदर सूचक अथवा संबंध सूचक शब्दों का प्रयोग किये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन करना।

यदि संक्षेप में दोनों के मध्य अंतर को जानें, तो निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में, पुरुष अथवा महिला को

संपूर्ण सामाजिक समानता आधारित जीवन जीने के लिये सामाजिक तो क्या, अपितु किसी भी मनुष्यकृत सामाजिक या धार्मिक कुमान्यता को परिवर्तित अथवा किसी स्वस्थ मान्यता से प्रतिस्थापित किया जा सकता है।

अध्याय 9
वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों के प्रकार

सामाजिक संदर्भ में या समाजशास्त्र में वंश (Lineage/ Descent) का अर्थ ऐसे व्यक्तियों का एक ऐसा समूह, जिसके सभी व्यक्ति एक ही सामान्य पूर्वज, जो सामान्य रूप से ज्ञात तथा कभी किसी अज्ञात या किसी पौराणिक व्यक्ति से अपनी वंशावली को जोड़ते हैं, जो रिश्तेदारी के मजबूत बंधन, साझा पहचान और अक्सर एक ही कुल या गोत्र का हिस्सा होने की भावना पैदा करता है, जो सामाजिक संरचना और दायित्वों को निर्धारित करता है।

समाजशास्त्र के अनुसार वंशानुक्रम या वंश की सामाजिक प्रणाली, जिसे अंग्रेजी में 'Descent' कहते हैं, किसी धर्म या पंथ की मूलभूत मान्यता नहीं होती, अपितु इसका तात्पर्य सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से, किसी समाज विशेष के समुदाय की सामाजिक मान्यता प्राप्त प्रणाली से है, जिसमें माता-पिता के माध्यम से नातेदारी संबंधों का पता लगाया जाता है।अर्थात् , लोग अपने पूर्वजों से किस प्रकार संबंधित होते हैं, यह सामाजिक प्रणाली आधारित सामाजिक संगठनों का मूलभूत पहलू है और विशेष रूप से यह समझने में कि किसी समाज का समुदाय विशेष परिवार, विरासत तथा सामाजिक समूहों की संरचना कैसे करता है। वंशानुक्रम का पता एक या दोनों माता-पिता के माध्यम से लगाया जा सकता है और यह सांस्कृतिक पारंपरिक) रूप से समाज के किसी समुदाय विशेष के भीतर समूह की सदस्यता, अधिकार और दायित्व को निर्धारित करने वाली वंश की सामाजिक प्रणाली होती है।

सांस्कृतिक रूप से (पारंपरिक) हिंदू समाज की कीर जाति भी इसके अस्तित्व के आदि से ही वंश की पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करती आई है, जैसा कि इसके सांस्कृतिक अध्ययन से ज्ञात होता है।

हम यहाँ वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों की विशेषताओं तथा उनकी सामाजिक मान्यताओं के आधार पर उन्हें समझने का प्रयास करते हैं -

(1) **पितृवंशीय वंश (Patrilineal descent)** -वंश की इस प्रकार की सामाजिक प्रणाली में, एक दांपत्य जोड़े से जन्मी सभी संततियाँ पिता के वंश की ही मानी जाती हैं तथा ऐसे जोड़े से पुत्र का जन्म होने पर ही पिता के वंश की अभिवृद्धि मानी जाती है।

(2) **मातृवंशीय वंश (Matrilineal descent)** - वंश की इस प्रकार की सामाजिक प्रणाली में, एक दांपत्य जोड़े से जन्मी सभी संततियाँ माता के वंश की ही मानी जाती हैं तथा ऐसे जोड़े से

पुत्री का जन्म होने पर ही माता के वंश की अभिवृद्धि मानी जाती है।

(3) **उभय वंशीय वंश (Ambilineal or Cognatic descent)** - वंश की इस प्रकार की सामाजिक प्रणाली में, एक दांपत्य जोड़े से जन्मी सभी संततियाँ उनकी इच्छा से लिंग निरपेक्ष आधार पर, पिता या माता के वंश की संबद्धता को चुन सकते हैं। इसमें माता तथा पिता दोनों के ही वंश की अभिवृद्धि की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

इस प्रकार की सामाजिक प्रणाली को, संदिग्ध वंश प्रणाली के नाम से भी जाना जाता है क्योंकि एक पत्नी से जन्मी संतति के द्वारा उनकी इच्छा से माता या पिता के वंश की संबद्धता चुनने में, चुनने के पहले तक संदिग्धता बनी रहती है।

(4) **नव उभयवंशीय वंश (New ambilineal descent)** - महिला की सामाजिक गरिमा की पुनर्स्थापना के उद्देश्य से, उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की कुछ सामाजिक मान्यताओं के साथ कुछ नई सामाजिक मान्यताओं को संयोजित करते हुए, उन सामाजिक मान्यताओं को कुल 12 अनुकरणों के रूप में महिला तथा पुरुष को उनके जीवन के किसी भी संदर्भ तथा प्रसंग में उन्हें एक समान स्थिति में, एक समान संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग करने देने की संस्कृति स्थापित करने के उद्देश्य से मेरे द्वारा इसे नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के नाम से 6 मार्च, 2022 प्रतिपादित किया गया।

वंश की इस सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले दांपत्य जोड़े से जन्मी संततियों को माता-पिता की सहमति से या स्वयं की इच्छा से लिंग-भेद रहित आधार पर, माता या पिता के वंश की संबद्धता चुनने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है। इस सामाजिक प्रणाली के अंतर्गत तीन प्रकार की वंश-संबद्धता होती है -

(अ) एकल वंश संबद्धता- जब माता-पिता के दो संतति होती हैं , तो उन संततियों के द्वारा ग्रहण की जाने जाने वाली वंश संबद्धता, एकल वंश-संबद्धता कहलाती है।

(ब) दोहरी वंश संबद्धता-जब किन्हीं माता-पिताओं के एक ही संतति होती है, तो उसे माता तथा पिता दोनों की वंश संबद्धता ग्रहण करनी होती है।ऐसी वंश संबद्धता को 'दोहरी वंश संबद्धता कहा जाता है।

(स) चतुर्वंशीय वंश संबद्धता -विवाह किये जाने वाले लड़के-लड़की अपने-अपने माता-पिताओं की अकेली संतानें हों, तो ऐसी दोहरी वंश संबद्धता ग्रहण करने वाली संतानों के आपसी विवाह के परिणाम स्वरूप, एकमात्र जन्मी संतान होने पर, ऐसी एक मात्र संतान को, पितामह, पितामही, मातामह तथा मातामहीआदि, चारों की वंशों की संबद्धता ग्रहण करने के कारण ऐसी संतानों की वंश संबद्धता 'चतुर्वंशीय वंश संबद्धता कहलाती है। आगे की पीढ़ियों में एक से अधिक संततियों के जन्म होने से इनकी चतुर्वंशीय वंश संबद्धता को 'एकल' या 'दोहरी' वंश संबद्धताओं में परिवर्तित किया जा सकता है।

(5) द्विपक्षीय वंश (Bilateral descent) - वंश की इस प्रकार की सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं के अनुसार, एक दंपत्ति से जन्मी संततियों को एक ही समय में माता एवं पिता दोनों के वंश से संबंधित माना जाता है, जिसका अभ्यास पश्चिमी संस्कृति में देखा जा सकता है।

संतति अपने पिता के पिता और अपनी माँ की माँ से वंश संबंध रखते हैं, लेकिन अपने पिता की माँ या माँ के पिता से नहीं अर्थात् पिता के पुरुष वंशावली तथा माता की मातृ-वंशावली से किसी व्यक्ति के वंश का पता लगाने की सामाजिक मान्यता का पालन करते हैं।

(6) **समांतर वंश (Parallel descent) -** यह वंश की सामाजिक प्रणाली का एक बहुत ही दुर्लभ है रूप है, जहाँ वंश रेखाएं लिंग विशिष्ट होती हैं, अर्थात् पुरुष का वंश उनके बेटों में संचारित होता है और माता का वंश उनकी बेटी में संचारित होता है।

(7) **क्रॉस या वैकल्पिक वंश (Cross or alternate descent) -** यह भी वंश की एक सामाजिक प्रणाली का एक रूप है, जहाँ पिता का वंश बेटियों से आगे बढ़ता है और माता का वंश पुत्र से आगे बढ़ने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

विश्व के विभिन्न समाजों में वंश की उपरोक्त सामाजिक प्रणालियों के अतिरिक्त कुछ और भी सामाजिक प्रणालियों का प्रचलन हो सकता है।

अध्याय 10
पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति का पश्चिमी इतिहास

अमेरिका की प्रसिद्ध नारीवादी लेखिका गेर्डा लर्नर (Gerda Lerner) के अनुसार उनका मानना है कि प्राचीन निकट पूर्व में पितृसत्ता का निर्माण एक घटना के बजाय लगभग 3100 ईसा पूर्व से 600 ईसा पूर्व तक 2500 वर्षों की अवधि में हुआ था।

पितृसत्ता अपने शुरुआती रूप में परिवार की इकाइयों से मिलकर पुरातन राज्य के रूप में सामने आई।उस दौरान राज्यों में मूल्यों, रीति-रिवाज़ों, कानूनों, सामाजिक भूमिकाओं और प्रमुख रूपकों के माध्यम से लैंगिक भूमिकाएँ स्थापित की गईं।तब महिलाओं की कामुकता और उनकी प्रजनन क्षमता को एक वस्तु के नज़रिये से देखा गया, जिसे आदान- प्रदान में इस्तेमाल किया जा सके।

अब तक पूरे इतिहास को पुरुषों के नज़रिये से गढ़ा और समझा गया है।इतिहास में हमेशा पुरुष का प्राधान्य और बोलबाला रहा है।जानबूझकर लंबे समय तक महिलाओं के योगदान, उनके एक विशिष्ट नज़रिये और शोषण को हमेशा नाकारा गया है।लंबे समय तक महिलाओं के नज़रिये से वंचित इतिहास ने पितृसत्ता की संरचनाओं को और भी मज़बूत से जड़ करने का काम किया है। इसका नतीजा हमें महिलाओं का पुरुष के अधीन होने की स्थिति के रूप में देखने को मिला है।

महिलाओं के इतिहास के दायरे और महत्व को परिभाषित और विश्लेषण करने की ज़रूरत को गेर्डा लर्नर की कृति 'The Creation of Patriarchy' ने पूरा किया। इन्होंने एक तर्क पर आधारित नारीवाद के क्षेत्र में बेहद महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। उनकी यह रचना पश्चिमी सभ्यता पर आधारित है।ऐतिहासिक विश्लेषण के माध्यम से गेर्डा लर्नर ने महिलाओं की स्थिति को समझने का प्रयास किया। यहाँ लर्नर की इस कृति के ग्यारहवें अध्याय की

व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है जिसमे इतिहास के संदर्भ में क्रम-दर-क्रम महिलाओं की स्थिति का वर्णन दिया गया है।

गेर्डा लर्नर ने महिलाओं की निम्न परिस्थिति की सार्वभौमिकता की संकल्पना को चुनौती देने का काम किया है। विश्व में महिलाओं के निम्न स्तर को सार्वभौमिक मानने का नज़रिया हमें इतिहास में मिलता है, जिसे पुरुषवादी इतिहासकारों द्वारा प्राकृतिक या ईश्वरीय वरदान बनाने का काम किया गया। लर्नर कहती हैं कि पितृसत्तात्मक प्रभुत्व का ऐतिहासिक उद्भव रहा है।इस प्रभुत्व को विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों के अध्ययन के मध्यम से ही समझा जा सकता है।

पितृसत्ता का उदय और इतिहास

पितृसत्तात्मक या पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का उद्दभव पश्चिम में हुआ या पूर्व में यह शोध का विषय हो सकता है या यह सामाजिक प्रणाली पश्चिम वाली समाजों के द्वारा पूर्व से आयातित की गई या पूर्व की समाजों द्वारा पश्चिम से आयातित की गई।इस संदर्भ में यह वैकल्पिक प्रश्न, एक शोध का विषय हो सकता है, लेकिन इसमें कोई दो राय नहीं कि ऐतिहासिक रूप से आज तक किसी न किसी रूप में इसका वैश्विक प्रचलन रहा है और इसमें भी दो राय नहीं कि इसका उद्भव न तो प्राकृतिक है और न जैव वैज्ञानिकीय। इसका उद्भव ऐतिहासिक रहा है, जो मूल रूप से महिलाओं के सर्वांगीण विकास में और कहीं-न-कहीं पुरुषों के सर्वांगीण विकास में भी एक विचारणीय सामाजिक अवरोध रहा है।इसका उद्भव चाहे सोची समझी रणनीति न रही हो, लेकिन आज के लिंग-मतारोपित लोग इसे ऐतिहासिक महत्व का मानकर समाज में स्थापित रखे हुए हैं, जो मूल रूप से महिलाओं के सर्वांगीण विकास के संदर्भ में बेहद चिंता जनक है। इसे उन्मूलित करने की सामाजिक सहमति की प्रतीक्षा किये बिना भी सरकारों के द्वारा कानून बनाकर इसे समाज से त्वरित गति से उन्मूलित किया जा सकता है।

समाज, शिकारी संग्रहकर्ता से कृषि समाज में बदलने लगा। विवाह संबंधों और प्रजनन को बढ़ावा देने के लिये कृषि समाज के लोगों ने अपने घर की महिलाओं को अपनी पारिवारिक और शारीरिक ज़रूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से आदान-प्रदान को बढ़ावा देना शुरु किया।जनजातियों के बीच

संघर्ष चलता था, तो संघर्ष में हारी हुई जनजातियों की महिलाओं को यौन सेवाओं के लिए दास बनाया गया और उनके बच्चों को मेहनत के काम के लिए इस्तेमाल किया जाता था। गेर्डा लर्नर लिखती हैं कि ज़्यादा से ज़्यादा दासों या गुलामों को रखना रईस (अभिजात वर्ग के) पुरुषों और योद्धाओं के लिए एक प्रतिष्ठा का प्रतीक (Status symbol) की बात हुआ करती थी।सबसे पुरानी मानव सभ्यता मेसोपोटामिया में ग़रीब तबके के लोग अपनी बेटियों को कन्या मूल्य (Bride price) पर शादी या वेश्यावृत्ति में बेच देते थे। अगर कोई ग़रीब आदमी क़र्ज़ नहीं चुका पाता था, तो उसकी पत्नी और बच्चों को दास बना लिया जाता था।

उनका यह अध्याय पितृसत्ता के साये में उपजे नस्वालद और लिंगवाद की चर्चा करता है।उस दौरान नस्वालद और लिंगवाद के आधार पर वर्ग-भेद स्थापित किये जाते थे। इतिहास में लगभग सभी व्यवस्थाओं, जैसे-पुरातन, सामंती समाज, 19वीं सदी के यूरोपीय बुर्जुआ और उपनिवेशी व्यवस्था में दास समाज का अस्तित्व था।इन सभी व्यवस्थाओं में हाशिये की महिलाओं, जिन्हें दास बनाया गया था, उनकी कामुकता और प्रजनन क्षमता के वस्तुकरण (Commodification) का प्रमाण दिखाई पड़ता है।

उस समय समाज में भी महिला और पुरुष दोनों लिंगों में वर्ग देखने को मिलते हैं।इन दोनों लिंगों के तहत इन वर्गों की प्रकृति समाज में इनकी ज़रूरत पर आधारित हुआ करती थी। पुरुषों के वर्ग उत्पादन के साधनों पर आधारित थे और महिलाओं के वर्ग, यौन संबंधों पर आधारित थे।महिलाओं का वर्ग स्वतंत्रता के अलग-अलग स्तर के अनुसार हुआ करता था, जैसे - दास महिलाएँ, दास उपपत्नियाँ और मुक्त उपपत्नियाँ।ज़्यादातर महिलाएँ पुरुषों की सुरक्षा पर निर्भर थीं।स्वतंत्र और स्वावलंबी महिलाओं की संख्या न के बराबर थी।

उनकी किताब के इस 11वें अध्याय में पुरातन समाज की एक और विशेषता हमें यह देखने को मिलती है कि यहाँ समाज के संसाधनों को परिवार के पुरुष मुखिया को दिया जाता था और पुरुष मुखिया उन संसाधनों को अपने परिवार में बांटा करता था। इस तरह की जो परिवार की संरचना थी, वह राज्य की व्यवस्था को भी दर्शाती है, जिसका स्वरूप पितृसत्तात्मक था।इस व्यवस्था को 'पितृसत्तात्मक प्रभुत्व' कहा जाता है।परिवार में वर्ग वंशानुक्रम लिंग के आधार पर हुआ करता था। जैसे - छोटे लड़के अस्थायी रूप से

अधीनस्थ रहते थे और वहीं लड़कियाँ और महिलाएँ पूरे जीवनभर के लिए अधीनस्थ रहती थीं।विवाह के बाद भी बेटियों की स्थिति निम्न ही बनी रहती थी।गेर्डा लर्नर इस बात की ओर ज़ोर देती दिखाई पड़ती हैं कि लंबे समय तक महिलाओं को यह विश्वास दिलाया गया है कि उनका कोई इतिहास नहीं है।पुरुष प्रधान इतिहास की छाया में ऐसी कोई परंपरा नहीं थी, जो महिलाओं की स्वतंत्रता और स्वायत्तता की पुष्टि कर सके।

पुरुष समाज के अन्य लोगों के साथ मिलजुल कर अपनी पहचान बना सकते थे, लेकिन महिलाओं की स्थिति पुरुषों के अधीन ही बनी हुई थी।वे बचपन से ही पारिवारिक संरचनाओं से जुड़ी होती थीं।यह सोच इन महिलाओं के लिए एकजुट होने को असंभव बना देती थी।अगर महिलाएँ परिवार की प्रतिष्ठा या इज़्ज़त के खिलाफ़ जाकर कोई काम को अंजाम दे देती थीं, तो ऐसी महिलाओं को सज़ा देने या उनकी हत्या तक करने में अक्सर परिवार की अन्य महिलाएँ भी साथ दिया करती थीं।

धर्म और पितृसत्ता

पुरातन समाज की धार्मिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण करते हुए गेर्डा लर्नर बताती हैं कि पुरुषों ने ग्रीक दर्शन, यहूदी, ईसाई धर्म और परंपराओं को अपने शब्दों में समझाया है, जो पूरी तरह पुरुषों पर केंद्रित थे।उन्होंने नारी शक्ति को प्रतीकों (Symbols) के रूप में बताया जैसे मातृत्व की देवी, प्रजनन की देवी आदि।वहीं, पुरुषों को शक्तिशाली और आदर्श रूप में चित्रित किया।इसे गेर्डा लर्नर ने 'पुरुष केन्द्रित भ्रांति' (Androcentric fallacy) माना। वह बताती हैं कि महिलाएँ धार्मिक कामों और परंपराओं को बनाए रखने में भाग लिया करती थीं।

औरतें शैक्षिक रूप से वंचित तो थीं ही पर उन अवसरों और परिवेश से भी वंचित थीं, जिनके तहत वे अपनी सोच और विचारों को व्यक्त कर सकें।महिलाओं को अपने विचारों को विकसित करने के लिए शिक्षा, मित्रों और बड़ों के साथ बातचीत और निजी समय की ज़रूरत होती है पर उन्हें इस तरह का माहौल नहीं मिलता था, हालाँकि, पुरुषों पर ऐसी कोई पाबंदी नहीं थी। महिलाओं को केवल बच्चों के पालन-पोषण और परिवार की सेवा

में लगाये रखा जाता था।कुछ महिलाऐं जानबूझकर अकेले या अन्य महिला के साथ रहना चुनती थीं या चाह रखती थीं।ऐसी महिलाओं को हाशिए पर रखा जाता था।

अध्याय 11
पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति पर पश्चिमी तथा भारतीय नारीवादी महिला लेखकों के विचारों का अध्ययन

पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति पर पश्चिमी लेखक के विचारों को अमेरिका की प्रसिद्ध नारीवादी गेर्डा लर्नर की महान कृति - पितृसत्ता का निर्माण (The Creation of Patriarchy) के 11 वे अध्याय को संदर्भित करते करते हुए, मैं यदि उनके शोध आधारित निष्कर्षों पर चर्चा करूं तो, गेर्डा लर्नर उनकी इस पुस्तक में तर्क देती है कि ऐतिहासिक रूप से महिलाओं ने महिलाओं के व्यवस्थित दमन में एक बड़ी भूमिका निभाई है, चाहे वह आत्मरक्षा के लिए हो, वर्ग और आधुनिक रूप से " नस्ल " के लाभ प्राप्त करने के लिए हो, या अन्य कारणों से हो।उनका दावा है कि यह संभव है कि महिलाओं ने अपने समाजों में लिंग-आधारित उत्पीड़न शुरु होने से बहुत पहले ही लिंग-भेद वाले कार्यों को स्वीकार कर लिया था।

गेर्डा लर्नर यह भी तर्क देती हैं कि समाजों में स्त्री-द्वेष का व्यापक अस्तित्व पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक या मनोवैज्ञानिक अंतर के कारण नहीं है, बल्कि इसकी ऐतिहासिक व्याख्याएँ हैं।वह कहती हैं कि चूँकि पितृसत्ता की " इतिहास में शुरुआत होती है " , इसलिए इसे " ऐतिहासिक प्रक्रिया द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है। "

पितृसत्ता का निर्माण (The Creation of Patriarchy) , लर्नर द्वारा 1986 में लिखी गई एक गैर-काल्पनिक पुस्तक है, जो प्राचीन मेसोपोटामिया और उसके बाद के पश्चिमी समाजों में स्त्री-द्वेष की उत्पत्ति की व्याख्या करती है।वह उन " छवियों, रूपकों, और मिथकों " का पता लगाती हैं, जो पश्चिमी समाज में पितृसत्तात्मक अवधारणाओं के अस्तित्व को जन्म देते हैं।अब तक पूरे इतिहास को पुरुषों के नज़रिये से गढ़ा और समझा गया है।इतिहास में हमेशा पुरुष का प्राधान्य और बोलबाला रहा है।जानबूझकर लंबे समय तक

महिलाओं के योगदान, उनके एक विशिष्ट नज़रिये और शोषण को हमेशा नाकारा गया है।लंबे समय तक महिलाओं के नज़रिये से वंचित इतिहास ने पितृसत्ता की संरचनाओं को और भी मज़बूत और जड़ करने का काम किया है।इसका नतीजा हमें महिलाओं का पुरुष के अधीन होने की स्थिति के रूप में देखने को मिला है।

लर्नर ने महिलाओं की निम्न परिस्थिति की सार्वभौमिकता की संकल्पना को चुनौती देने का काम किया है। विश्व में महिलाओं के निम्न स्तर को सार्वभौमिक मानने का नज़रिया हमें इतिहास में मिलता है जिसे इतिहासकार द्वारा प्राकृतिक या ईश्वरीय वरदान बनाने का काम किया गया। लर्नर कहती हैं कि पितृसत्तात्मक प्रभुत्व का ऐतिहासिक उद्भव रहा है। इस प्रभुत्व को विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों के अध्ययन के जरिये ही समझा जा सकता है।

किताब के इस अध्याय में हमें पुरातन समाज में पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की उत्पत्ति पर पश्चिमी लेखक गेरडा लर्नर के शोधात्मक तथा तथ्यामिक विचारों से अवगत होने का अवसर मिलता है।

महिलाओं को कैसे खुद को कमतर मानने के लिये किया गया प्रशिक्षित ?

महिलाओं को कैसे खुद को कमतर मानने के लिए किया गया लिंग-मतारोपित (Gender- Indoctrinated) - गेर्डा लर्नर अपनी किताब में बताती हैं कि उस समय महिलाओं के ज़हन और उनके जीवन से जुड़े हर क्षेत्र में पितृसत्ता के विचार को और अधिक गहरा करने के लिए 'लिंग-मतारोपण' (Gender- indoctrination) की सहायता ली जाती थी।लिंग-मतारोपण महिलाओं पर विचारों या विश्वासों को थोपने (आरोपित करने) के इरादे को संदर्भित करता है।यह इस विचार पर आधारित है कि लिंग मानदंडों और रूढ़िवादी सोच को पूरा करने के लिए महिलाएँ कैसी होनी चाहिए।उन्हें किस तरह का व्यवहार करना चाहिए और उन्हें कैसे काम करना चाहिए।इसी के साथ शिक्षा की पहुँच महिलाओं तक नहीं थी।इसीलिए उनके साथ आर्थिक और राजनीतिक भेदभाव बड़े स्तर पर किया जाता

था।इस तरह मनोवैज्ञानिक रूप से महिलाओं को अपने प्रति हीनता के विचार को अपनाने के लिय उन्हें एक तरह से प्रशिक्षित किया जाता था।

महिलाएँ शैक्षिक रूप से वंचित तो थीं ही, पर उन अवसरों और परिवेश से भी वंचित थीं, जिनके तहत वे अपनी सोच और विचारों को व्यक्त कर सकें।महिलाओं को अपने विचारों को विकसित करने के लिए शिक्षा, मित्रों और बड़ों के साथ बातचीत और निजी समय की ज़रूरत होती है, पर उन्हें इस तरह का माहौल नहीं मिलता था। हालाँकि, पुरुषों पर ऐसी कोई पाबंदी नहीं थी।महिलाओं को केवल बच्चों के पालन-पोषण और परिवार की सेवा में लगाए रखा जाता था। कुछ महिलाएँ जानबूझकर अकेले या अन्य महिला के साथ रहना चुनती थीं या चाह रखती थीं। ऐसी महिलाओं को हाशिए पर रखा जाता था।

महिला लेखकों और कलाकारों के काम को पुरुष इतिहासकारों ने लगातार किनारे किया, लेकिन वे फिर भी काम करती रहीं जिनके काम का मौजूदा दौर में तेजी से मूल्यांकन किया जा रहा है।ऐसी औरतें अक्सर उस परंपरा के खिलाफ होती थीं जो रूपकों, प्रतीकों और मिथकों की एक नई 'महिला भाषा' देते हैं।वह आदम और ईव के जन्म और पतन की बाइबिल की व्याख्या की आलोचना करती हैं और देवी और चुड़ैल के बंटवारे को अस्वीकार करती हैं।पुरुष इतिहास की शुरुआत तीसरी सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व में हुई थी लेकिन ज्यादातर महिलाओं का इतिहास 19वीं सदी से शुरु होता है। इस तरह गेर्डा लर्नर के नारीवादी इतिहास को 'नारीवादी चेतना (Feminist consciousness) ' को पैदा करने में एक ज़रूरी दस्तावेज़ माना है।वह कहती हैं कि महिलाओं जैसी आधी मानव जाति की निम्न स्थिति को प्राकृतिक नहीं माना जा सकता है।

इसी संदर्भ में एंजेला सैनी (Angela Saini) , जो एक विज्ञान पत्रकार और चार पुस्तकों की लेखिका हैं , के विचार-

यह निबंध उनकी नवीनतम कृति, The Patriarchs: How Men Came to Rule' पर आधारित है *, जिसे हाल ही में ऑरवेल पुरस्कार के लिए चुना गया*



*है/ वे*लिखती हैं कि सदियों से लोग पुरुष-प्रधान समाज की उत्पत्ति के बारे में गलत धारणाएँ रखते आए हैं।

1930 में जब लंदन चिड़ियाघर ने घोषणा की कि उसका बबून बाड़ा बंद किया जा रहा है, तो यह खबर सुर्खियों में आ गई।

वर्षों से, 'मंकी हिल', जैसा कि इसे जाना जाता था, खूनी हिंसा और लगातार मौतों का अखाड़ा रहा था।अमेरिकी समाचार पत्रिका टाइम ने इस घटना की रिपोर्ट दी, जो आखिरी बवंडर साबित हुई।बबून कॉलोनी के एक युवा सदस्य, जॉर्ज ने मंकी हिल के सबसे बूढ़े और सबसे बड़े बबून, 'राजा' की एक मादा को चुरा लिया था।एक तनावपूर्ण घेराबंदी के बाद जॉर्ज ने उसे मार डाला।

मंकी हिल ने पशु विशेषज्ञों की पुरुष वर्चस्व की कल्पना पर एक लंबी छाया डाली।इसके हत्यारे प्राइमेट ने उस समय के एक लोकप्रिय मिथक को पुष्ट किया कि मनुष्य स्वाभाविक रूप से पितृसत्तात्मक प्रजाति है।

चिड़ियाघर के दर्शकों को ऐसा लगा जैसे वे हमारे विकासवादी अतीत में झाँक रहे हों, जिसमें स्वाभाविक रूप से हिंसक नर हमेशा कमज़ोर मादाओं को ही शिकार बनाते रहे थे।



सच तो यह है कि मंकी हिल सामान्य नहीं था।इसका विकृत सामाजिक वातावरण बहुत सारे नर बंदरों और दुर्भाग्य से बहुत कम मादाओं के रहने का नतीजा था।दशकों बाद ही इस खोज के साथ कि हमारे सबसे करीबी आनुवंशिक प्राइमेट रिश्तेदारों में से एक, बोनोबो एप्स, मातृसत्तात्मक हैं (भले ही इस प्रजाति के नर बड़े होते हैं) -जीव विज्ञानियों ने यह स्वीकार किया है कि हमारी अपनी प्रजाति में पितृसत्तात्मकता की व्याख्या शायद केवल प्रकृति द्वारा नहीं की जा सकती।

लंदन चिड़ियाघर के मंकी हिल में जो कुछ हो रहा था वह सामान्य नहीं था।



पिछले कुछ वर्षों से, एक मैं अपनी पुस्तक 'The Patriarchs:How Men Came to Rule'के लिए मानव पितृसत्ता की उत्पत्ति को समझने के लिए दुनिया भर में यात्रा कर रही हूँ। मैंने जाना कि पुरुषों को इतनी शक्ति कैसे मिली, इस बारे में कई मिथक और भ्रांतियाँ तो हैं ही, लेकिन सच्चा इतिहास हमें यह भी बताता है कि हम आखिरकार लैंगिक समानता कैसे हासिल कर सकते हैं।

शुरुआत के लिए, खुद को व्यवस्थित करने के मानवीय तरीकों की पशु जगत में वास्तव में कोई समानता नहीं है। 'पितृसत्ता' शब्द, जिसका अर्थ है 'पिता का शासन', यह दर्शाता है कि कैसे पुरुष सत्ता को लंबे समय से परिवार में शुरु से माना जाता रहा है, जहाँ पुरुष अपने घर के मुखिया होते हैं और पिता से पुत्रों को सत्ता हस्तांतरित करते हैं।लेकिन प्राइमेट जगत में, यह बहुत कम देखने को मिलता है।जैसा कि न्यू मैक्सिको विश्वविद्यालय की मानवविज्ञानी **मेलिसा एमरी थॉम्पसन** ने देखा है, प्राइमेट्स में पीढ़ियों के बीच पारिवारिक संबंध हमेशा माताओं के माध्यम से व्यवस्थित होते हैं, पिताओं के माध्यम से नहीं।

पितृसत्ता की उत्पत्ति गलत धारणाओं में छिपी हुई है।

मनुष्यों में भी पितृसत्ता सर्वव्यापी नहीं है। मानवविज्ञानियों ने अमेरिका, अफ्रीका और एशिया में कम से कम 160 मातृसत्तात्मक समाजों की पहचान की है, जहाँ लोग पीढ़ी दर पीढ़ी अपनी माताओं के परिवारों से जुड़े रहते हैं, और विरासत माँ से बेटी को हस्तांतरित होती है।इनमें से कुछ समुदायों में, देवियों की पूजा की जाती है और लोग जीवन भर अपने मां के घर में ही रहते हैं।उदाहरण के लिए, दक्षिण-पश्चिमी चीन के मोसुओ पुरुष अपने बच्चों के बजाय अपनी बहनों के बच्चों की परवरिश में मदद करते हैं।

मातृवंशीय समुदायों में, सत्ता और प्रभाव अक्सर महिलाओं और पुरुषों के बीच बँटा होता है। घाना के मातृवंशीय असांते समुदायों में, नेतृत्व राजमाता और एक पुरुष सरदार के बीच बँटा होता है, जिसके चयन में वह मदद करती है। सन् 1900 में, असांते शासक नाना याआ असांतेवा ने ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध विद्रोह में अपनी सेना का नेतृत्व किया था।

आदि सामाजिक संगठनों के विविध रूप

प्रागैतिहासिक काल में हम जितना आगे बढ़ते हैं, सामाजिक संगठन के उतने ही विविध रूप हमें दिखाई देते हैं। आधुनिक तुर्की के दक्षिणी अनातोलिया में स्थित 9, 000 साल पुराने स्थल चतालहोयुक में, जिसे कभी अपने आकार और जटिलता के कारण दुनिया का सबसे पुराना शहर कहा जाता था, लगभग सभी पुरातात्विक आँकड़े एक ऐसी बस्ती की ओर इशारा करते हैं, जहाँ लोगों के जीवन-यापन में लिंग का कोई खास फर्क नहीं पड़ता था।

स्टैनफोर्ड विश्वविद्यालय के पुरातत्वविद् **इयान होडर**, जिन्होंने 2018 तक कैटलहोयुक रिसर्च प्रोजेक्ट का नेतृत्व किया था, कहते हैं, " पुरातत्वविद ज़्यादातर जगहों पर जहाँ खुदाई करते हैं, वहाँ आपको पुरुष और महिलाएँ दिखाई देते हैं, क्योंकि उनका जीवन अलग-अलग होता है, उनका खान-पान अलग होता है और अंततः उनका आहार भी अलग-अलग होता है, लेकिन कैटलहोयुक में आपको ऐसा बिल्कुल नहीं दिखता। " मानव अवशेषों के विश्लेषण से पता चलता है कि पुरुषों और महिलाओं का आहार एक जैसा था, वे घर के अंदर और बाहर लगभग एक जैसा समय बिताते थे, और एक जैसे काम करते थे। यहाँ तक कि दोनों लिंगों के बीच कद का भी अंतर मामूली था।

महिलाएँ भी अदृश्य नहीं थीं। इस और लगभग उसी समय के अन्य स्थलों की खुदाई से महिला मूर्तियों की भरमार मिली है, जो अब स्थानीय पुरातात्विक संग्रहालयों की अलमारियों में सजी हैं। इनमें सबसे प्रसिद्ध है- चतालहोयुक की बैठी हुई महिला की मूर्ति, जो आज अंकारा के अनातोलियन सभ्यता संग्रहालय में शीशे के पीछे रखी है। इसमें एक महिला को सीधा बैठे हुए दिखाया गया है, उसके शरीर पर उम्र के गहरे निशान हैं और उसके चारों ओर चर्बी की शानदार परतें फैली हुई हैं।उसकी आराम करती हुई



भुजाओं के नीचे दो बड़ी बिल्लियाँ, संभवतः तेंदुए, सीधे आगे देख रही हैं, मानो उसने उन्हें पालतू बना लिया हो।

(कैटलहोयुक की बैठी हुई महिला - एक प्रारंभिक महिला शासक, जिसकी यह मूर्ति अनातोलियन सभ्यता संग्रहालय में संरक्षित है)

जैसा कि हम जानते हैं, चतालहोयुक में अपेक्षाकृत लिंग- भेद रहित वाली जीवनशैली हमेशा के लिए नहीं चली।हज़ारों सालों में, सामाजिक पदानुक्रम धीरे-धीरे इस व्यापक क्षेत्र में फैल गए, जो आधुनिक यूरोप, एशिया और मध्य पूर्व तक फैला हुआ है। हज़ारों साल बाद, प्राचीन एथेंस जैसे शहरों में, पूरी संस्कृतियाँ स्त्री-द्वेषी मिथकों के इर्द-गिर्द विकसित हुईं कि महिलाएँ कमज़ोर होती हैं, उन पर भरोसा नहीं किया जा सकता और उन्हें घर तक ही सीमित रखना सबसे अच्छा है।

बड़ा सवाल यह है *कि ऐसा क्यों*?

मानवशास्त्रियों और दार्शनिकों ने पूछा है कि क्या कृषि, पुरुषों और महिलाओं के बीच शक्ति-संतुलन में निर्णायक मोड़ साबित हो सकती है।कृषि के लिए अत्यधिक शारीरिक शक्ति की आवश्यकता होती है।खेती की शुरुआत भी उसी समय हुई, जब मनुष्यों ने पालतू पशुओं जैसी संपत्ति को रखना शुरु किया।इस सिद्धांत के अनुसार, सामाजिक अभिजात वर्ग का उदय तब हुआ, जब कुछ लोगों ने दूसरों की तुलना में अधिक संपत्ति अर्जित की, जिससे पुरुषों को यह सुनिश्चित करने की प्रेरणा मिली कि उनकी संपत्ति उनके वैध बच्चों को मिले।इसलिए, उन्होंने महिलाओं की यौन-स्वतंत्रता पर प्रतिबंध लगाना शुरु कर दिया।

इसमें समस्या यह है कि महिलाएँ हमेशा से ही कृषि कार्य करती रही हैं।उदाहरण के लिए, प्राचीन यूनानी और रोमन साहित्य में, महिलाओं द्वारा मक्का काटते हुए और युवतियों द्वारा चरवाहे के रूप में काम करने की



कहानियाँ मिलती हैं।संयुक्त राष्ट्र के आँकड़े बताते हैं कि आज भी, दुनिया के लगभग आधे कृषि कार्यबल में महिलाएँ शामिल हैं, और निम्न आय वाले देशों में दुनिया के लगभग आधे लघु-स्तरीय पशुधन-प्रबंधक हैं। दुनिया भर में श्रमिक वर्ग की महिलाएँ और दास महिलाएँ हमेशा से ही भारी शारीरिक श्रम करती रही हैं।

पितृसत्ता की कहानी के लिए और भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि ऐतिहासिक अभिलेखों में लिंग आधारित उत्पीड़न के स्पष्ट प्रमाण मिलने से पहले, लंबे समय तक पौधों और पशुओं को पालतू बनाया जाता रहा।**होडर** बताते हैं, " यह पुराना विचार कि खेती करते ही आपको संपत्ति मिल जाती है और इसलिए महिलाओं पर संपत्ति के रूप में आपका नियंत्रण हो जाता है, गलत है, बिल्कुल गलत। " समय रेखाएँ मेल नहीं खातीं।

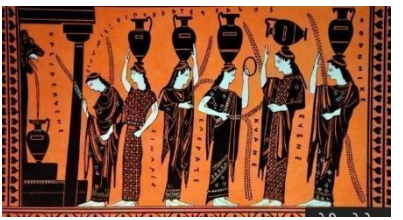
(उरुक से प्राप्त एक मेसोपोटामिया की क्यूनिफॉर्म पट्टिका, जिसमें एक पुरुष आकृति, शिकारी कुत्तों और सूअरों की छाप है।)

महिलाओं के साथ पुरुषों से बिल्कुल अलग व्यवहार किये जाने के शुरुआती स्पष्ट संकेत बहुत बाद में, प्राचीन मेसोपोटामिया के शुरुआती राज्यों में दिखाई देते हैं, जो टिगरिस और फ़रात नदियों के आसपास का ऐतिहासिक क्षेत्र था और जिसे अब इराक, सीरिया और तुर्की कहा जाता है।लगभग 5, 000 साल पहले, दक्षिणी मेसोपोटामिया के सुमेरियन शहर_उरुक की प्रशासनिक पट्टिकाओं से पता चलता है कि वहाँ के शासक जनसंख्या और संसाधनों की विस्तृत सूचियाँ बनाने में बहुत मेहनत करते थे।

येल विश्वविद्यालय के राजनीति विज्ञानी और मानव विज्ञानी जेम्स स्कॉट, जिनका शोध प्रारंभिक कृषि प्रधान राज्यों पर केंद्रित रहा है, बताते हैं, - " सामान्यतः व्यक्ति की शक्ति ही सत्ता की कुंजी है। " इन प्रारंभिक समाजों के अभिजात वर्ग को ऐसे लोगों की आवश्यकता थी, जो उनके लिये अतिरिक्त संसाधन उत्पन्न कर सकें और राज्य की रक्षा के लिए उपलब्ध हों,

यहाँ तक कि युद्ध के समय, ज़रूरत पड़ने पर अपनी जान भी दे सकें।जनसंख्या के स्तर को बनाये रखने से परिवारों पर एक अपरिहार्य दबाव पड़ता था।समय के साथ, युवतियों से अपेक्षा की जाती थी कि वे अधिक से अधिक बच्चे पैदा करें, खासकर ऐसे बेटे, जो बड़े होकर युद्ध के लिए तैयार हों।

राज्य के लिए सबसे महत्वपूर्ण बात यह थी कि हर कोई अपनी भूमिका उसी के अनुसार निभाये, जिस श्रेणी में उसे रखा गया था:पुरुष या महिला।व्यक्तिगत प्रतिभा, ज़रूरतें या इच्छाएँ मायने नहीं रखती थीं।जो युवक युद्ध में नहीं जाना चाहता था, उसे असफल कहकर मज़ाक उड़ाया जा सकता था; जो युवती बच्चे पैदा नहीं करना चाहती थी या मातृत्व नहीं दिखाती थी, उसे अस्वाभाविक कहकर निंदा की जा सकती थी।



जैसा कि अमेरिकी इतिहासकार गेर्डा लर्नर ने लिखा है, उस समय के लिखित अभिलेखों से पता चलता है कि महिलाएँ धीरे-धीरे काम और नेतृत्व की सार्वजनिक दुनिया से गायब होती जा रही थीं, और मातृत्व तथा घरेलू कामों पर ध्यान केंद्रित करने के लिए उन्हें घरेलू कामों की छाया में धकेला जा रहा था।इसके साथ ही पितृस्थानीय विवाह की प्रथा, जिसमें बेटियों से अपेक्षा की जाती है कि वे अपने बचपन के घर छोड़कर अपने पति के परिवारों के साथ रहें, ने महिलाओं को हाशिये पर धकेल दिया और उन्हें अपने ही घरों में शोषण और दुर्व्यवहार का शिकार बना दिया।समय के साथ, विवाह एक कठोर कानूनी संस्था में बदल गया, जिसमें महिलाओं को उनके पति की संपत्ति माना जाता था, जैसे कि बच्चों और दासियों को।

(400 ईसा पूर्व के यूनानी मिट्टी के बर्तनों में दुल्हन के लिये पानी भरती महिलाओं को दर्शाया गया है।)

इतिहास बताता है कि पितृसत्ता की शुरुआत परिवार से नहीं, बल्कि पहले राज्यों में सत्ताधारियों से हुई।ऊपर से उठती माँगें परिवार में भी पहुँचीं,

जिससे सबसे बुनियादी मानवीय रिश्तों में, यहाँ तक कि माता-पिता और उनके बच्चों के बीच के रिश्तों में भी दरार पड़ गई।इसने उन लोगों के बीच अविश्वास का बीज बोया, जिनसे लोग प्यार और सहारे की उम्मीद कर सकते थे।अब लोग अपने और अपने सबसे करीबी लोगों के लिये नहीं जी रहे थे। अब, वे पितृसत्तात्मक राज्य के हितों में जी रहे थे।

बेटों के प्रति प्रेम आज भी पारंपरिक रूप से पितृसत्तात्मक देशों, जिनमें भारत और चीन भी शामिल हैं, की एक विशेषता है, जहाँ इस पूर्वाग्रह के कारण कन्या भ्रूण हत्या की दर इतनी अधिक है कि लिंगानुपात बहुत अधिक असंतुलित हो गया है। 2011 की भारतीय जनगणना के अनुसार, यहाँ प्रति 100 लड़कियों पर 111 लड़के थे, हालाँकि आँकड़े बताते हैं कि बेटियों के पक्ष में सामाजिक मानदंडों में बदलाव के साथ ये आंकड़े सुधर रहे हैं।

पितृसत्तात्मक विवाहों में महिलाओं का शोषण जारी है। जबरन विवाह, जो इसका सबसे चरम रूप है, को अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने 2017 में पहली बार अपने आँकड़ों में आधुनिक दासता का एक रूप बताया था। 2021 के सबसे हालिया अनुमान बताते हैं कि दुनिया भर में 2.2 करोड़ लोग जबरन विवाह में जी रहे हैं।

पितृसत्तात्मक राज्य का स्थायी मनोवैज्ञानिक नुकसान यह था कि उसने अपनी लैंगिक व्यवस्था को सामान्य, यहाँ तक कि स्वाभाविक बना दिया, ठीक उसी तरह जैसे वर्ग और नस्लीय उत्पीड़न को सत्ताधारियों द्वारा ऐतिहासिक रूप से स्वाभाविक बताया गया है। ये सामाजिक मानदंड आज की लैंगिक रूढ़िवादिता बन गए हैं, जिसमें यह विचार भी शामिल है कि महिलाएँ सार्वभौमिक रूप से देखभाल करने वाली और पालन-पोषण करने वाली होती हैं और पुरुष स्वाभाविक रूप से हिंसक और युद्ध के लिए उपयुक्त होते हैं।लोगों को जानबूझकर संकीर्ण लैंगिक भूमिकाओं में सीमित करके, पितृसत्ता ने न केवल महिलाओं, बल्कि कई पुरुषों को भी नुकसान पहुँचाया।इसका उद्देश्य हमेशा केवल शीर्ष पर बैठे लोगों, यानी समाज के अभिजात वर्ग की सेवा करना था।

1920 के दशक में लंदन चिड़ियाघर के मंकी हिल की तरह, यह एक विकृत व्यवस्था है, जिसने अविश्वास और दुर्व्यवहार को बढ़ावा दिया है।दुनिया भर

में लैंगिक समानता के आंदोलन उस सामाजिक तनाव के लक्षण हैं, जिसके साथ मनुष्य सदियों से पितृसत्तात्मक समाजों में जी रहे हैं।जैसा कि राजनीतिक सिद्धांतकार ऐनी फिलिप्स ने लिखा है, **" किसी को भी, आधा मौका मिलने पर, असमानता और अन्याय के बजाय समानता और न्याय को प्राथमिकता देगा। "**

इसी संदर्भ में प्रसिद्ध भारतीय नारीवादी महिला, कमला भसीन (Kamla Bhasin) , जिन्होंने भारतीय समाज में व्याप्त लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से कुछेक पुस्तकों के साथ 'What Is Patriarchy?' नामक पुस्तक प्रश्नात्मक शैली में लिखी गई है, मेरे द्वारा जिसका अध्ययन किये जाने के उपरांत, उनके कुछ विचार यहां वर्णित किए गए हैं। उनके कुछ विचार जानने के पहले उनके यहां दो कथन उद्धृत गए हैं। जैसे- (प्रसिद्ध भारतीय नारीवादी महिला, कमला भसीन)



'ऐसी औरतें भी है, जो दूसरी औरतों के साथ ग़लत करती हैं और ऐसे मर्द भी हैं, जो औरतों के लिये अच्छा करना चाहते हैं।समस्या मर्द होने में नहीं, सोच में है।' तथा

'बलात्कार होता है, तो लोग कहते हैं इस औरत की इज्ज़त चली गई, यह पितृसत्तात्मक सोच है।बलात्कार होता है, तो इज्ज़त औरत की नहीं, मर्द की लुटती है।'

कमला भसीन के द्वारा इस पुस्तक की सभी विषय वस्तुओं को सत्रह प्रश्नों के उत्तर के रूप में वर्णित करके समझाया गया है। उनमें से यहां दो प्रश्नों के उत्तर रेखांकित किये गये हैं । जैसे-

प्रश्न: क्या पितृसत्ता शब्द उस प्रकार के पुरुष वर्चस्व को दर्शाता है, जो हम अपने आस-पास हर समय देखते हैं ?

उत्तर-जी हाँ, आप ऐसा कह सकते हैं।लेकिन यह सिर्फ एक शब्द से कहीं अधिक है:नारीवादी इसे एक अवधारणा के रूप में इस्तेमाल करते हैं, और

अन्य सभी अवधारणाओं की तरह यह हमारी वास्तविकताओं को समझने में सहायक एक उपकरण है। इसे अलग-अलग लोग अलग-अलग तरीकों से परिभाषित करते हैं।नारीवादी मनोवैज्ञानिक जूलियट मिशेल पितृसत्ता शब्द का प्रयोग उन रिश्तेदारी प्रणालियों के संदर्भ में करती हैं जिनमें पुरुष महिलाओं का आदान-प्रदान करते हैं, और इन प्रणालियों के भीतर पिता द्वारा प्रयोग की जाने वाली प्रतीकात्मक शक्ति के लिए करती हैं।उनका कहना है कि यही शक्ति महिलाओं के " हीन " मनोविज्ञान के लिए जिम्मेदार है। सिल्विया वाल्बी अपनी पुस्तक, 'Theorising Patriarchy' में इसे सामाजिक संरचनाओं और प्रथाओं की एक ऐसी प्रणाली कहती हैं, जिसमें पुरुष महिलाओं पर हावी होते हैं, उन्हें दबाते हैं और उनका शोषण करते हैं। जैसा कि मैंने पहले कहा और जैसा कि सिल्विया वाल्बी हमें याद दिलाती हैं, पितृसत्ता को एक प्रणाली के रूप में समझना महत्वपूर्ण है क्योंकि यह हमें जैविक नियतिवाद, जो कहता है कि पुरुष और महिलाएं अपनी जीव विज्ञान या शरीर के कारण स्वाभाविक रूप से भिन्न हैं और इसलिए उन्हें अलग-अलग भूमिकाएँ सौंपी जाती हैं या इस धारणा को खारिज करने में मदद करता है कि प्रत्येक पुरुष हमेशा एक प्रमुख स्थिति में होता है और प्रत्येक महिला एक अधीनस्थ स्थिति में होती है।

इस व्यवस्था से यह विचारधारा जुड़ी हुई है कि पुरुष महिलाओं से श्रेष्ठ हैं, महिलाएं पुरुषों के नियंत्रण में हैं और होनी चाहिए, और महिलाएं पुरुषों की संपत्ति का हिस्सा हैं। उदाहरण के लिए, कुछ दक्षिण एशियाई भाषाओं में पति के लिए स्वामी, शौहर, पति, मालिक जैसे शब्द प्रयोग किए जाते हैं – इन सभी शब्दों का अर्थ " स्वामी " या " मालिक " होता है।

प्रश्न: क्या पितृसत्तात्मक व्यवस्था हर जगह एक जैसी है ?

उत्तर- नहीं, हमेशा नहीं। एक ही समाज के विभिन्न वर्गों में, विभिन्न समाजों में और इतिहास के विभिन्न कालों में इसका स्वरूप भिन्न हो सकता है और होता भी है। मूल सिद्धांत वही रहते हैं, अर्थात् पुरुष ही नियंत्रण में होते हैं, लेकिन इस नियंत्रण का स्वरूप भिन्न हो सकता है।उदाहरण के लिए, हमारी दादी-नानी के समय में पितृसत्ता का अनुभव आज जैसा नहीं था;यह आदिवासी महिलाओं और उच्च जाति की हिंदू महिलाओं के लिए अलग

है;अमेरिका की महिलाओं और भारत की महिलाओं के लिए भी अलग है।प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था या ऐतिहासिक काल में पितृसत्ता के कार्य करने के तरीके और सामाजिक एवं सांस्कृतिक प्रथाओं में भिन्नताएँ देखने को मिलती हैं। हम इस पर विस्तार से थोड़ी देर बाद चर्चा करेंगे, लेकिन इन भिन्नताओं को समझना महत्वपूर्ण है ताकि हम अपनी स्थिति का बेहतर विश्लेषण कर सकें और इससे निपटने के लिए उपयुक्त रणनीतियाँ बना सकें।

इसके पश्चात उक्त पुस्तक में कमला भसीन के द्वारा खड़े किये गये प्रश्नों पर उनके उत्तरों का विश्लेषण किये जाने के पश्चात लिंग-भेद की समझ तथा इसके उन्मूलन के संदर्भ में कुछ निष्कर्ष यहां संक्षेप में उल्लेखित किये जा रहे हैं। जैसे-

(1) पितृसत्तात्मक व्यवस्था में महिलाओं की श्रम शक्ति, प्रजनन क्षमता, कामुकता, गतिशीलता, संपत्ति तथा आर्थिक संसाधन आदि पर पुरुषों का नियंत्रण होता है।

(2) समाज की प्रमुख संस्थाओं के विश्लेषण से पता चलता है कि वे सभी पितृसत्तात्मक प्रकृति की हैं।परिवार, धर्म, मीडिया, कानून पितृसत्तात्मक व्यवस्था आदि पितृसत्तात्मक सोच के स्तंभ हैं। यह सुदृढ़ और गहरी जड़ें जमा चुकी व्यवस्था पितृसत्ता को अजेय प्रतीत कराती है; साथ ही इसे स्वाभाविक भी बनाती है।

(3) अधिकांश आधुनिक धर्म पितृसत्तात्मक हैं, जो पुरुष सत्ता को सर्वोच्च मानते हैं।

(4) परिवार संस्था, जो समाज की मूलभूत इकाई है, संभवतः सबसे अधिक पितृसत्तात्मक है।पुरुष को घर का मुखिया माना जाता है, जो परिवार के भीतर महिलाओं की कामुकता, श्रम, उत्पादन, प्रजनन और गतिशीलता को नियंत्रित करता है।

(5) भारत में धर्म ने राज्य की नीतियों को प्रभावित किया है और अधिकांश समाजों में एक प्रमुख शक्ति बने हुए हैं; दक्षिण

एशिया में उनकी शक्ति और उपस्थिति व्यापक है।उदाहरण के लिए, भारत में, धर्मनिरपेक्ष देश होने के बावजूद, विवाह, तलाक और विरासत के संबंध में किसी व्यक्ति की कानूनी पहचान उसके धर्म द्वारा निर्धारित होती है।

(6) दक्षिण एशिया में हर कानूनी व्यवस्था में पुरुष को घर का मुखिया, बच्चों का स्वाभाविक संरक्षक और संपत्ति का प्राथमिक उत्तराधिकारी माना जाता है।न्यायशास्त्र की व्यवस्था, न्यायपालिका, न्यायाधीश और वकील, अपने दृष्टिकोण और कानून की व्याख्या में अधिकतर पितृसत्तात्मक हैं।

(7) समाज में लगभग सभी राजनीतिक संस्थाएँ, हर स्तर पर, पुरुष प्रधान हैं, ग्राम परिषदों से लेकर संसद तक।राजनीतिक दलों या संगठनों में, जो हमारे देशों का भविष्य तय करते हैं, महिलाओं की संख्या बहुत कम है।जब कुछ महिलाएं महत्वपूर्ण राजनीतिक पदों पर आसीन होती हैं (जैसे सिरिमावो भंडारनाइके, इंदिरा गांधी, बेनजीर भुट्टो, खालिदा जिया) , तो वे कम से कम शुरुआत में कुछ शक्तिशाली पुरुष राजनीतिक हस्तियों के साथ अपने जुड़ाव के कारण ऐसा करती हैं, और वे पुरुषों द्वारा निर्धारित संरचनाओं और सिद्धांतों के भीतर ही कार्य करती हैं। विश्व में एकमात्र ऐसा क्षेत्र होने के बावजूद जहाँ इतनी अधिक महिला राष्ट्राध्यक्ष रही हैं, दक्षिण एशिया में संसद में महिलाओं का प्रतिशत कभी भी और कहीं भी दस प्रतिशत से अधिक नहीं रहा है।

(8) उच्च वर्ग, उच्च जाति के पुरुषों के हाथों में वर्ग और लिंग संबंधी विचारधारा का प्रचार करने के लिए मीडिया बहुत महत्वपूर्ण उपकरण हैं। फिल्मों और टेलीविजन से लेकर पत्रिकाओं, समाचार पत्रों तथा रेडियो तक में, महिलाओं का चित्रण रूढ़िवादी और विकृत है।पुरुष श्रेष्ठता और स्त्री हीनता के संदेश लगातार दोहराए जाते हैं।

(9) कई संस्कृतियों में महिलाओं को व्यवस्थित रूप से धर्मग्रंथों का अध्ययन करने से रोका जाता था, और आज भी बहुत कम ऐसी महिलाएं हैं, जिन्हें धार्मिक और कानूनी ग्रंथों की पुनर्व्याख्या करने की अनुमति है।

(10) यहां तक कि मातृसत्तात्मक समाजों में भी वास्तविक नियंत्रण भाइयों और चाचाओं के हाथों में होता है, लेकिन इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि ऐसी व्यवस्थाओं में महिलाओं का दर्जा अन्य व्यवस्थाओं की तुलना में कहीं अधिक ऊंचा होता है।

(11) कुछ लोगों का मानना है कि पुरुष जन्म से ही प्रभुत्वशाली होते हैं और महिलाएं अधीन रहने के लिए।उनका मानना है कि यह पदानुक्रम हमेशा से मौजूद रहा है और आगे भी रहेगा, और प्रकृति के अन्य नियमों की तरह इसे भी बदला नहीं जा सकता। वहीं दूसरी ओर, कुछ लोग इन मान्यताओं को चुनौती देते हुए कहते हैं कि पितृसत्ता प्राकृतिक नहीं, बल्कि मानव निर्मित है और इसलिए इसे बदला जा सकता है।यह हमेशा से मौजूद नहीं थी, इसकी शुरुआत हुई थी और इसलिए इसका अंत भी हो सकता है।

(12) गेर्डा लर्नर के अनुसार, " परंपरावादी, चाहे वे धार्मिक या 'वैज्ञानिक' ढांचे के भीतर काम कर रहे हों, महिलाओं की अधीनता को सार्वभौमिक, ईश्वर प्रदत्त या प्राकृतिक मानते हैं, इसलिए अपरिवर्तनीय है। जो बचा है, वह इसलिए बचा है क्योंकि वह सबसे अच्छा था; इसलिए यह स्वाभाविक है कि वह वैसा ही रहे। "

(13) जब पुरुषों ने पशुओं को पालतू बनाना शुरू किया, तो उन्होंने गर्भाधान के सिद्धांत को भी समझा।उन्होंने बड़े शिकार के लिए हथियार विकसित किए, जिनका उपयोग बाद में अंतर-समूह लड़ाइयों में भी किया जाने लगा।दास प्रथा का विकास हुआ। पुरुषों ने पशुओं और दासों, विशेषकर महिला दासों को प्राप्त

करना शुरू कर दिया।इससे लिंगों के बीच विभाजन और बढ़ गया।

निष्कर्षत: आम तौर पर, दक्षिण एशिया में बड़ी संख्या में महिला समूह सामाजिक नारीवादी स्थिति को स्वीकार करते प्रतीत होते हैं, अर्थात् पितृसत्ता और वर्ग उत्पीड़न दोनों महत्वपूर्ण हैं, एक दूसरे से संबंधित हैं, और अधिकांश मामलों में, एक दूसरे को मजबूत करते हैं, और महिलाओं को एक साथ पितृसत्ता और वर्ग और जाति के प्रभुत्व की व्यवस्था को चुनौती देनी होगी।

पितृसत्ता के खिलाफ संघर्ष कभी-कभी कितना भी कठिन क्यों न लगे, हमारे स्वभाव में ऐसा कुछ भी नहीं है, जो यह कहे कि हम अलग तरह से नहीं जी सकते।इंसानों द्वारा बनाया गया समाज इंसानों द्वारा ही फिर से बनाया जा सकता है।

अध्याय 12
नारीवाद के विकास के ऐतिहासिक चरणों का अध्ययन

गेर्डा लर्नर के अनुसार पितृसत्ता 2500 सालों के दौरान बनाई गई थी। पितृसत्ता अपने शुरुआती रूप में परिवार की इकाइयों से मिलकर के पुरातन राज्य के रूप में सामने आई। उस दौरान राज्यों में मूल्यों, रीति रिवाज़ों, कानूनों, सामाजिक भूमिकाओं और प्रमुख रूपकों के माध्यम से लैंगिक भूमिकाएं स्थापित की गईं।

अब तक पूरे इतिहास को पुरुषों के नज़रिये से गढ़ा और समझा गया है।इतिहास में हमेशा पुरुष का प्राधान्य और बोलबाला रहा है।जानबूझकर लंबे समय तक महिलाओं के योगदान, उनके एक विशिष्ट नज़रिये और शोषण को हमेशा नकारा गया है। लंबे समय तक महिलाओं के नज़रिये से वंचित इतिहास ने पितृसत्ता की संरचनाओं को और भी मज़बूत और जड़ करने का काम किया है।इसका नतीजा हमें महिलाओं का पुरुष के अधीन होने की स्थिति के रूप में देखने को मिला है।

महिलाओं के इतिहास के दायरे और महत्व को परिभाषित और विश्लेषण करने की ज़रूरत को गेर्डा लर्नर की कृति 'The Creation of Patriarchy' ने पूरा किया। इन्होंने एक तर्क पर आधारित नारीवाद के क्षेत्र में बेहद महत्वपूर्ण योगदान दिया है। उनकी यह रचना पश्चिमी सभ्यता पर आधारित है।ऐतिहासिक विश्लेषण के माध्यम से गर्डा लर्नर ने महिलाओं की स्थिति को समझने का प्रयास किया। यहां लर्नर की इस कृति के ग्यारहवें अध्याय की व्याख्या प्रस्तुत की जा रही है, जिसमे इतिहास के संदर्भ में क्रम-दर-क्रम महिलाओं की स्थिति का वर्णन दिया गया है।

लर्नर ने महिलाओं की निम्न परिस्थिति की सार्वभौमिकता की संकल्पना को चुनौती देने का काम किया है।विश्व में महिलाओं के निम्न स्तर को सार्वभौमिक मानने का नज़रिया हमें इतिहास में मिलता है, जिसे इतिहासकार द्वारा प्राकृतिक या ईश्वरीय वरदान बनाने का काम किया गया।लर्नर कहती हैं कि पितृसत्तात्मक प्रभुत्व का ऐतिहासिक उद्भव रहा है। इस प्रभुत्व को विभिन्न ऐतिहासिक परिस्थितियों के अध्ययन के जरिये ही समझा जा सकता है।

नारीवाद के प्रथम चरण का इतिहास

पितृसत्ता का इतिहास और उदय- गेर्डा के अनुसार पितृसत्ता 2500 सालों के दौरान बनाई गई थी। पितृसत्ता अपने शुरुआती रूप में परिवार की इकाइयों से मिलकर के पुरातन राज्य के रूप में सामने आई। उस दौरान राज्यों में मूल्यों, रीति-रिवाज़ों, कानूनों, सामाजिक भूमिकाओं और प्रमुख रूपकों के माध्यम से लैंगिक भूमिकाएं स्थापित की गईं। तब महिलाओं की कामुकता और उनकी प्रजनन क्षमता को एक वस्तु के नज़रिये से देखा गया, जिसे आदान-प्रदान में इस्तेमाल किया जा सके।

समाज शिकारी संग्रहकर्ता से कृषि समाज में बदलने लगा। विवाह संबंधों और प्रजनन को बढ़ावा देने के लिए कृषि समाज के लोगों ने अपने घर की महिलाओं को अपनी पारिवारिक और शारीरिक ज़रूरतों को पूरा करने के उद्देश्य से आदान-प्रदान को बढ़ावा देना शुरू किया।जनजातियों के बीच संघर्ष चलता था, तो संघर्ष में हारी हुई जनजातियों की महिलाओं को यौन सेवाओं के लिए गुलाम बनाया गया और उनके बच्चों को मेहनत के काम के लिये इस्तेमाल किया जाता था। गर्डा लिखती हैं कि ज्यादा से ज्यादा दासों या गुलामों को रखना रईस पुरुषों और योद्धाओं के लिए एक प्रतिष्ठा के प्रतीक (Status symbol) की बात हुआ करती थी।सबसे पुरानी मानव सभ्यता मेसोपोटामिया में, गरीब तबके के लोग अपनी बेटियों को कन्या मूल्य (Bride price) के नाम पर शादी या वेश्यावृत्ति में बेच देते थे।अगर कोई गरीब आदमी कर्ज़ नहीं चुका पाता था, तो उसकी पत्नी और बच्चों को दास के रूप में घर पर रखा जाता था।

नारीवादी आंदोलन की दूसरी लहर का इतिहास

उनका यह अध्याय पितृसत्ता के साये में उपजे नस्वालद और लिंगवाद की चर्चा करता है।उस दौरान नस्वालद और लिंगवाद के आधार पर वर्ग-भेद स्थापित किये जाते थे। इतिहास में लगभग सभी व्यवस्थाओं जैसे पुरातन, सामंती समाज, 19वीं सदी के यूरोपीय बुर्जुआ और उपनिवेशी व्यवस्था में दास समाज का अस्तित्व था।इन सभी व्यवस्थाओं की हाशिये की महिलायें, जिन्हें दास बनाया गया था, उनकी कामुकता और प्रजनन क्षमता की वस्तुकरण (Commodification) का प्रमाण दिखाई पड़ता है।

उस समय समाज में भी महिला और पुरुष दोनों लिंगों में वर्ग देखने को मिलते हैं। इन दोनों लिंगों के तहत इन वर्गों की प्रकृति समाज में इनकी ज़रूरत पर आधारित हुआ करती थी। पुरुषों के वर्ग उत्पादन के साधनों पर आधारित थे और महिलाओं के वर्ग यौन संबंधों पर आधारित थे।महिलाओं का वर्ग स्वतंत्रता के अलग-अलग स्तर के अनुसार हुआ करता था, जैसे दास महिलाएं, दास उपपत्नियां और मुक्त उपपत्नियां।ज़्यादातर महिलाएं पुरुषों की सुरक्षा पर निर्भर थीं। स्वतंत्र और स्वावलंबी महिलाओं की संख्या न के बराबर थी।

गर्डा इस बात की ओर ज़ोर देती दिखाई पड़ती हैं कि लंबे समय तक महिलाओं को यह विश्वास दिलाया गया है कि उनका कोई इतिहास नहीं है।पुरुष प्रधान इतिहास की छाया में ऐसी कोई परंपरा नहीं थी, जो महिलाओं की स्वतंत्रता और स्वायत्तता की पुष्टि कर सके।

किताब के इस अध्याय में पुरातन समाज की एक और विशेषता हमें यह देखने को मिलती है कि यहां समाज के संसाधनों को परिवार के पुरुष मुखिया को दिया जाता था और पुरुष मुखिया उन संसाधनों को अपने परिवार में बांटा करता था। इस तरह की जो परिवार की संरचना थी, वह राज्य की व्यवस्था को भी दर्शाती है, जिसका स्वरूप पितृसत्तात्मक था।इस व्यवस्था को 'पितृसत्तात्मक प्रभुत्व' कहा जाता है।परिवार में वर्ग वंशानुक्रम 'लिंग' के आधार पर हुआ करता था।जैसे-छोटे लड़के अस्थायी रूप से अधीनस्थ रहते थे और वहीं लड़कियां और महिलाएं पूरे जीवनभर के लिये अधीनस्थ रहती थीं।विवाह के बाद भी बेटियों की स्थिति निम्न ही बनी रहती थी।

नारीवादी आंदोलन की तीसरी लहर का इतिहास

गर्डा अपनी किताब में बताती हैं कि उस समय महिलाओं के ज़हन और उनके जीवन से जुड़े हर क्षेत्र में पितृसत्ता के विचार को और अधिक गहरा करने के लिए 'लिंग मतारोपण' (Gender-indoctrination) की सहायता ली जाती थी।लिंग मतारोपण महिलाओं पर विचारों या विश्वासों को आरोपित (थोपने) के इरादे को संदर्भित करता है।यह इस विचार पर आधारित है कि लिंग मानदंडों और रूढ़िवादी सोच को पूरा करने के लिये महिलाएं कैसी होनी चाहिए। उन्हें किस तरह का व्यवहार करना चाहिए और उन्हें कैसे काम करना चाहिए। इसी के साथ शिक्षा की पहुंच महिलाओं तक नहीं थी।इसीलिए उनके साथ आर्थिक और राजनीतिक भेदभाव बड़े स्तर पर किया जाता था। इस तरह मनोवैज्ञानिक रूप से महिलाओं को अपने प्रति हीनता के विचार को अपनाने के लिये उन्हें एक तरह से प्रशिक्षित किया जाता था।

पुरातन समाज की धार्मिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण करते हुए गर्डा बताती हैं कि पुरुषों ने ग्रीक दर्शन, यहूदी, ईसाई धर्म और परंपराओं को अपने शब्दों में समझाया है, जो पूरी तरह पुरुषों पर केंद्रित थे।उन्होंने नारी शक्ति को प्रतीकों (Symbols) के रूप में बताया जैसे मातृत्व की देवी, प्रजनन की देवी आदि।

गर्डा इस अध्याय में इस बात की ओर ज़ोर देती दिखाई पड़ती हैं कि लंबे समय तक महिलाओं को यह विश्वास दिलाया गया है कि उनका कोई इतिहास नहीं है।पुरुष प्रधान इतिहास की छाया में ऐसी कोई परंपरा नहीं थी जो महिलाओं की स्वतंत्रता और स्वायत्तता की पुष्टि कर सके।पुरुष समाज के अन्य लोगों के साथ मिल-जुलकर अपनी पहचान बना सकते थे, लेकिन महिलाओं की स्थिति पुरुषों के अधीन ही बनी हुई थी।वे बचपन से ही पारिवारिक संरचनाओं से जुड़ी होती थीं।यह सोच इन महिलाओं के लिए एकजुट होने को असंभव बना देती थी।अगर महिलायें परिवार की प्रतिष्ठा (इज़्जत) के खिलाफ़ जाकर कोई काम को अंजाम दे देती थीं, तो ऐसी महिलाओं को सज़ा देने या उनकी हत्या तक करने में अक्सर परिवार की अन्य महिलाएं भी साथ दिया करती थीं।

भारत में कितनी महिलाएं नारीवाद को जानती हैं ?

पुरातन समाज की धार्मिक व्यवस्थाओं का विश्लेषण करते हुए गेर्डा बताती हैं कि पुरुषों ने ग्रीक दर्शन, यहूदी ईसाई धर्म और परंपराओं को अपने शब्दों में समझाया है, जो पूरी तरह पुरुषों पर केंद्रित थे। उन्होंने नारी शक्ति को प्रतीकों (Symbols) के रूप में बताया-जैंसे मातृत्व की देवी, प्रजनन की देवी आदि। वहीं, पुरुषों को शक्तिशाली और आदर्श रूप में चित्रित किया। इसे गर्डा लर्नर ने 'पुरुष केन्द्रित भ्रांति' (Androcentric fallacy) माना। वह बताती हैं कि महिलाएं धार्मिक कामों और परंपराओं को बनाये रखने में भाग लिया करती थीं।

महिलाएं शैक्षिक रूप से वंचित तो थीं ही, पर उन अवसरों और परिवेश से भी वंचित थीं, जिनके तहत वे अपनी सोच और विचारों को व्यक्त कर सकें।महिलाओं को अपने विचारों को विकसित करने के लिये शिक्षा, मित्रों और बड़ों के साथ बातचीत और निजी समय की ज़रूरत होती है, पर उन्हें इस तरह का माहौल नहीं मिलता था। हालांकि, पुरुषों पर ऐसी कोई पाबंदी नहीं थी।महिलाओं को केवल बच्चों के पालन-पोषण और परिवार की सेवा में लगाए रखा जाता था।कुछ महिलाएं जानबूझकर अकेले या अन्य महिला के साथ रहना चुनती थीं या चाह रखती थीं।ऐसी महिलाओं को हाशिए पर रखा जाता था।

महिला लेखकों और कलाकारों के काम को पुरुष इतिहासकारों ने लगातार किनारे किया।लेकिन वे फिर भी काम करती रहीं, जिनके काम का मौजूदा दौर में तेज़ी से मूल्यांकन किया जा रहा है।ऐसी औरतें अक्सर उस परंपरा के खिलाफ होती थीं, जो रूपकों, प्रतीकों और मिथकों की एक नई 'महिला भाषा' देते हैं।वे आदम और ईव के जन्म और पतन की बाइबिल की व्याख्या की आलोचना करती हैं और देवी और चुड़ैल के बंटवारे को अस्वीकार करती हैं। पुरुष इतिहास की शुरुआत तीसरी सहस्त्राब्दी ईसा पूर्व में हुई थी, लेकिन ज्यादातर महिलाओं का इतिहास 19वीं सदी से शुरू होता है। इस तरह गर्डा लर्नर के नारीवादी इतिहास को'नारीवादी चेतना' (Feminist conscious) को पैदा करने में एक ज़रूरी दस्तावेज़ माना है। वह कहती हैं कि महिलाओं जैसी आधी मानव जाति की निम्न स्थिति को प्राकृतिक नहीं माना जा सकता है।

अध्याय 13
लिंग-भेद : महिला की लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत के साथ पुरुषों के द्वारा किया गया एक अप्रत्याशित एतिहासिक षड्यंत्र का परिणाम

यदि लिंग-भेद की सामाजिक अवधारणा को जानने के लिये पश्चिमी जगत की अमेरिकी नारीवादी लेखिका गेर्डा लर्नर के शोधात्मक कृति- 'The Creation of Patriarchy' (पितृसत्ता का निर्माण) की विषय वस्तुओं का अध्ययन करें, तो हम आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुंच सकते हैं कि लिंग-भेद न तो प्राकृतिक है और न जैव वैज्ञानिकीय है, अपितु महिलाओं की प्रकृति प्रदत्त प्रस्थिति के साथ पुरुषों के द्वारा किया गया एक अप्रत्याशित एतिहासिक षड्यंत्र है, क्योंकि महिलाओं को पुरुषों के द्वारा उनके साथ सांस्कृतिक रूप से ऐसे लिंग-भेदात्मक व्यवहार किये जाने वाली संस्कृति स्थापित किये जाने का उन्हें कोई अनुमान नहीं था।

गेर्डा लर्नर इस संदर्भ में आगे उनकी पुस्तक में लिखती हैं तथा तर्क देती हैं कि समाजों में स्त्री-द्वेष का व्यापक अस्तित्व पुरुषों और महिलाओं के बीच जैविक या मनोवैज्ञानिक अंतर के कारण नहीं है, बल्कि इसकी ऐतिहासिक व्याख्याएँ हैं। वह कहती हैं कि चूँकि पितृसत्ता की इतिहास में शुरुआत होती है, इसलिए इसे ऐतिहासिक प्रक्रिया द्वारा समाप्त किया जा सकता है।

गेर्डा लर्नर के अनुसार पितृसत्ता 2500 वर्षों के दौरान बनाई गई थी।पितृसत्ता अपने शुरुआती रूप में परिवार की इकाइयों से मिलकर के पुरातन राज्य के रूप में सामने आई।उस दौरान राज्यों में मूल्यों, रीति-रिवाज़ों, कानूनों, सामाजिक भूमिकाओं और प्रमुख रूपकों के माध्यम से लैंगिक भूमिकाएं स्थापित की गईं।

अब तक पूरे इतिहास को पुरुषों के नज़रिये से गढ़ा और समझा गया है। इतिहास में हमेशा पुरुष का प्राधान्य और बोलबाला रहा है।जानबूझकर लंबे समय तक महिलाओं के योगदान, उनके एक विशिष्ट नज़रिये और शोषण

को हमेशा नकारा गया है।लंबे समय तक महिलाओं के नज़रिये से वंचित इतिहास ने पितृसत्ता की संरचनाओं को और भी मज़बूत और जड़ करने का काम किया है। इसका नतीजा हमें महिलाओं का पुरुष के अधीन होने की स्थिति के रूप में देखने को मिला है।

यदि महिलाओं के साथ इस प्रकार से लिंग-भेद जैसी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं वाली संस्कृति का निर्माण जानबूझकर किया जाना सिद्ध होता है, तो इस निष्कर्ष पर पहुंचना क्यों गलत होगा कि लिंग-भेद महिलाओं की प्रकृति प्रदत्त हैसियत (Status) के साथ पुरुषों के द्वारा किया गया एक अप्रत्याशित एतिहासिक षड्यंत्र है।

अध्याय 14
समाज में प्रचलित लिंग-भेद के लिये धार्मिक (पंथ प्रेरित) सामाजिक तथा पौराणिक मान्यताओं की नकारात्मक भूमिकाओं के दुष्परिणामों का अध्ययन

हम इस अध्याय में, विशेष कर भारतीय हिंदू समाज में प्रचलित लिंग-भेद के लिये उन सभी दोषपूर्ण धार्मिक (पंथ प्रेरित) , सामाजिक तथा पौराणकीय मान्यताओं से परिचित होने का प्रयास करेंगे, जिनके कारण महिलाओं को सांस्कृतिक (परंपरागत) रुप से संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) के साथ जीने के लिये एक सहज संस्कृति आज तक स्थापित नहीं हो सकी है।

इन सामाजिक दोषपूर्ण मान्यताओं को जानने के पहले सामाजिक मान्यताओं को जानना अति आवश्यक है।

समाज के लोगों के द्वारा मन, कर्म तथा से वचन से किसी भी विषय में कुछ भी अच्छा मानकर, किये जाने वाले परंपरागत कृत्य, चाहे उनसे समाज में अच्छा होने की बजाय बुरा ही क्यों न होता रहे, फिर भी अधिकतर लोग ऐसे किये जाने वाले कृत्यों को अच्छी सामाजिक मान्यता समझकर उसका पालन करते हैं।

इनके अभ्यास के विश्लेषणों से ज्ञात होता है कि ये दो प्रकार की होती हैं-

(1) **उपयोगी सामाजिक मान्यताएं-** जैसे-किसी के जन्म दिवस पर परंपरागत रूप से एक पौधा रोपण करना।

(2) **दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताएं-** जैस- परिवार में बेटा होने पर ही ख़ुशी मनाना, बेटी के जन्म होने पर नहीं।

आइए हम उन सभी दोषपूर्ण मान्यताओं (कुमान्यताओं) से क्रमशः परिचित होने का प्रयास करते हैं, जिनसे समाज में लिंग-भेद जैसी सामाजिक

कुमान्यताओं के कारण समाज की लगभग आधी आबादी के रूप में महिलाओं को लिंग-भेदात्मक व्यवहार के कारण संपूर्ण सामाजिक समानता के अभाव में लिंग-भेदात्मक शोषण, पीड़ा तथा मानवीय गरिमा रहित जीवन जीने के लिये बाध्य होना पड़ रहा है । तो आइए हम ऐसी कुछ सामाजिक कुमान्यताओं से समाज में होने वाले दुष्परिणामों से परिचित होने का प्रयत्न करते हैं-

सामाजिक कुमान्यताएं

1. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में पुत्र का ही जन्म होना शुभ मानना इसके विपरीत बेटी का जन्म होना अशुभ मानना।
2. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में महिला के द्वारा कुछ कार्य किये जाना अशुभ मानना, इसके विपरीत पुरुष के द्वारा शुभ मानना।
3. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में कई धार्मिक कृत्यों का महिला द्वारा संपन्न किया जाना अशुभ मानना, इसके विपरीत पुरुषों द्वारा शुभ मानना।
4. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में पुरुषों के मध्य चल रही बातचीत में महिला के द्वारा सही सुझाव देने के लिये उनके बीच बोल पड़ना भी अशोभनीय मानना।
5. महिला के मासिक धर्म में होने पर उसे अशुद्ध तथा अपवित्र मानना।
6. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में प्रत्येक पुत्र के जन्म होते रहने से ही उसके वंश का बढ़ना या बढ़ते रहने की दोषपूर्ण सामाजिक मान्यता का माना जाना।\

धार्मिक (पंथ प्रेरित) कुमान्यताएं

1. सभी धर्मो (पंथों) के इष्ट देवों को पुरुष लिंग होना वाले ही मानना।
2. महिलाओं के द्वारा कई धार्मिक कृत्यों के संपन्न कराये जाने को अशुद्ध, अपवित्र या अधार्मिक माना जाना ।
3. धार्मिक पूजा-पाठ आदि के संपन्न कराये जाने में पुरुषों की भूमिका की प्रधानता की सामाजिक स्वीकार्यता।
4. कई धार्मिक स्थलों पर महिलाओं के प्रवेश को अपवित्र माने जाने के कारण उनके प्रवेश निषिद्धता का पालन किया जाना।
5. कई धार्मिक (पंथगत) पदों पर महिलाओं की नियुक्ति का निषेध माना जाना ।
6. महिला के प्रकृति प्रदत्त मासिक धर्म (Menstrual Cycle) जैसे स्त्रित्व स्वास्थ्य के प्रतीक (लक्षण) को अपवित्रता का प्रतीक मानते हुये, ऐसी स्थिति में उसे धार्मिक कृत्यों में सहभागिता के लिये अपवित्र माने जाने की मान्यता को माना जाना।

पौराणिक कुमान्यताएं

1. पुत्र के जन्म होने से ही मोक्ष की प्राप्ति होना माना जाना ।
2. माता-पिता के अंतिम संस्कार पुत्र के द्वारा ही संपन्न कराये जाने पर उन्हें मोक्ष मिलना माना जाना।
3. व्यक्ति की मृत्यु उपरांत पौराणिक मान्यताओं द्वारा निर्धारित समय सीमा में पुत्र के द्वारा ही मृत्यु भोज तथा पिंडदान कराये जाने पर ही मृतक को आत्म शांति मिलने की पौराणिक मान्यता का माना जाना।
4. मोक्ष प्राप्त करने हेतु पुत्र प्राप्ति के उद्देश्य को ध्यान में रखते अवैध रूप से सोनोग्राफी के द्वारा गर्भस्थ शिशु के लिंग-परीक्षण कराये जाने पर पुत्री होने की स्थिति में, पुत्रियों की अधिक संख्या होने से

बचाने हेतु, पुत्र ज्ञात होने तक उक्त पुत्रियों का गर्भपात कराये जाने को उचित माना जाना।

5. हिंदू समाज में माता या पिता की मृत्यु उपरांत सिर मुंडन जैसी पौराणिक मान्यता माने जाने के कारण पुत्र प्राप्ति के लिये एड़ी चोटी का ज़ोर लगाने की पौराणिक मान्यता को माना जाना।

उपरोक्त वर्णित सभी सामाजिक, धार्मिक तथा पौराणिक कुमान्यताओं के कारण समाज में लिंग-भेद के चलते, बेटियों तथा महिलाओं को संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) के अधिकारों के उपभोग तथा उसके सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने में सदियों से पीढ़ी-दर-पीढ़ी अनगिनत चुनौतियां का सामना करना पड़ रहा है, जिससे महिलाओं को समाज में पुरुषों के समान गरिमामय सामाजिक स्तर पर व्यक्तिगत पहचान के बिना ही जीने को बाध्य होना पड़ता है।

अध्याय 15
समाज में लिंग भेद उन्मूलन तथा लिंग समानता स्थापित किये जाने के प्रभावी उपायों तथा रणनीतियों का वर्णन

आज के मनुष्य जहां एक ओर तो बुद्धि, सभ्यता तथा विकास के संदर्भ में सभी पशु-प्राणियों से कई गुना आगे निकल चुकने के विषय में दिल से इतराते हैं, लेकिन वहीं दूसरी ओर उनमें से अधिकतर लोग लिंग-भेद जैसे घिनौने व्यवहार को बड़ी सजगता से सीखकर तथा कुटिलता के साथ इसे आज तक जीते चले आ रहे हैं, जबकि वे बुद्धि, विकास तथा सभ्यता की दौड़ में कई गुना आगे निकलने के संदर्भ में अपनी तुलना, इस संदर्भ में कई गुना पीछे रह गये अन्य पशु-प्राणियों से तो करते रहे हैं, लेकिन लिंग-भेद जैसे घिनौने व्यावहार की निकृष्टता के साथ जीने के विषय को बड़ी ही कुटिलता से टाल जाते हैं और वे किसी के द्वारा इस मुद्दे पर चारों ओर से घिरने के बाद ही बामुश्किल से इस संदर्भ में पशु-प्राणियों की लिंग निरपेक्षता वाली श्रेष्ठता को दबी जवान से ही स्वीकार कर पाते हैं और वे यह भी स्वीकार क्यों न करें कि उन पशु-प्राणियों में इस संदर्भ की श्रेष्ठता होने के कारण किसी भी प्रजाति की एक भी मादा पशु-प्राणी को लिंग-भेद (Gender discrimination) जैसे घिनौने व्यवहार से पीड़ित नहीं होना पड़ता, जबकि इस संदर्भ में बुद्धि, सभ्यता, विकास, संस्कृति तथा इंसानियत के चैंपियन बने बैठे लिंग-भेदिये माता-पिता दूसरों से तो क्या, बल्कि उनकी स्वयं की अपनी ही बेटियां न जाने उनकी कितनी पीड़ियों से इस लिंग-भेद जैसे घिनौने व्यावहार से पीड़ित होती चली आ रही हैं और न जाने उनकी आगामी पीढ़ियों में जन्म लेने वाली कितनी बेटियां इस तथाकथित घिनौनी पीड़ा से कब मुक्ति पा सकेंगी ? उनके लिए इस पीड़ा से मुक्ति पाना तो तो दूर की बात है, सबसे पहले तो वे पीड़ित बेटियां, यह तो समझें कि यह पीड़ा देने वाले कोई दूसरे नहीं हैं, बल्कि उनके अपने ही माता-पिता हैं, जो छल-कपट और कुटिलता के बल पर तथा उनके मुख से बेटा-बेटी एक समान कहते रहने के नाम पर पीढ़ियों से सफल होते

आ रहे हैं। क्या ऐसे लिंग-भेदिये माता-पिता उनकी बेटियों के साथ निष्पक्ष हैं या पक्षपाती तथा न्यायवादी है या अन्यायवादी ? इसे उनकी बेटियां स्वयं समझ कर भी मजबूर रह जाती हैं, क्योंकि अधिकतर बेटियों को लिंग-भेद जैसी दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं के नाम पर सबसे पहला शिकार तो, उन्हें उनके माता-पिता द्वारा ही बनाया जाता रहा है, जो उनके माता-पिता के लिये नैतिक तथा मानवीय दृष्टिकोण से भी अति निकृष्टतापूर्ण तथा घिनौना कृत्य नहीं तो और क्या है ? ऐसे सभी लिंग-भेदिये माता-पिता के ऐसे घिनौने व्यावहार से मुक्ति पाने के लिये तथा अस्मिता पूर्ण और गरिमामयी जीवन जीने के लिये, उनकी बेटियों के द्वारा उनके स्वयं की अनुभववादी, तथ्यात्मिक तथा तर्कवादी सोच के साथ उनके माता-पिता के द्वारा किये जाने वाले ऐसे लिंग-भेदात्मक घिनौने तथा छल-कपट पूर्ण व्यवहार को समझकर इसे समाज से उन्मूलित किये जाने के लिये उनके द्वारा उनके अपने माता-पिता के साथ एक लोकतांत्रिक विद्रोही भूमिका अदा किये जाने की नितांत आवश्यकता है।

समाज के बुद्धिजीवियों, न्यायवादियों और संपूर्ण सामाजिक समानता के अधिकार के समर्थकों के समक्ष मेरे द्वारा खड़े किये गये कुछ यक्ष प्रश्नों के संदर्भ में आज की महिलाओं के रूप में जी रही बेटियां इन यक्ष प्रश्नों के निष्पक्ष तथा व्यवहारिक उत्तर सुनने के लिय विद्रोही भूमिकाएं अदा करने के लिये बाध्य हो रही हैं।

समाज में किसी भी संस्कृति की प्रचलित सभी सामाजिक, धार्मिक (पंथ प्रेरित) तथा पौराणिक मान्यताएं मानव सृर्जित तथा प्रतिपादित होती हैं और यदि आगे बढ़ते समय के साथ ये प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र आदि के हितों को संवर्धित तथा संरक्षित करने में बाधाएं सिद्ध होती हैं, तो भी समाज के रूढ़िवादी लोगों के खोखले सामर्थ्य पर ये सदियों से नहीं, बल्कि युगों से आज तक समाज में टिकी हैं, जबकि समाज सुधार का इतिहास यह बताता है कि दृढ़ इच्छा शक्ति वाले समाज सुधारक व्यक्तियों के लिये इन्हें परिवर्तित, उन्मूलित या नव प्रतिपादित मान्यताओं से प्रतिस्थापित (Replaced) किया जाना कोई असंभव कार्य नहीं रहा है, लेकिन किसी समाज विशेष में संपूर्ण सामाजिकता समानता की संस्कृति स्थापित किये जाने में किसी समाज विशेष की मूल सांस्कृतिक पहचान उन्मूलित नहीं होना चाहिए। ऐसे

सामाजिक सुधार मूल रूप से समाज के द्वारा भी किये जाते रहे हैं और परिस्थिति विशेष में समाज के सकारात्मक सहयोग से तात्कालिक राष्ट्र की सरकारों के द्वारा भी किये जाते हैं।

यदि भारतीय समाज के संदर्भ में यह कहें कि संपूर्ण भारतीय समाज, भारतीय संविधान से शासित होता है, तो यह कहना भी कोई गलत नहीं होगा कि समानता का मौलिक अधिकार (Right to equality) भारतीय संविधान में उल्लेखित 6 मौलिक अधिकारों में से सबसे महत्वपूर्ण अधिकार है, जो भारत के किसी भी नागरिक के साथ उसके लिंग (स्त्री या पुरुष होने) , जाति, जन्म स्थान, रंग, पंथ या संप्रदाय आदि किन्हीं भी आधारों पर किसी के भी द्वारा, किसी के भी साथ, किसी भी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जा सकता, परंतु व्यावहारिक स्तर पर भारतीय समाज में सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से एक बेटी और महिला के साथ लिंग-भेद जैसा घिनौना तथा अमानवीय व्यवहार किया जाता रहा है, जो उनकी गरिमा और अस्मिता के हित विरुद्ध होता है, जिसके लिये मूल रूप से भारतीय समाज में प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की विभिन्न पंथ प्रेरित, सामाजिक तथा पौराणिक मान्यताएं उत्तरदायी हैं।इसलिए कानूनी प्रावधानों तथा सकारात्मक सामाजिक परिवर्तनों के द्वारा ऐसी पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सभी लिंग-भेद आधारित दोषपूर्ण सामाजिक, पंथ प्रेरित तथा पौराणिक मान्यताओं को समाज से उन्मूलित किये जाने की अति आवश्यकता ही नहीं, अपितु अति प्रासंगिकता भी है।

महिला के रूप में जन्मी प्रत्येक बेटी अथवा महिला की समाज में विभिन्न भूमिकाओं के संदर्भों तथा प्रसंगों में क्रमशः मेरे ये दो कथन-

1. 'कोई भी बेटी, किसी के लिये भी सुंदर दिखने के लिये नहीं जन्मी है, अपितु वह भी औरों की भांति उसके सभी कर्तव्यों के निर्वहन, अधिकारों के उपभोग तथा लोगों पर शासन करने के सामर्थ्य के साथ जन्मी है।'

2. 'किसी धर्म (पंथ) की किसी भी सामाजिक प्रणाली के मानने वाले माता-पिता के परिवार में बेटी का जन्म होना, उनके माता-पिता के लिये, न तो पीड़ा और न कोई हीनता अनुभव करने का विषय है, और न किन्हीं पुत्र मोही माता-पिता की नज़रों में सहानुभूति का

पात्र बनने का विषय है। हां, इसमें कोई संदेह नहीं कि पुत्र मोही माता-पिता के लिये बेटे की आशा में बेटी का जन्म होना, उनके लिये पीड़ा तथा अन्य पुत्रमोही माता-पिता की निगाहों में सहानुभूति का पात्र बनने तथा उनकी बेटी की निगाहों में उनकी पुत्र मोही निकृष्ट सोच में बेटी के प्रति फल-फूल रही लिंग-भेद वाली मानसिकता वाले माता-पिता सिद्ध होने का विषय अवश्य हो सकता है।

मेरे उक्त दोनों कथन स्पष्ट रूप से प्रत्येक बेटी तथा महिला की स्वतंत्र तथा गरिमामयी पहचान तथा छवि के अस्तित्व के सामाजिक महत्व तथा उनके साथ हो रहे शोषण की पीड़ा को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं।

किसी भी बेटी अथवा महिला के साथ लिंग-भेदात्मक व्यावहार के उन्मूलन की वर्तमानकालिक विधिक स्थिति पर निष्कर्षत:यह कहा जा सकता है कि एक महिला को, उसके महिला होने के कारण, यदि कोई भी व्यक्ति या संस्था उसे उसके कर्तव्यों के निर्वहन, अधिकारों के उपभोग, विधि द्वारा स्थापित शासन तथा किसी भी सामाजिक-धार्मिक (पंथ प्रेरित) कृत्य संपादित करने, किसी सामाजिक परंपरा के निर्वहन करने में सामाजिक स्वीकृति मिलने या अन्य कोई भी सकारात्मक कृत्य संपादित करने से वंचित या बाधित किया जाता है, तो उनका ऐसा कृत्य लिंग-भेद (Gender discrimination) कहलाता है, जो संयुक्त राष्ट्र संघ के सिटिज़न चार्टर के अनुसार निषिद्ध तथा भारतीय संविधान के अनुसार भी एक गैर-कानूनी तथा गैर-संवैधानिक कृत्य घोषित किये जाने के कारण से, अब कोई भी ऐसा लिंग-भेदात्मक व्यावहार एक दंडनीय अपराध की श्रेणी में आता है।

इस सामाजिक समस्या के अपेक्षित समाधान तथा निर्मूलन के लिये, समाज और सरकार के अतिरिक्त, सभी महिलाओं की सक्रिय, आंदोलित, निर्णायक तथा लोकतांत्रिक विद्रोह की भूमिका की नितांत आवश्यकता है और इसके साथ यह भी कि महिला के साथ इस लिंग-भेदात्मक व्यावहार के लिये व्यक्ति कम बल्कि पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली आधारित दोषपूर्ण सामाजिक, धार्मिक (पंथ प्रेरित) तथा पौराणिक मान्यताएं अधिक उत्तरदायी हैं।इसके समाधान के लिये, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन को, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के पालन किये जाने के

साथ प्रतिस्थापित (Replaced) किये जाने की अति आवश्यकता है और प्रासंगिकता भी।

प्रत्येक बेटी का विवाह, घर बहू प्रतिमान वाली सामाजिक मान्यता के स्थान पर, उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की अतिथि बहू प्रतिमान वाली सामाजिक मान्यता के पालन करने की सामाजिक स्वीकृति के साथ किये जाने से ही लिंग-रहित संस्कृति (परंपरा) स्थापित हो पाना संभव है अन्यथा नहीं, जिसकी आज नितांत आवश्यकता है।

'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहन संस्कृति स्थापना सिद्धांत' के अनुसार ऐसी सभी प्रचलित सामाजिक मान्यताओं को प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र के हितों को प्रोत्साहित एवं संवर्धित करने के लिये आंशिक या पूर्ण रूप से परिवर्तित, उन्मूलित या नव प्रतिपादित सामाजिक मान्यता से प्रतिस्थापित किये जाते रहने से ही समाज विशेष के लोगों का सर्वांगीण विकास संभव है अन्यथा नहीं ।

डॉ. बी.आर.अंबेडकर ने भारत के सभी नागरिकों के इसी आत्मसम्मान तथा गरिमा की रक्षा के लिए, भारतीय संविधान में उल्लेखित मौलिक अधिकारों में, समानता का मौलिक अधिकार (The Fundamental Right to Equality) को भी अधिसूचित किया है, जिसे हम इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं- 'किसी भी व्यक्ति या समूह को सामाजिक अवसरों, विशेषाधिकारों तथा लोक नियोजन में जाति, लिंग, आयु, मूलवंश, धर्म या किसी अन्य स्थिति जैसे मनमाने आधारों पर वंचित नहीं किया जाएगा।'

उक्त परिभाषा में उल्लेखित आधारों पर किसी के द्वारा भी, किसी के साथ भी, किसी भी संदर्भ एवं प्रसंग में किया जाने वाला लिंग-भेदभाव पूर्ण व्यवहार, अक्षम्य एवं दंडनीय अपराध है। भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त इस अधिकार का कोई भी उल्लंघन करता है, तो कोई भी व्यक्ति उसके इस अधिकार की रक्षा तथा उल्लंघन करने वाले व्यक्ति को दंडित करवाने के लिए, भारत की सर्वोच्च न्यायालय की शरण में जा सकता है।

समानता के मौलिक अधिकार के आधार पर, संवैधानिक रूप से व्यक्ति के जीवन की किसी भी परिस्थिति के किसी भी संदर्भ एवं प्रसंग में किसी भी प्रकार के कर्तव्य का निर्वहन तथा किसी भी प्रकार के अधिकार के उपभोग

करने के संदर्भ में समानता के मौलिक अधिकार के उपभोग करने देने की संवैधानिक बाध्यता है। इस संवैधानिक बाध्यता का उल्लंघन करना दंडनीय अपराध है।समाज में न्यायसंगत परिवर्तन करने के सामाजिक कारक के रूप में एक छोर पर समाज तथा दूसरे छोर पर विधि द्वारा स्थापित सरकार भी कार्य करती है।

समाज विशेष के संदर्भ में सरकार द्वारा किये गये किसी भी प्रकार के सामाजिक सुधार की स्वीकार्यता किसी समाज विशेष के सभी सदस्यों के लिये बाध्यकारी होती है, न कि स्वैच्छिक तथा समाज द्वारा किये गये सामाजिक सुधार की स्वीकार्यता तथाकथित समाज विशेष के सदस्यों के लिये स्वैच्छिक अधिक, लेकिन बाध्यकारी कम होती है।संक्षेप में कहा जा सकता है कि सरकार द्वारा बनाये गये कानून को मानना व्यक्ति की पसंदगी या इच्छा पर निर्भर नहीं होता, अपितु उसके लिये इसे मानने की बाध्यता होती है, न मानने पर उक्त व्यक्ति को कानून द्वारा दंडित किये जाने का प्रावधान होता है। सरकार द्वारा जन विरोधी कानून बनाये जाने पर, समाज या समाज के कुछ लोगों द्वारा ऐसे जन विरोधी कानूनों का विरोध किया जाता रहा है और किया भी जाना चाहिए लेकिन प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र हितैषी कानूनों का नहीं।

समानता के मौलिक अधिकार का उपभोग करने देने की बाध्यता के आधार पर यदि संस्कृति जनित सामाजिक मान्यता से एक पिता को उसके नाम, गोत्र या उपनाम के आधार पर उसके वंश को आगे बढ़ाने की सामाजिक मान्यता का उपभोग करने का अधिकार है, तो यह अधिकार माता के रूप में प्रत्येक महिला को भी मिलना ही चाहिए, जिसमें पुत्र एवं पुत्री दोनों को ही लिंग रहित आधार पर, सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से, उन्हें उनके माता-पिता के वंश वाहक के रूप में माने जाने की की सामाजिक स्वीकृति मिलनी चाहिए।

समानता के मौलिक अधिकार के आधार पर कहा जा सकता है कि यदि वंश पिता से आगे बढ़ता है, तो वंश माता से भी आगे बढ़ता है और यदि वंश बेटे से आगे बढ़ता है, तो वंश बेटी से भी आगे बढ़ता है।आवश्यकता इस बात की है कि इस तथ्य को बिना पूर्वाग्रह तथा निष्पक्षता के साथ स्वीकार करके, इसे सांस्कृतिक (पारंपरिक) रूप से समाज में स्थापित किये जाने के लिये,

सामाजिक मान्यता/स्वीकृति दिये जाने और इसे जन सामान्य द्वारा अपनाये जाने की नितांत आवश्यकता है, जिससे कि समाज में सांस्कृतिक रूप से लिंग-भेद आधारित सभी प्रचलित दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताएं जड़ से उन्मूलित हो सकें और समाज में लिंग-भेद रहित सामाजिक मूल्यों वाली संस्कृति स्थापित किये जाने का मार्ग प्रशस्त हो सके।

यदि महिलाओं को व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में पुरुषों के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने के कानूनी अधिकार मिल भी जाएं और यदि समाज में ऐसी संपूर्ण सामाजिक समानता (complete social equality) वाली संस्कृति स्थापित नहीं हो जाती, तब तक समाज में लिंग-भेद जैसे घिनौने समाजिक दोषों की कुछ-न-कुछ जड़ें विद्यमान रहेंगी तथा ये महिलाओं को समाज में संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने के रास्ते में कहीं-न-कहीं बाधाएं सिद्ध होती रहेंगी।

विशेषकर भारतीय हिंदू समाज में सदियों से प्रचलित लिंग-भेद को सांस्कृतिक रूप से समाप्त करने के लिये, तथा महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्य के निर्वहन किये जाने वाली संस्कृति स्थापित करने के उद्देश्य से, इस पुस्तक के अध्याय 18 में वर्णित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के पालन द्वारा ही संभव है। इसके अतिरिक्त इस संदर्भ में और भी उपाय विचारणीय हो सकते हैं जिनके विषय में हम आगे चर्चा करते हैं-

सामाजिक उपाय

इन उपायों के अंतर्गत हम निम्नलिखित विचारणीय क़दम उठा सकते हैं-

(i) इस संदर्भ में जन जागृति लाकर

(ii) इस संदर्भ में विचार-विमर्श करने के लिये विभिन्न समुदायों में लिंग-भेद उन्मूलन समितियों का गठन करके

(iii) विभिन्न धार्मिक पूजा स्थलों के पुजारियों के द्वारा लिंग-भेद उन्मूलन आवश्यकता पर लोगों को उपदेश देकर

(iv) नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणालियों के सभी 12 अनुकरणों के पालन तथा इसे अनुकरणित किये जाने की सामूहिक सामाजिक सहमति द्वारा

(v) समाज में प्रचलित सभी लिंग-मतारोपित सामाजिक मान्यताओं के पालन के संदर्भ में सामूहिक सामाजिक बहिष्कार के द्वारा

(vi) समाज के द्वारा तथा समाज में व्यक्तिगत स्तर पर, पुरुषों की तरह ही, महिलाओं को उनकी व्यक्तिगत सामाजिक पहचान पहचानों, जैसे- उपनाम, गोत्र, वंश तथा उनका अंतर्जातीय या अंतर धार्मिक विवाह होने पर भी, उनकी जाति, उपनाम तथा धर्म के साथ जीने देने तथा इन सब पारंपरिक सामाजिक पहचानों को, उनकी संतति तक के द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी ग्रहण करवाये जाने से लेकर माने जाने तक की संस्कृति स्थापित होना चाहिए।

राजनैतिक उपाय

इन उपायों के अंतर्गत भारत सरकार तथा राज्यों की सभी सरकारें वर्तमान में लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में प्रचलित कानूनों से और भी अधिक प्रभावी कानून बनाने के लिये सांसद तथा राज्यों की विधानसभाओं के द्वारा जन सामान्य लोगों के सुझावों को लेते हुवे सर्वसम्मति से ऐसे कानून बनाएं, जो हिन्दू समाज की महिलाओं के अतिरिक्त समाज के अन्य सामाजिक तथा धार्मिक समुदायों की महिलाएं, पुरुषों की भांति, उनके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ सांस्कृतिक रूप से गरिमामयी जीवन जी सकें।

ऐसे कानूनों के माध्यम से भारतीय समाज में प्रचलित लिंग-भेदात्मक सामाजिक मान्यताओं के पालन करने वाले व्यक्तियों को पहले सुधरने की चेतावनी तथा नहीं सुधरने पर उन्हें ऐसे कानून से दंडित किये जाने के सख़्त प्रावधान भी हों।

कानूनी उपाय

कानून के द्वारा समाज से लिंग-भेद उन्मूलन के उपायों को वर्णित करने के पहले, मैं भारत की राष्ट्र शक्ति के रूप में भारतीय संविधान के द्वारा, अन्य कानूनी उल्लंघन से संबंधित विवादित मामलों के अतिरिक्त लिंग-भेद से संबंधित विवादित मामलों में भी भारतीय लोगों के लिये तथा भारतीय कानून के संदर्भ में किसी के भी लिये, इस संदर्भ में कानून का उल्लंघन करने वाले भारतीय नागरिक को दंड तथा पीड़ित के लिए न्याय दिये जाने के लिये, एक शक्तिशाली तथा निष्पक्ष न्यायपालिका का प्रावधान किया गया।इसी न्यायपालिका की सर्वोच्च संवैधानिक संस्था के रूप में, भारत के मान्यनीय सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा अनुसूचित जाति की महिला का गैर-अनुसूचित जाति के व्यक्ति के साथ विवाह होने पर, उसकी संततियों की शिक्षा पूर्ण करने में अनुसूचित जाति आरक्षण के अंतर्गत मिलने वाली सुविधाओं से लाभान्वित होने देने के लिये एक दुर्लभ निर्णय सुनाया, जिसे यहां संक्षेप में कथित किया जाना अति प्रासंगिक होगा।

वह निर्णय आत्मक आदेश यह कि अनुसूचित जाति के अंतर्गत आने वाली एक मां को उसकी जाति के नाम पर, संबंधित तहसीलदार को जाति प्रमाण पत्र (Caste certificate) जारी करने के लिये संबंधित शासकीय विभाग को यह आदेश सुनाये जाने से संबंधित समाचार, भारत से प्रकाशित होने वाले 'द टाइम्स ऑफ़ इंडिया'नामक अंग्रेजी समाचार में, दिन मंगलवार, दिनांक 8 दिसंबर 2025 को भोपाल से प्रकाशित हुआ।तथाकथित समाचार पत्र में छपे इस समाचार के स्क्रीनशॉट को, यहां संदर्भित किया गया है, जिसकी उक्त दिवस की मूल प्रति, टाइम्स आफ इंडिया, की समाचार पत्र की ऑफिश्यल लाइब्रेरी से भी प्राप्त की जा सकती है।

BHOPAL | TUESDAY, DECEMBER 9, 2025 | PAGES 20 | PRICE ₹ 3.00

Court allows SC cert for girl based on caste of mom, not non-SC dad

Dhananjay.Mahapatra
@timesofindia.com

New Delhi: In a rare decision aimed at facilitating the education of a minor girl, Supreme Court on Monday approved issuance of an SC certificate based on the 'Adi Dravidh' caste of her mother, who is married to a non-SC person, even though it is yet to adjudicate a bunch of petitions challenging the norm that a child inherits their father's caste.

A bench of CJI Surya Kant and Justice Joymalya Bagchi refused to entertain a challenge to a Madras HC order directing grant of SC caste certificate to the Puducherry girl on the sole ground that her academic career may suffer without it.

"We are keeping the question of law open," the bench said. However, what the CJI said next could lead to a big debate. He said, "With changing times, why should a caste certificate be not issued based on the mother's caste?" This would mean that children born of the marriage of an SC woman with an upper caste man and brought up in upper-caste family environs would also be entitled to an SC certificate.

The mother had requested the tahsildar to grant SC certificates to her three children—two daughters and a son—based on her caste certificate as her husband had stayed at her parents' house since their marriage. In her application, she had contended that her parents and grandparents belonged to Hindu Adi Dravida community.

The presidential notifications of Mar 5, 1964, and Feb 17, 2002, read with instructions of the Union ministry of home affairs, say that a person's eligibility to get a caste certificate is primarily based on their father's caste as well as his residential status in the state or UT's jurisdiction.

▸Continued on P 16

IN THE COURTS

- SC says time has come to **enable high courts to look after state-related issues pertaining to green cover** and water bodies, 'we cannot sit here in Delhi and usurp jurisdiction of HCs'
- **Punjab & Haryana HC says road accidents, even those that claim lives, do not fall into bracket of 'heinous offences'** marked by mental depravity
- **SC seeks reply of K'taka CM Siddaramaiah** on plea challenging his election from Varuna seat in 2023
- High court says Delhi govt should intervene and solve **MCD's funds** crisis

SC had earlier held father's caste as decisive factor

▸Continued from P 1

In Punit Rai Vs Dinesh Chaudhary [(2003) 8 SCC 204], a case relating to reservation, SC had said that the decisive factor for determination of caste of a person will be the caste of the father as per customary Hindu Law and that in the absence of statutory law, they would inherit their caste from the father and not the mother.

In the 2012 judgment in 'Rameshbhai Dabhai Naika vs Gujarat', a two-judge bench of SC ruled, "The determination of caste of a person born of an inter-caste marriage or a marriage between a tribal and a non-tribal cannot be determined in complete disregard of attending facts of the case." It said, "In an inter-caste marriage or a marriage between a tribal and a non-tribal, there may be a presumption the child has the caste of the father. This presumption may be stronger in the case where in the inter-caste marriage or a marriage between tribal and non-tribal, the husband belongs to a forward caste."

"But by no means is the presumption conclusive or irrebuttable, and it is open to the child of such marriage to lead evidence to show he/she was brought up by the mother who belonged to SC/ST. By virtue of being the son of a forward caste father, he did not have any advantageous start in life but on the contrary suffered the deprivations, indignities, humiliations and handicaps like any other member of the community to which his/her mother belonged. Additionally, he was always treated as a member of the community to which her mother belonged not only by that community but by people outside the community as well," it said.

इस समाचार के अनुसार, माननीय सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय ने भारतीय समाज में प्रचलित, उस रूढ़िवादी पुरुष प्रधान समाज की उस निकृष्ट मानसिकता के उन्मूलन के संदर्भ में एक ज़ोरदार कानूनी प्रहार किया है, जिसके अनुसार सदियों से नहीं अपितु युगों से प्रचलित निकृष्ट लिंग-भेदात्मक मानसिकता को, कुछ ही मिनटों में बदलने का निर्णय सुना दिया।यह निर्णय भारतीय समाज की उस परंपरागत रूढ़िवादी तथा लिंग-भेदात्मक मानसिकता के विरुद्ध है कि महिला की न कोई जाति होती है और न कोई धर्म, अपितु वह जिस जाति या धर्म के व्यक्ति से विवाह करती है, वह उसी जाति अथवा धर्म की हो जाती है।

भारतीय हिंदू समाज में परंपरागत रूप से इस प्रचलित लिंग-भेदात्मक मानसिकता के विरुद्ध या उन्मूलन के संदर्भ में भारत के मान्यनीय सुप्रीम कोर्ट ने एक निर्णय सुनाया है, जिसके आशय को यहाँ सारांकित किया जा रहा है, ताकि आप उक्त निर्णय के द्वारा भारतीय राष्ट्र शक्ति की सर्वोच्च न्यायिक तथा संवैधानिक संस्था के द्वारा एक बाध्यकारी सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को स्वीकार किये जाने के आदेशात्मक निर्णय के विषय में लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में राष्ट्रीय शक्ति की भूमिका से परिचित हो सकें।

हालांकि उक्त निर्णय, अनुसूचित की महिला का उच्च जाति के व्यक्ति के साथ विवाह हो जाने के पश्चात जन्म लेने वाली संततियों के लिये, उनकी मां की जाति के नाम से जाति प्रमाण पत्र जारी करने के संदर्भ में है, तो भी यह निर्णय कहीं-न-कहीं लिंग-भेद उन्मूलन के कानूनी पहलूआओं की ओर संकेत करता है।

भारत की केंद्र सरकार तथा राज्यों की सरकारों के अधिकार क्षेत्र वाले वर्तमान कालिक कानून, जो लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में प्रभावी हैं, उन्हें संबंधित सरकारों के द्वारा इतने प्रभावी ढंग से लागू करें कि समाज में प्रचलित लिंग-भेद उन्मूलन के लक्ष्य को निर्धारित समय में पूर्ण रूप से प्राप्त किया जा सके।

सरकारों द्वारा महिला सशक्तिकरण के क्षेत्र में लागू की गई नीतियों को प्रभावी रूप से क्रियान्वित करें तथा उन नीतियों को लागू करने के पश्चात्

इनके पूर्व निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति की सतत समीक्षा करें, ताकि इन नीतियों के लक्ष्यों को निर्धारित समय में प्राप्त किया जा सके तथा उक्त लक्ष्यों को प्राप्त करने के दौरान आने वाली चुनौतियों से निपटा जा सके।

भारतीय समाज में प्रचलित लिंग-भेद के संपूर्ण उन्मूलन के बिना, व्यावहारिक रूप से भारतीय समाज की महिलाओं को पुरुषों के समान न तो संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) मिल सकती और न भारत के आर्थिक विकास में उनकी पूर्ण भागीदारी सुनिश्चित हो सकती है।

अध्याय 16
प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत के अनुसार वंश की श्रेष्ठ सामाजिक प्रणाली का चुनाव

यदि हम विश्व की विभिन्न समाजों के साथ, भारतीय हिंदू समाज की संस्कृति का अवलोकन करें, तो हमें ज्ञात होगा है कि इस पुस्तक के अध्याय में 7 में वर्णित वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों में से, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का अभ्यास, जहां मध्य भारत से उत्तर भारत की ओर रहने वाली मूल हिंदू जातियों के लोगों द्वारा किया जाता है, तो वहीं दूसरी ओर दक्षिण भारत के कुछ हिंदू जातियों के द्वारा वंश की मातृवंशीय सामाजिक प्रणाली का अभ्यास किया भी जाता है।

अब यहां स्वाभाविक रूप से एक प्रश्न बनता है कि एक से अधिक वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों में से वंश की श्रेष्ठ सामाजिक प्रणाली कौन सी है। इससे आगे यह भी कि वंश की इन विभिन्न सामाजिक प्रणालियों की श्रेष्ठता मापने के लिये किस सिद्धांत को मानक के रूप में प्रयुक्त किया जाए।

इस संदर्भ में मेरे द्वारा प्रतिपादित-'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' को एक मानक के रूप में प्रयुक्त करें, तो इस सिद्धांत की यह संक्षिप्त व्याख्या से परिचित होना भी प्रासंगिक है-'प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा, मन, कर्म तथा वचन से, प्रकृति, मानव तथा राष्ट्र के हितों को हतोत्साहित नहीं अपितु, प्रोत्साहित करने वाली वैश्विक संस्कृति (Global Culture) के निर्माण तथा उसकी स्थापना करने वाले कृत्यों को संपादित करते जीना ही 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र-हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' कहलाता है।

यदि इस सिद्धांत के अनुसार इस पुस्तक में वर्णित वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों की विशेषताओं के अध्ययन के द्वारा आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सकता है कि महिला को व्यक्ति के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में

संपूर्ण सामाजिक समानता वाली संस्कृति स्थापित किये जाने में, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ही सर्वश्रेष्ठ है।उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली तथा मेरे द्वारा प्रतिपादित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अतिरिक, वंश की सभी सामाजिक प्रणालियां कहीं-न-कहीं, किसी - न-किसी प्रकार से, समाज में लिंग-भेद जैसे समाजिक दोषों को प्रोत्साहित करने के लिए उत्तरदाई सिद्ध होती हैं।इसलिये वंश की इन दो सामाजिक प्रणालियों के अतिरिक्त अन्य सभी वंश की सामाजिक प्राणालियां प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र के हितों को संरक्षित तथा संवर्धित करने में बाधाएं सिद्ध होती हैं।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि सामान्य रूप से सभी महिलाओं के लिये तथा विशेष रूप से हिंदू समाज की सभी महिलाओं के लिये समाज में संपूर्ण सामाजिक समानता की संस्कृति स्थापित किये जाने के लिये-'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' के अनुसार वंश की सभी सामाजिक प्रणालियों में से उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के संशोधित तथा संवर्धित रुप में प्रतिपादित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अभ्यास का मार्ग चुना जाना ही सर्वाधिक उपयुक्त है।

अध्याय 17
वंश की नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ही सर्वश्रेष्ठ क्यों ?

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी 12 अनुकरणों (सामाजिक मान्यताएं) का पालन किये जाने में पुरुष या महिला होने के आधार पर कोई लिंग-भेद नहीं है, अपितु व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में, महिला तथा पुरुष दोनों के लिये एक समान अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन किये जाने की समानता तथा भारतीय संविधान में उल्लेखित समानता के मौलिक अधिकार (Fundamental Right to Equality) के आधार पर प्रतिपादित किये गये हैं, जो पूर्णतः न्यायोचित हैं। इस प्रणाली की सर्वश्रेष्ठता के पक्ष में निम्नलिखित तर्क दिये जा सकते हैं-

1. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के एक अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार पुत्री का जन्म हो या पुत्र का, दोनों से ही लिंग-भेद रहित आधार पर माता-पिता के पृथक- पृथक वंश आगे बढ़ते हैं।

2. नव उभयवंशीय सामाजिक मान्यता के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार, पुत्र हो अथवा पुत्री, दोनों ही माता अथवा पिता की वंश संबद्धता किसी के द्वारा भी चुनने के पश्चात, माता-पिता, दोनों के ही वंश आगे बढ़ने की सामाजिक मान्यता होती है, जो समानता पर आधारित है।

3. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, एक से अधिक पुत्र ही पुत्र होने पर या एक से अधिक पुत्र-पुत्री के रूप में संतति होने पर, कोई भी पुत्र या पुत्री अपने पिता या माता के वंश को आगे बढ़ाने की वंश संबद्धता स्वेच्छा से या विचार-विमर्श करके चुन सकते हैं, वे इस प्रकार किसी के भी उपनाम या गोत्र ग्रहण

करके, उनके वंश को आगे बढ़ाने के पारंपरिक कर्तव्य का निर्वहन करने की सामाजिक मान्यता का पालन कर सकते हैं।

4. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, आयु में वरिष्ठ पुत्र या पुत्री के द्वारा अंतिम संस्कार के अंतर्गत हिंदुओं में प्रचलित मुखाग्नि जैसी रीति संपन्न किये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है, मात्र पुत्र के द्वारा ही नहीं।

5. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों के अनुसार, किसी भी प्रकार का सामाजिक, धार्मिक या अन्य कोई भी कार्य, कोई भी महिला या पुरुष संपादित कर सकता है, जो समानता के सिद्धांत के अनुसार न्यायोचित है।

6. नव उभयवंशीय सामाजिक (New Ambilineal Descent) प्रणाली के अनुकरणों के अनुसार महिला तथा पुरुष के लिये कोई भी कार्य संपादित करने की संस्कृति होती है।इस कारण महिलाएं इस सामाजिक प्रणाली के अनुसार अपने आपको दोयम दर्जे की महसूस नहीं करती हैं।

7. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) को प्रतिपादित करते समय, एक ही मानक-'जय प्रकृति, जय मानव, जय राष्ट्र'अर्थात मन, कर्म तथा वचन से किसी भी महिला या पुरुष द्वारा किया जाने वाला कृत्य, जो प्रकृति मानव तथा राष्ट्र के हित प्रोत्साहन तथा संवर्धन को बाधित करता है, निषिद्ध है, अन्यथा नहीं' का प्रयोग किया गया है, जो समानता के सिद्धांत के अनुकूल है, इसीलिए वंश की यह सामाजिक प्रणाली सर्वाधिक उपयुक्त है।

8. नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण अनुसार, किसी महिला के मासिक धर्म, जो प्रकृति प्रदत्त है, को अपवित्रता का विषय नहीं अपितु, एक महिला के स्वस्थ स्त्रित्व का प्रतीक माना जाता है, अपितु अपवित्रता या अशुद्धता का प्रतीक नहीं। यह अलग बात है कि ऐसे समय में जैव वैज्ञानिकीय कारणों से महिला के लिये मानसिक-शारीरिक स्वास्थ्य तथा उसके निजी या सार्वजनिक

जीवन में एक स्वच्छता रखें जाने का विषय हो सकता है, अपवित्रता का नहीं। इसलिए इस सामाजिक प्रणाली के अनुसार इस विषय से संबंधित ऐसा दृष्टिकोण अपनाये जाने के कारण यह अन्य सामाजिक प्रणालियों से श्रेष्ठ है।

9. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार यदि पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले हिंदू समाज की जातियों के लड़के-लड़कियां संयोग से या प्रेम-प्रसंग वश पिता के गोत्र वाले लड़के-लड़कियों से होते विवाह करने की बाध्यता बन जाये, तो उनमें से लड़की या लड़के के द्वारा उसकी माता का वंश संबद्धता का चुनाव करते हुये उसकी माता का गोत्र या उपनाम ग्रहण करके, सगोत्र विवाह निषिद्धता की हिन्दू सामाजिक मान्यता के उल्लंघन के सामाजिक अपराध बोध के भाव से मुक्त होकर उनका आगामी दांपत्य जीवन जी सकते हैं।ऐसे दंपतियों को यहां से पीढ़ी-दर-पीढ़ी नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) वाली वंश की सामाजिक प्रणाली को माना जाना बाध्यकारी होता है।

10. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्मी बेटी, बेटे के ही समान ससुराल वालों के लिये एक अतिथि के रूप में, एक अतिथि बहू की भूमिका के साथ ही सारा जीवन जीती है और इस प्रकार उसे भी उसके माता-पिता तथा बहनभाइयों से बिछुड़ने की पीड़ा से मुक्त जीवन जीने का अवसर मिलता है।

11. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में जन्मी बेटियां, उनकी ससुराल के लिये जीवनपर्यंत अतिथि बहू की भूमिका का निर्वहन करने के कारण, उसके माता-पिता के द्वारा सगे द्वारा ठगे जाने का अनुभव नहीं कर पाती।

12. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में जन्मे बेटे और बेटियों में से किसी को भी विवाह के पश्चात, उनके

माता-पिताओं के द्वारा मिली विरासती सामाजिक पहचान के साथ ही जीवन जीने की सामाजिक स्वीकृति वाली संस्कृति के साथ जीने का अवसर मिलता है, जो समानता के सिद्धांत पर आधारित होता है।

13. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं / social assumptions) के अनुसार एक बेटी को एक बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने की संस्कृति के साथ जीने का अवसर मिलता है।

14. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों तथा वैचारिकी सिद्धांतों के अनुसार चीकट, भाई दूज, यहां तक कि रक्षाबंधन आदि को मनाये जाने की निषिद्धता का पालन किया जाता है, क्योंकि जब एक बेटी को बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन की समानता रहती है, तो बहन के लिये भाई की ओर से यह प्रतीकात्मक सांत्वना देने लिये मनाने वाले त्योहार का कोई अर्थ नहीं रह जाता।

15. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्मे बेटे-बेटियों को, उनके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में एक समान अधिकारों के उपभोग तथा एक समान कर्तव्यों के निर्वहन करने की संस्कृति जीने की सामाजिक स्वीकृति होती है, जो विशेषकर बेटियों के सर्वांगीण विकास के लिये तथा पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले माता-पिता के द्वारा उनकी बेटी के साथ लिंग-भेदात्मक व्यवहार किये जाने के पाप से मुक्ति तथा प्रायश्चित की प्रेरणा लेने हेतु एक अद्वितीय, अद्‌भुत तथा अभूतपूर्व सामाजिक प्रणाली है।

16. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, एक ही माता-पिता के बच्चे समान गोत्र में भी विवाह करने की निषिद्धता का पालन तो किया जाता है, लेकिन पिता अथवा माता की पांचवी अथवा सातवीं पीढ़ियों की संततियों के पृथक गोत्र होने पर उनमें पारस्परिक वैवाहिक संबंधों की सामाजिक स्वीकृति होती है।

17. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की सभी सामाजिक मान्यताओं का अंतिम ध्येय यह नहीं कि व्यक्ति के प्रत्येक जीवन के संदर्भ तथा प्रसंग में बेटी को बेटे के समान तथा महिला को पुरुष के समान कुछ अंशों में संपूर्ण सामाजिक समानता मिले, अपितु उन्हें सांस्कृतिक, सामाजिक, कानूनी, राजनैतिक तथा किसी भी रूप से संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) की सहज संस्कृति के साथ जीवन जीने के लिये लिंग-रहित आधार पर सहज अवसर दिलाना ही इस सामाजिक प्रणाली का अंतिम तथा एकमात्र ध्येय है।

18. नव उभयवंशीय की सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्मे बेटे तथा बेटियों में से कुछ माता के गोत्र की वंश संबद्धता तथा कुछ पिता के गोत्र की वंश संबद्धता ग्रहण करने के कारण भिन्न गोत्र या उपनाम के लड़के-लड़कियों की संख्या अधिक होने के कारण, सामाजिक मान्यताओं के अनुसार वैवाहिक संबंध होने के अवसरों की संख्या बढ़ जाती है।

19. नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्म लेने वाली बेटियों के विवाह हों न हों, फिर भी उन्हें उनके भाइयों या माता-पिता की दया पर निर्भर नहीं रहना पड़ता, क्योंकि उन्हें भी बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के पालन किये जाने अधिकारों वाली संस्कृति में जीने का अवसर मिलता है।

20. हिंदू समाज में प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के अंतर्गत, पृथक-पृथक गोत्र के माता-पिता से जन्म लेने वाली सभी संततियों को एक ही गोत्र का माना जाना, समानता के मौलिक अधिकार के विरुद्ध है तथा अतार्किक भी।वह इसलिये कि दो गोत्र के माता-पिता से जन्म लेने वाली संततियों में, मां का गोत्र कहां चला जाता है। दूसरा यह कि पिता के गोत्र की महिला तथा पुरुष सदस्य हमेशा के लिये उसके बहन-भाई माने जाते हैं, लेकिन माता की गोत्र के महिला तथा पुरुष सिर्फ पांच पीढ़ी तक ही बहन-भाई माने जाते हैं, जबकि नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली में, जन्मी संततियों

को, दोनों की ही वंश संबद्धता के नाम पर गोत्र या उपनाम ग्रहण करने की सामाजिक मान्यता होती है तथा दोनों माता-पिता की ओर की 5 या 7 पीढ़ियों के अंदर वाले सदस्यों के आपसी वैवाहिक संबंध होने की निषेधता का पालन किया जाता है तथा 5 या 7 पीढ़ियों के बाद के सदस्यों में वैवाहिक संबंध हो सकने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है। जिससे कि वैवाहिक संबंध होने के अवसरों की अधिक संभावना बनी रहती है।ऐसा इसलिये कि किसी पिता के गौत्र या उपनाम वाले स्वजातीय सदस्य अनंत पीढ़ियों तक आपस में भाई-बहन कैसे हो सकते हैं ? इस सामाजिक मान्यता के महत्व की सामाजिक व्यावहारिकता क्या है, और यदि यह सामाजिक मान्यता प्रचलित है, तो इसमें लिंग-भेद क्यों है ? एक मां के गौत्र या उपनाम वाले स्वजातीय सदस्यों को कुछ निश्चित पीढ़ियों तक ही भाई-बहन माने जाने की सामाजिक मान्यता क्यों, क्योंकि यही सामाजिक व्यवहारिकता है, लेकिन यह लिंग-भेद आधारित है, जो नहीं होना चाहिये।

किसी एक ही दांपत्य साथी का वंश एक पक्षीय या लिंग-भेदात्मक आधार पर अनंत पीढ़ियों तक विस्तारित नहीं हो सकता, यदि ऐसा माना जाये, तो समस्त संसार के सदस्य उसके वंश के माने जाय, तो किसिका का भी वैवाहिक संबंध किसके साथ भी नहीं होगा, क्योंकि वे एक ही वंश के माने जायेंगे, तो इसमें सामाजिक व्यवहारिक नहीं होगी।प्रकृति ने, मनुष्य प्रजाति को सामाजिक जातिवार पैदा नहीं किया है, उसने उसे मात्र लिंगवार पैदा किया है, अर्थात कोई एक महिला तथा कोई एक पुरुष, सामाजिक जाति तो मनुष्य ने बनायी है, प्रकृति नहीं।

उक्त तर्कों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि पुरुष की भांति ही, महिला भी प्रकृति की एक जैविक रचना है, जिसे कोई पुरुष, लिंग के आधार पर स्वयं को उससे श्रेष्ठ तथा स्वयं से उसे हीन कहने या घोषित करने का कोई नैतिक अधिकार नहीं रखता तथा इस प्रकार से कहा जा सकता है कि वंश की नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली, वंश की शेष सभी सामाजिक प्रणालियों से श्रेष्ठ है।

अध्याय 18
लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य से हिंदू समाज के संदर्भ में नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों का वर्णन- एक सामाजिक प्रायोजना

इस अध्याय में, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली को विशेषकर हिंदू समाज में लिंग-भेद उन्मूलन करने वाली सामाजिक प्रायोजना (Social project) के रुप वर्णित किया गया है।

व्यक्ति के जीवन को मूल रूप से तीन कारक सर्वाधिक प्रभावित करते हैं- प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र। इसी सैद्धांतिक विचार को मेरे द्वारा 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' के रूप में 6 मार्च 2022 को प्रतिपादित किया गया, जिसे निम्नलिखित शब्दों में परिभाषित किया जा सकता है-

प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत

परिभाषा : 'प्रत्येक व्यक्ति के द्वारा, मन, कर्म तथा वचन से, प्रकृति, मानव तथा राष्ट्र के हितों को प्रोत्साहित करने वाली वैश्विक संस्कृति (Global Culture) के निर्माण तथा इसकी स्थापना करने वाले कृत्यों को संपादित करते हुए जीना ही प्रकृति-मानव-राष्ट्र-हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत कहलाता है।'

'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' के अनुसार समाज में प्रचलित वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों की विशेषताओं का अध्ययन करने के बाद इस निष्कर्ष पर आसानी से पहुंचा जा सकता है कि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अतिरिक्त वर्तमान कालिक समाज में वंश की सभी प्रचलित सामाजिक प्रणालियों में, महिला के रूप में जन्मी बेटी को संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने के संदर्भ में लिंग-भेद जैसा समाजिक दोष अधिक तथा उनमें गुण नहीं के बराबर दिखाई देते हैं।

प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत के अनुसार मनुष्य द्वारा मन, कर्म तथा वचन से कोई भी ऐसा कार्य न किया जाए, जो प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र के विकास में बाध सिद्ध होती हो।

वंश की नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अतिरिक्त अन्य सभी प्रचलित सामाजिक प्रणालियां कहीं-न-कहीं इनकी अधिकतर नकारात्मक या दोषात्मक सामाजिक मान्यताओं के कारण प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र के संतुलित विकास तथा अस्तित्व में बाधाएं सिद्ध होती हैं।

इस पुस्तक के अध्याय 9 में वर्णित वंश की विभिन्न सामाजिक प्रणालियों की विशेषताओं का अध्ययन करने के पश्चात इस तथ्य की पुष्टि सहजता से की जा सकती है, क्योंकि इन वंश की अधिकतर सामाजिक प्रणालियों की सामाजिक मान्यताएं समाज में लिंग-भेदात्मक व्यवहार को प्रोत्साहित करती हैं तथा ऐसा लिंग-भेदात्मक व्यवहार कहीं-न-कहीं प्रत्यक्ष रूप से प्रकृति व, मनुष्य तथा राष्ट्र के हितों को नकारात्मक तरीके से प्रभावित करता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी 12 अनुकरण प्रकृति, मनुष्य तथा राष्ट्र के हितों को प्रोत्साहित करते हैं। इस आधार पर समाज में प्रचलित वंश की सभी सामाजिक प्रणालियों में से नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) का पालन किये जाने का चुनाव सर्वाधिक उपयुक्त है।

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली, मूलतः उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली को संशोधित तथा परिमार्जित करके विशेष रूप से हिंदू समाज में प्रचलित लिंग-भेद को उन्मूलित करने के उद्देश्य से प्रतिपादित की गई है और सामान्य रूप से अन्य समाज के लोग भी इस नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों को उनकी सांस्कृतिक या पंथ प्रेरित मान्यताओं से प्रतिस्थापित (Replaced) करके उनके समाज में भी महिलाओं को शत-प्रतिशत लिंग-भेद रहित सहज संस्कृति के साथ जीने दे सकते हैं, जिससे कि उनकी समाज की महिलाओं को भी संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने का सहज अवसर मिल सके।

तो आइये अब हम नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों से परिचित होने की यात्रा शुरू करें-

1.पहला अनुकरण : लिंग-भेद रहित संस्कृति तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण एवं अनुकरण विमर्शालय स्थापना किये जाने की सामाजिक मान्यता का परंपरागत पालन

इस अनुकरण के अनुसार जीवन की किसी भी परिस्थिति के किसी भी संदर्भ एवं प्रसंग में महिला या पुरुष होने के आधार पर किसी भी प्रकार के सांस्कृतिक कृत्यों को संपादित किये जाने में लिंग-भेद की निषेधता का पालन किया जाता है तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण तथा इसके अनुकरण के औचित्य आदि पर विचार करने के लिये विमर्शालय की स्थापना किया जाना भी इसी अनुकरण का एक अनिवार्य भाग माना जाता है।

दूसरा यह कि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों को मानने वाले समुदाय द्वारा अपनी बसाहट में अपने सदस्यों के लिये इस सामाजिक प्रणाली के शिक्षण-प्रशिक्षण तथा इसकी साधना के लिये स्थानीय नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण अनुकरण विमर्शालय की स्थापना किया जाना भी इस अनुकरण का एक आंशिक भाग है।

सहायक अनुकरण - 1

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली (New Ambilineal Descent System) को मानने की संस्कृति में, व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ एवं प्रसंग में महिला एवं पुरुष को एक समान अधिकार के उपभोग एवं एक समान कर्तव्यों के निर्वहन करने हेतु प्रतिपादित सामाजिक मान्यताओं वाली संस्कृति का पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 2

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले लोगों के द्वारा एक स्थानीय नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण तथा अनुकरण विमर्शालय का निर्माण करके उसके संचालन का प्रबंधन करते हुये उसमें

सदस्यता पंजीयन तथा वहां जाकर इसमें प्रतिदिन आयोजित होने वाले विमर्श में सम्मिलित होने की संस्कृति का पालन किया जाना चाहिए।

सहायक अनुकरण - 3

इस प्रणाली को मानने वाले सदस्यों के विवाह, इसी प्रणाली की विवाह रीतियों के अनुसार हमेशा 6 मार्च को इन्हीं नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण तथा अनुकरण विमर्शालय से ही संपन्न किये जाने की संस्कृति का अनुकरण किया जाना चाहिए।

सहायक अनुकरण - 4

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली में लिंग-भेद रहित आधारित सामाजिक मान्यता के कारण, विशेषकर महिलाओं के लिये उन सभी सांस्कृतिक कृत्यों के अभ्यास पर पूर्णतः प्रतिबंध होते हैं, जो कृत्य मात्र महिलाएं करती हैं, पुरुष नहीं।जैसे-महिलाओं के द्वारा सौलह श्रृंगार किये जाने वाली पुरुष प्रधान संस्कृति का पालन किये जाने की अनिवार्यता।

2.दूसरा अनुकरण:अतिथि प्रदत्त उपहार ग्रहण निषेधता सह सुविचार के रूप में उपहार स्वीकार्यता पालन

इस अनुकरण के अनुसार भारतीय संस्कृति के अनूठे आदर्श 'अतिथि देवो भव:' को चरितार्थ करने के उद्देश्य से किन्हीं भी अतिथियों से कोई भी वस्तु या नक़द के रूप में उपहार ग्रहण न करना, अपितु उन्हें अपने सामर्थ्य के अनुसार कुछ उपहार देने तथा उनके सुविचारों को उनके उपहार के रूप में स्वीकार किये जाने की संस्कृति का पालन किया जाता है।

3.तीसरा अनुकरण : लिंग रहित वंश संबद्धता पालन

इस तीसरे अनुकरण के अनुसार माता-पिता की संततियों को, उनके माता या पिता की वंश संबद्धता ग्रहण करते समय पुत्र या पुत्री होने का कोई प्रतिबंध नहीं होता। अर्थात लिंग रहित आधार पर दोनों-पुत्र एवं पुत्री में से कोई भी, माता या पिता की वंश संबद्धता को चुन सकते हैं।

4 .चौथा अनुकरण : स्वचयनित या विमर्शीय वंश संबद्धता की जन घोषणा, नव उभयवंशीय संबंध-संबोधन सह ताम्र बंधन धारण स्वीकार्यता पालन

इस अनुकरण के अनुसार संतितयो (संतानों / वंशवाहको) के वयस्क होने पर उनकी इच्छा से या माता-पिता से विमर्श करने के उपरांत माता या पिता से संबंधित वंश की तथाकथित चार वंशों में से किसी एक की संबद्धता स्वीकार करने की सामाजिक मान्यता का पालन किये जाने की घोषणा करने के लिये कार्यक्रम का आयोजन किया जाता है। जिसमें स्वचयनित वंश संबद्धता की घोषणा करने के साथ संततियों के बायें हाथ में ताम्र बंधन धारण करवाया जाता है। संततियों के विवाह होने पर, ये ताम्र बंधन पारस्परिक रूप से बदलवाकर उनके जीवन साथियों के एक-दूसरे के दायें हाथों में पहनवा दिये जाते हैं। अर्थात बायें हाथ में ताम्र बंधन होने का अर्थ है कि संतति अविवाहित है और दायें हाथ में ताम्र बंधन होने का अर्थ है कि उक्त संतति विवाहित है।

इस सामाजिक प्रणाली की इस सामाजिक मान्यता के अनुसार ताम्र धातु को स्वास्थ्य और दीर्घायु का प्रतीक माना जाता है।

इस अनुकरण के अनुसार माता के माता-पिता से संबंधित माता-पिता को क्रमशः मातामही तथा मातामह एवं पिता के माता-पिता को क्रमशःपितामही तथा पितामह आदि नामों से संबोधित किया जाता है।

अन्य दोनों ओर के संबंधों को इस सूची के अनुसार संबोधित किये जाते हैं - पति-पत्नी के आपसी संबंध-संबोधन को छोड़कर, दोनों ओर के तथा किसी भी प्रकार के संबंध के नाम के पूर्व पिता सदृश्य, मां सदृश्य, भाई सदृश्य तथा बहन सदृश्य आदि चारों संबंध सूचक शब्द समूह प्रयुक्त करने होते हैं। जैसे-

1. संपूर्ण सामाजिक समानता प्राप्त बेटी (Complete social equality having daughter)
2. संपूर्ण सामाजिक समानता प्राप्त बेटा (Complete social equality having son)

3. अतिथि पति (Guest husband)
4. अतिथि पत्नी (Guest wife)
5. अतिथि बहू (Guest daughter-in-law)
6. अतिथि जमाई (Guest son-in-law)
7. पिता सदृश्य जीजा जी
8. बहन सदृश्य साली
9. मां सदृश्य भाभी जी
10. भाई सदृश्य देवर
11. पिता सदृश्य मौसा जी
12. मां सदृश्य मौसी जी
13. पिता सदृश्य मामा जी
14. मां सदृश मामी जी
15. पिता सदृश्य ससुर जी
16. मां सदृश्य सास जी
17. बेटी सदृश बहू
18. पिता सदृश जेष्ठ जी
19. भाई सदृश्य गुरु भाई
20. बहन सदृश्य गुरु बहन
21. मां सदृश्य बड़ी सास
22. भाई सदृश्य साढू भाई
23. पिता सदृश्य गुरू एवं
24. भाई सदृश्य मित्र आदि-आदि।

सहायक अनुकरण - 1

इस सामाजिक प्राणाली के इस सहायक अनुकरण के अनुसार समतावादी विवाह के पश्चात, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली में प्रचलित संबंध-संबोधन जैसे-पति, पत्नी, बहू, जमाई तथा घर जमाई जैसे लिंग-भेदात्मक सामाजिक

संबंध-संबोधन का उपयोग करना वर्जित माना जाता है। इसके बदले नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण आधारित संबंध-संबोधन संस्कृति का पालन किया जाता है। जैसे-अतिथि पति, अतिथि पत्नी, अतिथि बहू तथा अतिथि जमाई आदि।

यहां नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार अतिथि पति, अतिथि पत्नि, अतिथि बहू तथा अतिथि जमाई एवं पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं में प्रयुक्त होने वाले संबंध-संबोधन के अनुसार पति, पत्नि, बहू, जमाई तथा घर जमाई आदि सामाजिक अवधारणा के मध्य कुछ व्यवहारिक मौलिक अंतरों को समझने का प्रयत्न करें, जिससे कि महिला के रूप में जन्मी बेटी को दोनों तथाकथित संबंध-संबोधनों के व्यवहारिक अवधारणात्मक अर्थों को समझने के पश्चात् दोनों में से स्वयं के लिये, जो उपयुक्त संबंध-संबोधन वाली सामाजिक प्रणाली प्रतीत हो।अर्थात जो सामाजिक प्रणाली महिला के लिये संपूर्ण सामाजिक समानता दिलाने का समर्थन करती हो, के लिये चुना जाना चुना जाना चाहिए।

इन दो प्रकार की सामाजिक संबंध-संबोधन की अवधारणाओं के मध्य अंतर को समझने के लिये इनमें प्रयुक्त होने वाले संबंध-संबोधन वाले शाब्दिक पदों के सामाजिक अवधारणात्मक अर्थों को पितृवंशीय तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणालियों में प्रयुक्त होने वाले अर्थों के रूप में समझना अति आवश्यक है।

(अ) पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली में प्रयुक्त होने वाले पारिवारिक संबंध-संबोधनात्मक शाब्दिक पदों के अवधारणा का अर्थ-

(1) पिता-अविवाहित बच्चों के साथ परिवार का एक मात्र मुखिया तथा निर्णयकर्ता, सभी पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की मान्यताओं का संरक्षक तथा क्रियान्वयक।

(2) माता-एक परिवार में जन्मी संततियों को जन्म देने वाली मां, जिसके माता-पिता के द्वारा उसे पराया समझने के कारण, उसे बेटे के समान संपूर्ण सामाजिक समानता प्राप्त नहीं होती

है। उसे विवाह के समय उपहार के नाम पर कुछ देकर पति के संरक्षण में सौंप कर उसके संदर्भ में दायित्व मुक्त हो जाते हैं। अर्थात् उसके पति के परिवार की पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सभी सामाजिक मान्यताओं की अनुयायी के तौर पर, उसे दास के सदृश उसका संपूर्ण जीवन व्यतीत करना होता है।

(3) बेटा-जिसे मात्र पिता के वंश को आगे बढ़ने वाला कुल का दीपक माना जाता है, जो परिवार का वंश वाहक तथा आगामी मुखिया होता है।उसे बेटी की अपेक्षा अधिक महत्व वाला समझा जाता है।ऐसे परिवारों में, बेटे की चाह में, दो-दस बेटियों का जन्म दिया जाना या अवैध तरीके से लिंग-परीक्षण कराये जाने के पश्चात, बेटी ज्ञात होने पर उनका प्रायःगर्भपात भी करवा दिया जाता है।

(4) बेटी-जिसके जन्म होने की संभावना को भी मां के द्वारा पराया समझा जाता है। उसे बेटे के सामान कुछ सुविधायें देकर, दिखावे के तौर पर बेटे के समान मानने का परंपरागत रूप से झूठा विश्वास दिलाया जाता है।

(5) पति-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार पत्नी का, पति परमेश्वर माना जाता है। पत्नी का पति के रूप में एक दांपत्य साथी होने के साथ एक समय में एक से अधिक पत्नियां रखने की सामाजिक मान्यता एक तरफा निर्णायक तथा साधक।

(6) पत्नी-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं के अनुसार पति तथा सास-ससुर की सेविका, पति की दांपत्य साथी तथा पति प्रेरित निर्णय पालक।

(7) बहू-घर जमाई की तरह, सभी के लिये घर बहू की तरह रखने की सामाजिक परंपरा तथा इसके माता-पिता के यहां सीखी

हुई जीवंत संस्कृति का त्याग करके, पति के यहां की जीवंत संस्कृति की दास सदृश्य अनुयायी।

(8) जमाई- बेटी के माता-पिता वालों के लिये अतिथि की तरह जीवन जीने की जीवंत संस्कृति का अनुयायी तथा स्वयं के माता-पिता की पारिवारिक संस्कृति को पत्नी की मतारोपित सहमति या असहमति के साथ उक्त संस्कृति को मनवाने वाला बेटी का पति।

(9) घर जमाई-बेटी के भाई न होने की स्थिति में, बेटी का विवाह करने के पश्चात उसके पति को हमेशा के लिये घर बुलाकर रखने वाली भूमिका का निर्वहन करने वाला बेटी का पति और इसके पश्चात यदि उनके यहां बेटी तथा बेटे दोनों का जन्म हो तो, फिर बेटी को, पराया मानते हुये, उसे किसी लड़के के साथ विवाह करके, उसके माता-पिता के हाथों घर बहू के रूप में जीने के लिय सौंप देने की लिंग-भेदात्मक परंपरा का निर्वहन करने वाला बेटी का पति।

(10) परदादा/दादा-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का अभ्यासी, जो पिता का दादा या पिता का पिता है।

(11) परदादी/दादी-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की अभ्यासी, जो पिता की दादी या पिता की मां है।

(12) परनाना/नाना-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का अभ्यासी, जो माता का दादा या माता का पिता है, जो उसकी बेटी के प्रति दायित्वहीन है।

(13) परनानी/नानी-पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की अभ्यासी माता की दादी या माता की मां है, जो उसकी बेटी के प्रति दायित्वहीन माता है।

(ब) नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली में प्रयुक्त होने वाले संबंध-संबोधनात्मक शाब्दिक पद समूह के सामाजिक अवधारणात्मक अर्थ-

(1) पिता-नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक पिता

(2) माता- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक माता

(3) बेटा- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक बेटा

(4) बेटी- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक बेटी

(5) अतिथि पति- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का साधक पति

(6) अतिथि पत्नी- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की साधक पत्नी

(7) अतिथि बहू- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक बहू अर्थात विवाह के पश्चात पति के माता-पिता के संदर्भ में जीवनपर्यंत, अतिथि की हैसियत के रूप में, अतिथि बहू की भूमिका की निर्वाहक अर्थात पति के घर अतिथि बहू या अतिथि पत्नी की भूमिका के निर्वहन अवधि में, यदि उसकी मृत्यु हो जाती है, तो भी उसके वंशवाहक द्वारा उसके अंतिम संस्कार की रीति को, उसके पति की ही भांति उसकी जन्मभूमि पर संपन्न कराने की सामाजिक मान्यता की समर्थक तथा अभिलाषी।

(8) अतिथि जमाई-नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक जमाई अर्थात विवाह के पश्चात पत्नी के माता-पिता के संदर्भ में जीवनपर्यंत, अतिथि की हैसियत के रूप में, अतिथि जमाई की भूमिका का निर्वाहक अर्थात पत्नी के घर अतिथि जमाई या अतिथि पति की भूमिका के निर्वहन अवधि में, यदि उसकी मृत्यु हो जाती है, तो भी उसके वंश वाहक द्वारा उसके अंतिम संस्कार की रीति को, उसकी पत्नी की ही भांति उसकी जन्मभूमि पर संपन्न कराये जाने की सामाजिक मान्यता का समर्थक तथा अभिलाषी।

(9) प्रपितामह/पितामह- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक, पिता का पितामह या पिता का पिता, जो व्यक्ति के संदर्भ में बेटी को भी बेटे के समान, संपूर्ण सामाजिक

समानता के साथ जीवन जीने देने की भूमिका का निर्वाहक

(10) प्रपितामही/पितामही-नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक पिता की मातामही या पिता की मां, जो व्यक्ति के संदर्भ में बेटी को भी बेटे के समान, संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीवन जीने देने की भूमिका की निर्वाहिका तथा अभिलाषी

(11) प्रमातामह/मातामह-नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक, माता का पितामह या माता का पिता, जो व्यक्ति के संदर्भ में बेटी को भी बेटे के समान, संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीवन जीने देने की भूमिका का निर्वाहक

(12) प्रमातामही/मातामही- नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक, माता की मातामही या माता की माता, जो व्यक्ति के संदर्भ में बेटी को भी बेटे के समान, संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीवन जीने देने की भूमिका का निर्वाहिका

हिंदू समाज में प्रचलित पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली तथा मेरे द्वारा प्रतिपादित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली में, प्रयुक्त होने वाले संबंध-संबोधनात्मक शाब्दिक पदों के सामाजिक संदर्भ में, प्रयुक्त होने वाले व्यवहारिक अर्थों को समझने के उपरांत, हिंदू समाज का प्रत्येक व्यक्ति तथा एक बेटी आसानी से इस निष्कर्ष पर पहुंच सकती है कि बेटी के लिये संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ मात्र नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के रूप में प्रतिपादित सामाजिक मान्यताओं के साथ जीने के विकल्प को चुना जाना ही युक्ति-युक्त तथा न्यायसंगत होगा।

सहायक अनुकरण - 2

इस सामाजिक प्रणाली के अंतर्गत सामाजिक मान्यता के अनुसार विवाह में सोने और चांदी के गहनों को पहनना और उपयोग करना वर्जित है।

नोट- संततियों के द्वारा विवाह के पूर्व अथवा विवाह के पश्चात वंश संबद्धता जन-घोषणा कार्यक्रम आयोजित करके विशेष परिस्थितियों में वंश संबद्धता किसी भी पीढ़ी में किसी भी समय परिवर्तित की जा सकती है। जैसे किसी वंश वाहक की विवाह के पूर्व मृत्यु होने पर या माता-पिता के द्वारा गरिमामयी जीवन न जीने की स्थिति में।

5.पांचवा अनुकरण : पंचम या सप्तम पीढ़ी सम उपनामीय समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) निषेधता-

माता-पिता की संततियों के पृथक-पृथक वंशवाहको की संततियों में पारस्परिक समतावादी विवाह की सामाजिक स्वीकार्यता तो होती है, लेकिन उक्त वंशवाहको के व्यक्तियों की 5 या 7 पीढ़ी के अंदर वाली संततियों में पारस्परिक समतावादी विवाह नहीं होने चाहिए।

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली विधि के अंतर्गत लिंग-भेद रहित वंश लेखन समझाने के लिए मैंने कीर जाति के लोगों (जो परंपरागत रूप से पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करते हैं) में ऐतिहासिक रुप से प्रचलित 22 गोत्रों (उपनामों) एवं 7 विलुप्त गोत्रों (उपनामों) की सत्यापित सूची, जिसे दायमा गोत्र (उपनाम) के पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के कुल वंश लेखक श्री शिव प्रसाद राव, मो. 7726830835, राजस्थान के माध्यम से सत्यापित करवाने के पश्चात यहां उल्लेखित की गई है, जिसमें निम्नलिखित गोत्र (उपनाम) सम्मिलित हैं। नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली में इन्हें मात्र उपनाम कहा जाता है, गोत्र नहीं।

प्रचलित गोत्र (उपनाम) -

1. हाड़ा (उवाल/उआड़)
2. भलंग
3. गांगल्या
4. आंकड़ा (आंकरे)
5. मोची (चौहान)

6. सड़कावन
7. नमचुलिया (निमचूड़िया/निमोदा)
8. नायर
9. बामण (बामन)
10. हिकड़िया
11. मान्या
12. दायमा
13. बाण्या (बानिया)
14. लोरिया
15. चाँदना
16. गाडरी
17. जाट
18. माली
19. डोड
20. रात्या
21. तलियारा
22. बियालछिया

विलुप्त गोत्र (उपनाम) -

1. ऐब
2. गेब
3. चालकिया
4. काचरिया
5. पहाड़िया

6. पिपनिया

7. धाबन

कीर जाति के सभी लोग परंपरागत रूप से पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं को मानते रहे हैं, लेकिन मेरे द्वारा इसे समाज की सभी मां-बेटियां के लिये सांस्कृतिक (परंपरागत) रूप से लिंग-भेद किये जाने के लिये उत्तरदायी मानते हुये, 12 अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) वाली नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली को प्रतिपादित करते हुये, उसे इससे प्रतिस्थापित (Replaced) करके मेरे तथा मेरी पत्नी के द्वारा मेरी मां-स्वर्गीय श्रीमती नथिया बाई कीर, जिनका उपनाम 'नायर' है तथा मेरी पत्नी की मां-श्रीमती शांता बाई कीर, जिनका उपनाम निमचूड़िया है-के उपनामों के साथ हमारे द्वारा उनकी पृथक-पृथक एकल मातृ वंश संबद्धताओं को ग्रहण करते हुये, क्रमशःइन्हीं उपनामों के साथ मेरी दो बेटियों-कु.संघमित्रा कीर नवीन तथा कु.जिजीविषा कीर नवीन के द्वारा भी हमारी पृथक-पृथक वंश संबद्धताओं को ग्रहण करते हुये एक लिंग-भेद रहित सामाजिक वंश लेखन की नवीन सांस्कृतिक परंपरा की शुरुआत की गई है। इस सामाजिक प्रणाली के अनुसार मेरी कीर जाति के परंपरागत वंश लेखक (राव) के द्वारा नीचे वर्णित प्रारूप में हमारे वंश लेखन के कार्य को भी अभिलेखित किये जाने की परंपरा स्थापित की गई।

उक्त विधि से नीचे वर्णित वंश लेखन के उदाहरण में 'नायर' तथा 'निमचूड़िया' उपनामों का उपयोग करते हुये क्रमांक (1) के अंतर्गत वंश लेखन प्रारूप **'अ'** तथा प्रारूप **'ब'** को प्रयुक्त करके क्रमशः दो काल्पनिक माता-पिता, पूर्व सिंह कीर तथा उमा देवी कीर की तीन नव उभयवंशीय पीढ़ियों के वंश लेखन का व्यावहारिक उदाहरण तथा क्रमांक (2) में इसी विधि से वंश लेखक के द्वारा वंश लेखन करने में प्रयुक्त किये जाने के लिये क्रमशःदो रिक्त प्रारूप- **'अ'** तथा **'ब'** भी मुद्रित किये गये हैं, ताकि किन्हीं भी माता-पिता के द्वारा पहली बार नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ग्रहण करने पर, उनके द्वारा इस विधि से उनके वंश लेखन करने या करवाने में सबसे पहले स्वयं को एक पीढ़ी मानते हुये तथा स्वयं की संतति को दूसरी पीढ़ी मानते हुये **'अ'** नामक रिक्त प्रारूप को वंश लेखन में प्रयुक्त किया जा सके है, और यदि दो बच्चे हैं, तो एक ही रिक्त प्रारूप **'अ'** प्रयुक्त होता

है।यदि दो से अधिक बच्चे हैं, तो उक्त परिवार के वंश लेखन में प्रति एक या दो और अधिक बच्चों की वंश संबद्धता अभिलेखित करने के लिये आवश्यकता अनुसार अतिरिक्त **'अ'** नामक रिक्त प्रारूप की प्रति प्रयुक्त होती है। संततियों के विवाह किये जाने के संदर्भ में तीसरी तथा तीसरी पीढ़ियों के आगे अनंत पीढ़ियों के वंश लेखन के लिये प्रारूप-**'ब'** के प्रयुक्त की पुनरावृत्ति की जाती है। जैसे –

1. पितृवंशीय सामाजिक प्रणालीय वंश का नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणालीय वंश लेखन विधि से प्रतिस्थापन . का उदाहरण –

(अ) पृ सं...

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ग्रहण दिनांक/परंपरागत.....

पीढ़ी ⬇	नव उभयवंशीय एकल /दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही ⬇	संतति ⬇	नव उभयवंशीय एकल / दोहरी/चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही ⬇	पीढ़ी ⬇
1. ⬇	1.पूर्व सिंह (एकल मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 1. उपनाम: नायर 2. संतति सं.:म.1 +पु ⬇	⬇ संतत ⬇	1.उमा देवी(एकल मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: निमचूड़िया 3.संतति सं.:म.1+पु. ⬇	1. ⬇
⬆ माता पिता	⬆ 1.पिता+माता:छवि +नंदिता बाई 2.उपनाम: दायमा+ नायर 3.संतति सं.:म.4 +पु.4	⬇ संतति ⬇	⬆ 1.पिता+माता: शिव+शांतिका 2.उपनाम:बानिया+ निमचूड़िया 3.संतति सं.:म.5+पु.2	⬆ माता पिता
2. ⬇	1.कु.संघिता(एकल पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: नायर 3.संतति सं.:म.2+पु. ⬇	↲ ↳ ⬇	1.कु.जिजिता(एकल.मातृ.वंशसंबद्धताग्राही) 2.उपनाम: निमचूड़िया 3.संतति सं.:म.2 +पु. ⬇	2. ⬇

संलग्न

(ब) **पृ सं...**

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली ग्रहण दिनांक/परंपरागत.....

विवाह ⬆	समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) ⬆	संतति ⬇	समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) ⬆	विवाह ⬆
⬆ **संतति**	⬆ 1.कवि(एकल मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: दायमा 3.संतति सं.:म.1 +पु.1	⬇ संतति ⬇	⬆ 1.विवेक(एकल.मातृ.वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम:दायमा 3.संतति.सं.:म.1+ पु.1	⬆ संतति
⬆ **माता पिता**	⬆ 1.पिता+माता: दिव्य+प्रभा 2.उपनाम:बानिया+ दायमा 3.संतति.सं.:म.1+पु.1	⬇ संतति ⬇	⬆ 1.पिता+माता: विजय+संहिता 2.उपनाम:बनिया+ दायमा 3.संतति.सं.:म.1+पु.1	⬆ माता पिता
3. ⬇	1.राहुल(एकल मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम:नायर 3.संततिसं.:म...+पु.... ⬇	↲ ↳ ⬇	1.तथागत(एकल मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम:निमचूड़िया 3.संतति सं.:म..+पु... ⬇	**3.** ⬇

संलग्न

2. पितृवंशीय सामाजिक प्रणालीय वंश लेखन विधि का नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणालीय वंश लेखन से प्रतिस्थापन करने हेतु रिक्त प्रारूप-

(अ) पृ. सं.....

नव.उभयवंशीय.सामाजिक.प्रणाली.ग्रहण दिनांक/परंपरागत.....

⬇ पीढ़ी ⬇	नव.उभयवंशीय एकल/दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही ⬇	संतति ⬇	नव उभयवंशीय एकल/दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही ⬇	⬇ पीढ़ी ⬇
1. ⬇	1.....(एकल/दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति.सं.:म..+पु... ⬇	⬇ संतति ⬇	1.....(एकल/दोहरी/चतुर्वंशीय मातृ/पितृ / मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति.सं.:म..+पु... ⬇	**1.** ⬇
⬆ माता पिता	⬆ 1.पिता+माता:...+. 2.उपनाम:.....+... 3.संतति सं.म..+पु.	⬇ संतति ⬇	⬆ 1.पिता+माता:..+.. 2.उपनाम:.....+... 3.संतति सं.म..+पु.	⬆ माता पिता
2. ⬇	1.....(एकल/दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति सं.:म....+पु... ⬇	↲ ↳ ⬇	1.....(एकल/दोहरी /चतुर्वंशीय/मातृ/पितृ/मातृ-मातृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति सं.:म....+पु... ⬇	2. ⬇

संलग्न

(ब) **पृ सं.....**

नव.उभयवंशीय.सामाजिक.प्रणाली ग्रहण दिनांक/परंपरागत.....

⬇ विवाह ⬆	⬇ समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) ⬆	⬇ संतति ⬇	⬇ समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) ⬆	⬇ विवाह ⬆
⬆ संतति	⬆ 1.....(एकल/दोहरी/चतुर्वंशीय.मातृ/पितृ/मातृ-पितृवंश.संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति सं.:म..+पु..	⬇ **संतति** ⬇	⬆ 1.....(एकल/दोहरी/चतुर्वंशीय.मातृ/पितृ/मातृ-पितृ.वंश.संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संतति सं.:म..+पु..	⬆ संतति
⬆ **माता पिता**	⬆ 1.पिता+माता:..+... 2.उपनाम:....+..... 3.संतति सं:म..+पु.	⬇ **संतति** ⬇	⬆ 1.पिता+माता:..+.. 2.उपनाम:....+..... 3.संततिसं.:म.+पु..	⬆ माता पिता
⬇	1.....(एकल/दोहरी/चतुर्वंशीय मातृ/ पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संततिसं.:म...+पु... ⬇	↲ ↳ ⬇	1.....(एकल/दोहरी/ चतुर्वंशीय मातृ/ पितृ/मातृ-पितृ वंश संबद्धता ग्राही) 2.उपनाम: ..... 3.संततिसं.:म...+पु... ⬇	⬇

संलग्न

सहायक अनुकरण - 1

एक ही माता-पिता की संततियों के पृथक-पृथक उपनाम होने के उपरांत भी उनकी आगामी कम से कम पांच या अधिकतम सात पीढ़ियों तक आपस में समतावादी वैवाहिक संबंधों की निषेधता का पालन किया जाता है। छठवीं या आठवीं पीढ़ियों के वंशवाहकों की संततियों के आपस में समतावादी वैवाहिक संबंध स्थापित हो सकते हैं। फिर भी लड़के तथा लड़कियों के उपनाम पृथक होने चाहिए।

सहायक अनुकरण - 2

यदि माता-पिता के एक ही संतति है-बेटा या बेटी, तो इस एक ही संतति के द्वारा दोनों माता-पिता की पृथक-पृथक वंश संबद्धता ग्रहण करने की सामाजिक मान्यता का पालन करना होता है। जब ऐसी संतति का समतावादी विवाह होता है, तो वे समतावादी विवाह करने वाले लड़के और लड़कियां दोनों ओर के माता-पिताओं की पांचवी अथवा सातवी में पीढ़ी के बाहर के होने चाहिए।पीढ़ियों की गणना करने के लिये, जिन लड़के लड़कियों का आपस में विवाह किया जाना है, उन्हें अपने-माता-पिता की ओर से प्रथम पीढ़ी के माने जाने चाहिए।

6.छठवां अनुकरण : मातृ-पितृ सहमति, सहभागिता या संज्ञानता समर्थित समतावादी विवाह की स्वीकार्यता पालन

इस अनुकरण के अनुसार संतति, विशेष कर बेटी के लिये, बेटी के द्वारा या बेटी के माता-पिता एवं संरक्षक के द्वारा सुरक्षित तरीके से उपयुक्त नशामुक्त तथा अपराधमुक्त भावी पुरुष दांपत्य साथी की खोज में प्रत्येक बेटी को समाज के ऐसे अपराधिक परिवेश में विशेष कर उसके माता पिता या संरक्षक की सहमति, सहभागिता या संज्ञानता के बिना किसी भी पुरुष को उसके लिये दांपत्य साथी के रूप चुने जाने का निर्णय नहीं लिये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाना चाहिए, क्योंकि विशेष कर ऐसा न किये जाने से एक बेटी, विवाह के नाम पर पुरुष दांपत्य साथी तथा उसके परिवार पक्ष के द्वारा किये गये किसी गंभीर षड्यंत्र की शिकार न हो जाए ।

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली में इस अनुकरण को सम्मिलित करने का कारण तथा एक बेटी की अस्मिता तथा उसकी जीवन सुरक्षा में इसका इसका महत्व-

समाज के लोगों में एक सामान्य अवधारणा तथा किंवदंती सदियों से प्रचलित है कि प्यार अंधा होता है, इसलिए लड़के या लड़कियां प्यार में अंधे होकर किसी भी जाति तथा धर्म के व्यक्तियों से विवाह कर लेते हैं, लेकिन मेरे द्वारा तथ्यों के विश्लेषण उपरांत यह सामान्य अवधारणा तथा किवदंती भी लिंग-भेद आधारित प्रमाणित होती है, क्योंकि एक लड़की के द्वारा किसी अन्य जाति या धर्म के व्यक्ति के साथ विवाह करने पर, लड़की विशेष की उसके पिता से प्राप्त परंपरागत सामाजिक पहचान के नाम पर उसके नाम के साथ प्रयुक्त होने वाले उपनाम, जाति तथा धर्म उन्मूलित होते हुये, उक्त लड़की के स्वयं के द्वारा या उस लड़की के दांपत्य साथी के द्वारा पति पक्ष के उपनाम, जाति तथा धर्म ग्रहण करने या करवाये जाने के उदाहरण दृष्टिगोचर होते हैं।ऐसी स्थिति में उसके पुरुष दांपत्य साथी के उपनाम, जाति तथा धर्म उन्मूलित नहीं होते, तो ऐसी स्थिति में, प्यार में अंधे होने वाली सामान्य अवधारणा या किवदंती को सार्थक करने का दायित्व क्या महिला होने के नाते, एक लड़की के हिस्से में ही आता है ? पुरुष दांपत्य साथी के हिस्से में क्यों नहीं ? यदि ऐसा मात्र लड़की के द्वारा ही किया जाता है, तो लड़की के द्वारा ऐसा एक तरफा किया जाना भी लिंग-भेद के आगे एवं तथाकथित लड़के के प्रति उक्त लड़की द्वारा एक तरफा यौन आकर्षण (Sexual attraction) के वशीभूत होकर उसकी समाजिक समानता वाली गरिमा के आत्मसमर्पण की एक स्थिति को दिखाता है, और कुछ नहीं।

भारतीय संविधान में समानता के सिद्धांत के अनुसार उल्लेखित समानता के मौलिक अधिकार के आधार पर एक बेटी का अंतर्जातीय या अंतरधार्मिक विवाह होने के पश्चात उसका उपनाम, जाति तथा धर्म क्यों उन्मूलित हो जाते हैं ? उसके दांपत्य साथी के क्यों नहीं ? यदि नहीं तो, एक महिला के रूप में जन्मी बेटी के द्वारा ऐसे संदर्भ में विवाह के पश्चात स्वयं की स्वतंत्र सामाजिक पहचान के रूप में उसके उपनाम, जाति तथा धर्म लिंग-भेद होने के आधार पर इन्हें खोते हुये उसके पुरुष दांपत्य साथी से मतारोपित होते विवाह करना कहां तक उचित है ? पुरुष दांपत्य साथी की तरह, एक महिला दांपत्य साथी

को भी उसकी स्वतंत्र सामाजिक पहचान के रूप में उसके उपनाम, जाति तथा धर्म के साथ जीने के लिये भारतीय संविधान भी उसे अनुमति देता है ।

मेरी ओर से भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय से अनुरोध है कि संविधान की ओर से अन्य उल्लेखित अधिकारों के साथ समानता के मौलिक अधिकार के उपभोग करने के लिये कुछ पूर्व निश्चित आधारों के साथ 'लिंग-भेद' को भी नकारते हुये, सभी भारतीय महिलाओं तथा पुरुष नागरिकों को एक समान स्थिति में एक समान अधिकारों के साथ जीने के लिये, समानता का मौलिक अधिकार प्रदान किया है, लेकिन सामाजिक स्तर पर तथा कहीं-कहीं तथा कभी-कभी सरकारी स्तर पर भी महिलाओं के साथ आज भी लिंग-भेदात्मक व्यावहार दिखाई देता है। इसलिये इस संदर्भ में मेरी ओर से भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय से अनुरोध है कि स्वत: संज्ञान लेते हुये व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में यदि किसी महिला को पुरुषों के समान, समानता के मौलिक अधिकार के शत-प्रतिशत उपभोग करने से वंचित किये जाने में व्यक्ति, सरकार तथा किसी सामाजिक संगठन की नकरात्मक भूमिका दिखाई दे , तो इस दिशा में महिलाओं को, पुरुषों के समान शत-प्रतिशत संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता के साथ जीने तथा इसके लिये सहज अवसर दिये जाने के लिये समय-समय तथाकथित व्यक्ति, सरकार तथा सामाजिक निकायों के लिये बाध्यकारी आदेश जारी करें, ताकि व्यक्ति, सरकार तथा समाज विशेष के निकायों तथा संगठनों के द्वारा सभी महिलाओं के लिये व्यावहारिक रूप से पुरुषों के समान संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने की सहज संस्कृति स्थापित हो सके।

एक बेटी के द्वारा स्कूल, कॉलिज, ऑफिस या किसी भी स्तर के बाहरी पृष्ठभूमि के लड़के या पुरुष के साथ माता-पिता की सहमति, सहभागिता या संज्ञानता के बिना कोई भी सतत् औपचारिक या अनौपचारिक संबंध रखते ऐसा संबंध उसकी अस्मिता तथा जीवन के लिए अति खतरनाक सिद्ध हो सकता है, क्योंकि राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सरकारों तथा विभिन्न अपराध घटित होने के आंकड़ों को संग्रहित करके उनके रोकथाम हेतु जनहित में सुझाव तथा सतर्कता रखे जाने आधारित रिपोर्ट्स के अवलोकन किये जाने से यह विदित होता है कि ऐसे कुल अपराधों में पुरुषों की लगभग 90% संलिप्तता दृष्टिगोचर होती है, जबकि महिलाओं की संलिप्तता लगभग

10% अवलोकित होती है।ऐसी स्थिति में किसी बेटी या लड़की के द्वारा ऐसे बाहरी पृष्ठभूमि वाले व्यक्तियों से मित्रता रखते उक्त पुरुष द्वारा प्रदर्शित इरादतन यौन आकर्षण के वशीभूत या ब्रेनवॉश्ड (मतारोपित) होकर ऐसे व्यक्ति की संपूर्ण ऐतिहासिक पृष्ठभूमि जाने बिना उसे दांपत्य साथी के रूप में चुने जाने का निर्णय कितना खतरनाक हो सकता है, इसका अनुमान एक बुद्धिमान, दूरदर्शी तथा जागरूक लड़की इस संभावित स्थिति का सहजता से अनुमान लगा सकती है।इस कारण किसी भी बेटी के द्वारा किसी भी व्यक्ति को एक दांपत्य साथी के रूप में चुने जाने की मानसिकता बनाने का निर्णय लेने के ठीक पूर्व , ऐसे किसी भी बाहरी पृष्ठभूमि वाले पुरुष या लड़के के साथ किसी अपरिहार्य कारणों से संबंध रखे जाने की बाध्यता का संज्ञान उक्त बेटियों-लड़कियों के माता-पिता तथा परिवार को होना अति आवश्यक है।ऐसा न होने से आये दिन समाचार पत्रों में समाज की इन बेटियों के साथ यौन दुष्कर्म तथा विभिन्न खतरनाक घटनाओं को वर्णित करते कई समाचार, दैनिक समाचार पत्रों में प्रकाशित होते रहते हैं।इस कारण बेटियों को उनकी अस्मिता, गरिमा तथा जीवन की सुरक्षा को ध्यान रखते हुये इस अनुकरण का पालन किया जाना चाहिए।

बेटियां प्रायःऐसे षड्यंत्र की शिकार स्कूल तथा कॉलिज में बॉयफ्रेंड-गर्लफ्रेंड संस्कृति की विवेकीन अंधी फैशनेबल दौड़ में सम्मिलित होते लड़कों को बॉयफ्रेंड बनाने तथा ऐसी मित्रता में लड़की की संलिप्तता की जानकारी परिवार के संज्ञान में न होने से प्रायः वे षड्यंत्र की शिकार हो जाती हैं।बेटियों या बेटियों के माता-पिता को जब षड्यंत्र का पता चलता है, तब तक बहुत देर हो चुकी होती है।इसलिये पुरुष प्रधान समाज में, विशेष कर बेटियों के बॉयफ्रेंड तथा ऑफिस कलीग आदि बाहरी पृष्ठभूमि वाले पुरुष व्यक्तियों के साथ अपरिहार्य कारणों से संबंध रखे जाने की बाध्यता भी हो , तो भी इसकी जानकारी उनके माता-पिता तथा परिवार के संज्ञान में होना अति आवश्यक है, जिससे कि किसी भी बेटी के साथ किसी भी बाहरी पृष्ठभूमि वाले पुरुष व्यक्ति के द्वारा किसी भी प्रकार के षड्यंत्र होने या न होने की स्थिति का उसकी सुरक्षा के संदर्भ में उसके परिवार के द्वारा ऐसे संबंधों का सतत् आकलन होता रहे।

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के इस अनुकरण में विशेष कर बेटी के लिये संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने के लिये उसके विवाह के प्रकार के रूप में समतावादी विवाह वाले प्रारूप (प्रकार) को उचित माना गया है। इस कारण से उसके इस प्रारूप वाले विवाह में उसके माता-पिता की सहमति सहभागिता या संज्ञानता को अति अनिवार्य माने जाने के समर्थन में निम्नलिखित तर्क या कारण प्रस्तुत किये जा सकते हैं।जैसे-

1. यदि किसी भी बेटी के द्वारा उसके माता-पिता की सहमति, सहभागिता या संज्ञान के बिना उसके किसी स्कूल, कॉलिज, ऑफिस या बाहरी पृष्ठभूमि के किसी पुरुष के साथ बॉयफ्रेंड के संबंध में रहते-रहते उसे दांपत्य साथी के रूप में चुन लेने का निर्णय अप्रत्याशित रूप से षड्यंत्रातमक सिद्ध हो सकता है, क्योंकि ऐसी स्थिति में अकेली बेटि के लिये, ऐसे व्यक्ति के जीवन के निजी नकारात्मक तथ्यों, जैसे-उसकी नशे की आदतें, किसी अपराध में उसकी संलिप्ता, किसी अन्य लड़की के साथ उसके अवैध संबंध की जानकारी, उसकी आर्थिक स्थिति, उसकी वैवाहिक स्थिति, उसकी धार्मिक पहचान आदि से संबंधित वास्तविक स्थितियों की सटीकता को जाने बिना ब्रेनवॉश्ड (मतारोपित) होते ऐसे पुरुष व्यक्ति के साथ विवाह कर लेना या उसे भावी दांपत्य साथी बनाने का निर्णय ले बैठना अति षड्यंत्रात्मक सिद्ध हो सकता है। इसलिये विशेष कर लड़कियों के द्वारा बॉयफ्रेंड-गर्लफ्रेंड संस्कृति मानने की अंधी दौड़ या फैशन से दूरी रखना तथा भावी दांपत्य साथी के चुनाव के निर्णय में माता-पिता तथा परिवार की सहमति, सहभागिता या संज्ञानता वाले विवाह को प्राथमिकता देनी चाहिए, ताकि बेटियां ऐसे तथाकथित बाहरी पृष्ठभूमि वाले पुरुष व्यक्तियों के द्वारा गर्लफ्रेंड-बॉयफ्रेंड संस्कृति को मानते भावी आदर्श दांपत्य साथी के नाम पर किसी अप्रत्याशित षड्यंत्र की शिकार न बन बैठें ।

2. ऐसी स्थिति में, ऐसे तथाकथित पुरुष व्यक्ति बेटियों को किसी भी प्रकार के षड्यंत्र का शिकार बना सकते हैं। जैसे-लड़कियों को नशे की दवा पिलाकर यौन शोषण करते मोबाइल कैमरे से आपत्ति

जनक अश्लील फोटो शूट करके, ब्लैकमेलिंग के नाम पर ऐसी पीड़ित लड़कियों को ब्लैकमेल करते उनकी अस्मिता के विरुद्ध उन्हें किसी भी प्रकार के यौन कृत्यों में संलिप्त कर लेना।

3. ऐसी स्थिति में किसी बाहरी पृष्ठभूमि की महिला या लड़की से

   भी बिना माता-पिता के संज्ञान में लाये किसी भी प्रकार से गोपनीयता दोस्ती रखने में, उक्त लड़की या महिला के द्वारा भी किसी बेटी के साथ कोई षड्यंत्र हो सकता है, क्योंकि किसी के विषय में गहनता से जाने बिना, चाहे कोई पुरुष हो या महिला, कोई भी अपराध हो सकता है, जब भारतीय समाज में कुल अपराधिक मामलों में पुरुषों की लगभग 90% संलिप्तता सिद्ध हो चुकी है, तो स्वाभाविक है कि अब लोग पुरुषों के द्वारा किये जाने वाले षड्यंत्रों से सावधान हैं, तो ऐसी स्थिति में आपराधिक पृष्ठभूमि के पुरुष व्यक्ति, कुछ आपराधिक पृष्ठभूमि की महिलाओं के सहयोग से पुरुषों, लड़कियों तथा महिलाओं को इनके षड्यंत्र का शिकार बना सकते हैं, इसलिये अनावश्यक रूप से बेटियों को बाहरी पृष्ठभूमि की अपरिचित लड़कियों तथा महिलाओं से भी किसी भी प्रकार के संबंध रखने से बचना चाहिए ।

4. ऐसी स्थिति में ऐसे तथाकथित पुरुष व्यक्ति किसी भी लड़की की आपत्तीजनक फोटो शूट करके उक्त फोटो को सोशल मीडिया पर अपलोड करके वायरल करने की धमकी जैसे ब्लैकमेल का सहारा लेकर, उन्हें किसी सेक्स रैकिट का शिकार बना सकता है।

5. ऐसी स्थिति में किसी बेटी के साथ संयोग से ऐसा न भी हो, परंतु ऐसे बेटी के द्वारा उसे दांपत्य साथी के रूप में चुने जाने पर, ऐसे तथाकथित पुरुष व्यक्ति के द्वारा बेटी को संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने की सहज संस्कृति शायद ही मिल सके।

6. ऐसी स्थिति में ऐसे तथाकथित पुरुष व्यक्ति के द्वारा उसका धर्म छिपा कर किसी बेटी से विवाह करके, बेटी को विवाह के पश्चात उसे उसके धर्म में धर्म परिवर्तन करवाने के लिये भी बाध्य करके

उसके दांपत्य जीवन को मानसिक रूप से प्रताड़ित कर सकता है।

7. ऐसे तथाकथित पुरुष व्यक्ति कई बार पहले से ही विवाहित होने की स्थिति में रहते, उसे दांपत्य साथी चुने जाने के पश्चात विवाह करने की अंतिम निर्णायक स्थिति में, उसके द्वारा ऐसी बेटी के साथ विवाह करने से इन्कार करके उसे उसके हाल में छोड़ देते हैं तथा उसके द्वारा पहले से ही बेटी के साथ लिये गये कुछ आपत्तिजनक फोटो को सोशल मीडिया पर वायरल करने की धमकी देकर, उसका किसी अन्य व्यक्ति के साथ विवाह होने के पश्चात भी कई प्रकार से यौन ब्लैकमेल करते रह सकते हैं। ऐसे तथाकथित व्यक्तियों के द्वारा किसी बेटी को किसी ट्रिप या पिकनिक के नाम पर किसी अज्ञात तथा एकांत स्थान पर ले जाकर उसके साथ किसी भी प्रकार का यौन दुष्कर्म कर सकते हैं, जैसे-बलात्कार तथा यौन छेड़-छाड़ आदि अपराधों को अंजाम दे सकते हैं। इसलिए सभी बेटियों को ऐसे तथाकथित बाहरी पृष्ठभूमिवाले व्यक्तियों से किन्हीं अपरिहार्य कारणो से संबंध रखे जाने की बाध्यता की जानकारी भी उनके माता-पिता के संज्ञान में होनी चाहिए, ताकि ऐसे तथाकथित व्यक्ति के द्वारा किसी बेटी के साथ किसी भी प्रकार के षड्यंत्र हो सकने की संभावना को उसके संरक्षकों या माता-पिता के द्वारा कम किया जा सके।

National Crime Records Bureau (NCRB) , राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो की स्थापना टंडन समिति, राष्ट्रीय पुलिस कमीशन (1977-1981) तथा गृह-मंत्रालय के टास्क फोर्स की सिफ़ारिश के आधार पर, अपराध और अपराधियों की सूचना के संग्रह एवं रख-रखाव (Repository) के रूप में कार्य करने हेतु 1986 में की गई थी, जिससे कि अपराध को अपराधियों से जोड़ने में सहायता मिल सके।तदनुसार, NCRB के द्वारा भारत में घटित होने वाले अपराधों के प्रकार वर्णित करती एक रिपोर्ट, जो 2023 में प्रकाशित हुई थी, जिसके आंकड़ों को यहां संदर्भित किया जाना अति प्रासंगिक है, जिससे कि भारत की महिलाएं तथा बेटियां तथ्यात्मक रूप से यहां के समाज के अपराधिक परिदृश्य का से परिचित होकर, किसी पुरुष विशेष के साथ

मित्रता रखने, न रखने या किसी पुरुष विशेष को दांपत्य साथी के रूप में चुने जाने के पूर्व उसके जीवन की आपराधिक पृष्ठभूमि तथा उसकी किसी नशे आदि में संलिप्तता की वास्तविक स्थिति को जान सकें तथा पुरुषों के द्वारा महिलाओं के साथ किये जाने वाले अपराधों की संख्या तथा प्रकार के विषय में कुछ प्रमाणित आंकड़ों से परिचित हो सकें।इस कारण से उक्त रिपोर्ट को यहां संदर्भित किया जा रहा है, जिस रिपोर्ट को NCRB की ऑफिशल वेबसाइट:https://ncrb.gov.in से एक्सेस किया जा सकता है-

NCRB रिपोर्ट 2023- देश में 7% क्राइम बढ़ा:हत्या में यूपी, दुष्कर्म में राजस्थान आगे; महिलाओं के खिलाफ अपराध ने 10 साल का रिकॉर्ड तोड़ा-

नेशनल क्राइम रिकॉर्ड्स ब्यूरो (NCRB) ने भारत में 2023 के दौरान हुए अपराधों की रिपोर्ट को सार्वजनिक किया । रिपोर्ट के मुताबिक, 2023 में देश में कुल 62 लाख 41 हजार 569 अपराध दर्ज हुए। ये 2022 की तुलना में 7.2% ज्यादा हैं।

देश भर में महिलाओं पर 4.48 लाख अपराध दर्ज हुए, जो 10 साल में सबसे ज्यादा हैं। दुष्कर्म के मामलों में राजस्थान (5, 078 केस) का पहला स्थान है। हत्या के मामले में यूपी (3, 206 केस) सबसे आगे है।

वहीं, देश भर में बड़े क्राइम जैसे हत्या, दुष्कर्म और लूट के मामलों में कमी देखी गई है। हालांकि, इनमें दुष्कर्म के केस सबसे ज्यादा दर्ज किए गए। दूसरे नंबर पर हत्या और तीसरे पर लूट के केस दर्ज हुए।

हत्या-अपहरण के मामलों में यूपी-बिहार ऊपर-

इस रिपोर्ट के मुताबिक राज्यों में हत्या और अपहरण के मामलों में उत्तर प्रदेश और बिहार सबसे ऊपर हैं। यानी गंभीर अपराधों की संख्या अन्य राज्यों की तुलना में इन दोनों राज्यों में सबसे अधिक है। इसके अलावा, सड़क दुर्घटनाओं के मामलों में भी यूपी टॉप पर है, जो राज्य में बढ़ती ट्रैफिक और सुरक्षा व्यवस्था की चिंताओं को दर्शाता है।

देश में साइबर क्राइम के 86, 420 केस दर्ज देशभर में साइबर क्राइम के मामलों में 31 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई है। 2023 में कुल 86, 420 केस दर्द किए गए। साइबर के माध्यम से हत्या के मामले में यूपी, दुष्कर्म में राजस्थान

और लूट में महाराष्ट्र सबसे आगे रहा। देश में सबसे कम साइबर क्राइम सिक्किम में दर्ज किए गए।

बच्चे के साथ होने वाले यौन अपराध तेजी से बढ़ रहे हैं-

2023 में बच्चों के खिलाफ अपराधों की दर 39.9 प्रति एक लाख बाल जनसंख्या रही, जो 2022 में 36.6 थी। इन मामलों में अपहरण (79, 884, 45%) और पॉक्सो एक्ट के तहत अपराध (67, 694, 38.2%) सबसे प्रमुख रहे।

अधिकतर अपराधी पीड़ित के जानपहचान के लोग थे। कुल 40, 434 मामलों में 39, 076 मामलों में आरोपी जानकार थे। 3, 224 में परिवार के सदस्य, 15, 146 में परिवार के जानने वाले और 20, 706 में दोस्त आदि थे।

बच्चों पर अपराध में मध्य प्रदेश पहले नंबर पर-

रिपोर्ट के अनुसार, 2023 में बच्चों पर अपराध के 1.77 लाख केस दर्ज हुए, जो 2022 में 1.62 लाख थे। यानी एक साल में 9.2% की बढ़ोतरी हुई, जो महिलाओं और बुजुर्गों के मुकाबले सबसे ज्यादा है। वहीं, राज्यों में अकेले मध्य प्रदेश मे 22, 393 केस सामने आए हैं। बच्चों के खिलाफ हर दिन औसतन 486 और हर तीन मिनट में एक अपराध दर्ज हुआ।

दहेज से जुड़े अपराध 14% बढ़े दहेज से जुड़े अपराधों में 2023 में 14% की बढ़ोतरी हुई है। 2023 में 15, 489 दहेज से जुड़े मामले दर्ज हुए और 6, 100 से ज्यादा महिलाओं की मौत हुई। 2022 में 13, 479 और 2021 में 13, 568 मामले दर्ज हुए थे। दहेज के मामले में उत्तर प्रदेश सबसे ऊपर रहा, जहां 7, 151 मामले दर्ज हुए।

इसके बाद बिहार 3, 665 और कर्नाटक 2, 322 का स्थान रहा। वहीं, 13 राज्यों और केंद्र शासित प्रदेशों में 2023 में एक भी दहेज का केस दर्ज नहीं हुआ। वहीं, 6, 156 महिलाओं की मौत दहेज विवाद में हुई। अकेले उत्तर प्रदेश में 2, 122 और बिहार में 1, 143 मौतें दर्ज की गईं।

दहेज निषेध कानून के तहत 2023 में 83, 327 मामले ट्रायल के लिए कोर्ट में पेंडिंग रहे, जिनमें से 69, 434 पुराने मामले थे। इस कानून के तहत पुलिस

ने 27, 154 लोगों को गिरफ्तार किया, जिनमें 22, 316 पुरुष और 4, 838 महिलाएं शामिल थीं।

महिलाओं के खिलाफ अपराधों में यूपी- महाराष्ट्र आगे 2023 में महिलाओं के खिलाफ अपराध 0.7% व बुजुर्गों पर 2.7% बढ़े। महिलाओं के खिलाफ अपराध में 4 लाख 48 हजार 211 केस दर्ज हुए, जिसमें सबसे ज्यादा 'पति या रिश्तेदार द्वारा क्रूरता', 'अपहरण', 'बलात्कार' और 'छेड़छाड़' के मामले थे।

महिलाओं के खिलाफ अपराधों में यूपी, महाराष्ट्र, प. बंगाल, राजस्थान सबसे आगे हैं। वहीं, महिलाओं के अपहरण में 'जबरन शादी' की प्रवृत्ति बड़ी संख्या में सामने आई, खासकर उत्तर और मध्य भारत में।

दुष्कर्म के 29, 670 मामले दर्ज किए गए-

2023 में देश में दुष्कर्म के कुल 29, 670 मामले दर्ज किए गए। सबसे ज्यादा 5, 078 मामले राजस्थान और 3, 516 मामले उत्तर प्रदेश में दर्ज किए गए। दिल्ली में 1, 094 मामले सामने आए। वहीं, 2022 में कुल 31, 516 मामले दर्ज हुए थे।

मेट्रो सिटी में अपराध बढ़े-

2023 में बड़े शहरों में अपराध बढ़ता हुआ रिकॉर्ड किया गया। बेंगलुरु में सबसे ज्यादा 68, 250 केस दर्ज हुए। वहीं, दूसरे पर चेन्नई और तीसरे स्थान पर मुंबई रहा।

ऑनलाइन धोखे के मामलों में मुंबई पहले नंबर पर

मुंबई 19 मेट्रो शहरों में ऑनलाइन चीटिंग में पहले स्थान पर रही। ऐसे 2, 396 मामले दर्ज हुए और ऑनलाइन दस्तावेज फर्जीवाड़े के 45 केस आए। महिलाओं व बच्चों के साथ साइबर स्टॉकिंग/बुलिंग में मुंबई दूसरे (119 केस) नंबर पर रही, जबकि हैदराबाद इस मामले में पहले (163 केस) पर रहा। इंटरनेट के जरिए यौन शोषण में भी मुंबई दूसरे (179 केस) नंबर पर रही।

बेंगलुरु पहले (374 केस) पर। साइबर अपराधों की लंबित मामलों में मुंबई सबसे आगे रही।

किसानों की आत्महत्या; महाराष्ट्र की सर्वाधिक 38.5% हिस्सेदारी है-

2023 में खेती से जुड़े 10, 700 से ज्यादा लोगों ने आत्महत्या की, जिनमें से 38.5% महाराष्ट्र और 22.5% कर्नाटक से थे। कुल आत्महत्याओं (1 लाख 71 हजार 418) में 66.2% पीड़ितों की वार्षिक आय एक लाख से कम थी।

खेती क्षेत्र में 4, 690 किसान/खेती करने वाले और 6, 096 कृषि मजदूरों ने आत्महत्या की, यह देश में कुल आत्महत्याओं का 6.3% है। खेती में सबसे अधिक आत्महत्याएं महाराष्ट्र (38.5%) , कर्नाटक (22.5%) , आंध्रप्रदेश (8.6%) , मध्य प्रदेश (7.2%) में दर्ज की गईं।

रेलवे में यात्रियों के साथ चोरी में भी महाराष्ट्र आगे-

दिल्ली में सबसे अधिक नकली नोट के मामले दर्ज हुए NCRB रिपोर्ट के अनुसार, 2023 में देश में कुल 3 लाख 51 हजार 656 नकली नोट जब्त किए गए। इनकी कुल कीमत 16.86 करोड़ रुपए थी। दिल्ली में सबसे अधिक नकली मुद्रा के मामले भी दर्ज किए गए हैं, विशेष रूप से 2000 रुपए के नोटों के।राजस्थान और असम 500 रुपए के नकली नोटों की जब्ती में आगे रहे हैं। राजस्थान ने 500 रुपए के 38, 087 नकली नोट जब्त किए, जिनकी कीमत 1.9 करोड़ रुपए थी। असम ने 37, 240 नोट जब्त किए, जिनकी कीमत 1.86 करोड़ रुपए थी।

वहीं, उत्तर प्रदेश 200, 100, 50 और 20 रुपए के नोटों सहित कम मूल्य के नकली नोटों की जब्ती में टॉप राज्य के रूप में उभरा है। प्रदेश ने 13.11 लाख रुपए मूल्य के के 200 रुपए के 6, 558 नकली नोट जब्त किए। इसके बाद कर्नाटक में 4, 903 नोट और राजस्थान में 3, 593 नोट जब्त किए गए।

उत्तर प्रदेश में 6.03 लाख रुपए मूल्य के 12, 068 नकली नोट जब्त किए गए, जो दिल्ली (3, 027 नोट) और महाराष्ट्र (1, 457 नोट) में जब्त किए गए नोटों की संख्या से चार गुना से भी ज्यादा

है।

NCRB के द्वारा भारत में वर्ष 2023 के संदर्भ में विभिन्न आंकड़ों के माध्यम से घटित अपराध के परिदृश्य प्रदर्शित करने वाली रिपोर्ट को इसकी ऑफिशल वेबसाइट: https://ncrb.gov.in पर विभिन्न तीन वॉल्यूम में प्रकाशित की गई, जिसे उक्त ऑफिशल वेबसाइट को एक्सेस करके उक्त वेबसाइट से संबंधित निम्नलिखित तीन विभिन्न डाउनलोडिंग लिंक के माध्यम से इसे डाउनलोड करके अवलोकित किया जा सकता है, जिसे विभिन्न तीन वॉल्यूम में क्रमशः 542, 518 तथा 526 पृष्ठों में प्रकाशित किया गया है-

1. https://www.ncrb.gov.in/uploads/files/1CrimeinIndia2023PartI1.pdf
2. https://www.ncrb.gov.in/uploads/files/2CrimeinIndia2023PartII2.pdf
3. https://www.ncrb.gov.in/uploads/files/3CrimeinIndia2023PartIII2.pdf

यहां वॉल्यूम-1 की अंग्रेज़ी में डाउनलोडिड रिपोर्ट की झलकियों (Snapshots) को उक्त रिपोर्ट्स के सभी स्क्रीनशॉट्स के माध्यम से दिखाया गया है, जबकि इसकी रिपोर्ट्स के हिन्दी झलकियों के सारांश को ठीक इसके पहले हिंदी में दिखाया गया है-

Crime in India – 2023

SNAPSHOTS (States/UTs)

A) Overall Crime

Total of 62,41,569 cognizable crimes comprising 37,63,102 Indian Penal Code (IPC) crimes and 24,78,467 Special & Local Laws (SLL) crimes were registered in 2023. It shows an increase of 4,16,623 (7.2%) in registration of cases over 2022 (58,24,946 Cases). Crime rate registered per lakh population has increased from 422.2 in 2022 to 448.3 in 2023. During 2023, registration of cases under IPC and SLL Crimes have increased by 5.7% and 9.5% respectively over 2022. Percentage share of IPC was 60.3% while percentage share of SLL cases was 39.7% of total cognizable crimes during 2023. **[Table –1.1]**

Major increase is seen in the cases registered under Obstruction on Public way (Sec.283 IPC) from 93,548 cases in 2022 to 1,51,469 cases in 2023 and under 'Thefts' from 6,52,731 cases in 2022 to 6,89,580 cases in 2023 **[Table 1A.4]**. Similarly under SLL category, major increase is in cases registered under Motor Vehicle Act from 94,450 cases in 2022 to 1,91,828 cases in 2023. This has resulted in an increase of 97,378 cases in SLL during 2023 as compared to 2022. **[Table 1A.5].**

During 2023, total of 53,61,518 IPC cases (15,84,912 cases pending from previous year + 37,63,102 reported during the year + 13,504 cases re-opened for investigation) were under investigation, out of which total of 37,85,839 cases were disposed of by police including 27,53,235 cases which were charge sheeted, resulting in the charge sheeting rate of 72.7%.

B) Offences Affecting the Human Body[1] - Summary

A total of 11,85,915 cases of offences affecting the human body were registered which accounted for 31.5% of total IPC crimes during 2023, out of which Hurt (6,36,767 cases) accounted for maximum cases i.e.53.7%, followed by Causing death by Negligence (1,65,971 cases, 14.0%) and Kidnapping & Abduction (1,13,564 cases, 9.6%). **[Table – 1A.4]**

The cases registered under offences against human body depict an increase of 2.3% in 2023 over 2022 (11,58,815 cases) and the crime rate has increased from 84.0 in 2022 to 85.2 in 2023. **[Table – 1A.4]**

C) Murder

A total of 27,721 cases of murder were registered during 2023, showing a marginal decline of 2.8% over 2022 (28,522 cases). **[Table – 2A.1]**

Note 1: Chapter XVI of IPC covers gamut of cases relating to "Offences Affecting the Human Body"

'Disputes' (9,209 cases) was the motive in highest number of murder cases during 2023 followed by 'Personal Vendetta or Enmity' (3,458 cases) and 'Gain' (1,890 cases). **[Table – 2A.2]**

D) Kidnapping & Abduction

A total of 1,13,564 cases of kidnapping & abduction were registered during 2023, showing an increase of 5.6% over 2022 (1,07,588 cases). **[Table – 2C.1]**

A total of 1,16,404 (24,285 male, 92,114 female and 5 transgender) victims were reported kidnapped or abducted during 2023, out of which 82,106 (16,033 male and 66,072 female and 1 transgender)[2] victims were children and 34,298 (8,252 male, 26,042 female and 4 transgender) victims were adult. **[Table – 2C.2]**

During 2023, a total of 1,40,813 kidnapped or abducted persons (31,837 male, 1,08,971 female and 5 transgender) were recovered out of which 1,39,164 persons were recovered alive and 1,649 persons were found dead. **[Table – 2C.4]**

E) Offences against Public Tranquillity

A total of 58,247 cases of offences against public tranquility were registered under various sections of IPC during 2023, out of which rioting (39,260 cases) accounted for 67.4% of total such cases. The cases of offences against public tranquility have increased by 2.0% in 2023 over 2022 (57,082 cases). **[Table – 1A.4]**

F) Crime against Women

A total of 4,48,211 cases of crime against women were registered during 2023, showing an increase of 0.7% over 2022 (4,45,256 cases).**[Table – 3A.1]**

Majority of cases under crime against women under IPC were registered under 'Cruelty by Husband or Relatives' (1,33,676 cases, 29.8%) and 'Kidnapping and Abduction of Women' (88,605 cases, 19.8%), followed by 'Assault on Women with intent to outrage her modesty' (83,891 cases, 18.71%) and 'Protection of Children from Sexual Offences Act (POCSO)' (66,232 cases, 14.8%). The crime rate registered per lakh women population was 66.2 in 2023 in comparison with 66.4 in 2022. **[Table – 3A.2]**

G) Crime against Children

A total of 1,77,335 cases of crime against children were registered during 2023, showing an increase of 9.2% over 2022 (1,62,449 cases). **[Table – 4A.1]**

In percentage terms, major crime heads under 'Crime Against Children' during 2023 were 'Kidnapping and Abduction of Children' (79,884 cases, 45.0%) and 'Protection of Children from Sexual Offences Act (POCSO)' (67,694 cases, 38.2%). The crime rate registered per lakh children population was 39.9 in 2023 in comparison with 36.6 in 2022. **[Table – 4A.2]**

H) Juveniles in Conflict with Law

A total of 31,365 cases have been registered against Juveniles during 2023, increase of 2.7% over 2022 (30,555 cases). The crime rate increased from 6.9 in 2022 to 7.1 in 2023. **[Table – 5A.1]**

A total of 40,036 juveniles were apprehended in 31,365 cases, out of which 34,674 juveniles were apprehended under cases of IPC and 5,362 juveniles were apprehended under cases of SLL during 2023. **[Table – 5A.4]**

Majority of juveniles in conflict with law apprehended under IPC & SLL crimes were in the age group of 16 years to 18 years (79.0%) (31,610 out of 40,036) during 2023. **[Table – 5A.4]**

I) Crime against Senior Citizens

A total of 27,886 cases were registered for committing crime against Senior Citizens (aged above 60 years) in 2023, showing a decline of 2.3% in registration over 2022 (28,545 cases). **[Table – 6A.1]**

In Crime head-wise cases, highest number of cases (7,608, 27.3%) were registered under Simple Hurt followed by Theft (4,130, 14.8%) and FCF (Forgery, Cheating & Fraud) (3,473, 12.5%) during 2023. **[Table – 6A.2]**

J) Crime/Atrocities against Scheduled Castes (SCs)

A total of 57,789 cases were registered for committing crime against Scheduled Castes (SCs), showing an increase of 0.4% over 2022 (57,582 cases). Crime rate registered showed an increase from 28.6 in 2022 to 28.7 in 2023. **[Table – 7A.1]**

In Crime head-wise cases, highest number of cases (18,437, 31.9%) were registered under simple hurt followed by cases under Criminal Intimidation with 7.8% (4,486 cases) and SC/ST (Prevention of Atrocities) Act with 7.5% (4,345 cases). **[Table – 7A.3]**

K) Crime/Atrocities against Scheduled Tribes (STs)

A total of 12,960 cases were registered for committing crime against Scheduled Tribes (STs), showing an increase of 28.8% over 2022 (10,064 cases). Crime rate registered increased from 9.6 in 2022 to 12.4 in 2023. **[Table – 7C.1]**

In Crime head-wise cases, highest number of cases (2,757 cases, 21.3%) were registered under simple hurt followed by Riots with 13.2% (1,707 cases) and Rape with 9.2% (1,189 cases). **[Table – 7C.3]**

L) Economic Offences

A total of 2,04,973 cases were registered under economic offences, showing an increase of 6.0% in registration over 2022 (1,93,385 cases). Out of three specified category of economic offences viz. criminal breach of trust, FCF (forgery, cheating & fraud) and Counterfeiting, FCF accounted for maximum of 1,81,553 such cases, Criminal Breach of Trust with 22,759 cases followed by Counterfeiting (661 cases) during 2023. **[Table – 8A.2]**

M) Prevention of Corruption Act

A total of 4,069 cases have been registered in 2023 by State Anti-Corruption Bureaux (ACBs) as compared to 4,139 cases in 2022, showing the decline of 1.7% Out 4,069 Cases, majority, i.e., 70.7% were Trap Cases (2,875 cases) followed by 13.8% of Criminal Misconduct (560 Cases). A total of 4,759 persons were arrested, 976 persons were convicted and departmental action was taken against 638 persons. **[Tables – 8C]**

N) Cyber Crimes

A total of 86,420 cases were registered under Cyber Crimes, showing an increase of 31.2% in registration over 2022 (65,893 cases). Crime rate under this category increased from 4.8 in 2022 to 6.2 in 2023. During 2023, 68.9% of cyber-crime cases registered were for the motive of fraud (59,526 out of 86,420 cases) followed by Sexual Exploitation with 4.9% (4,199 cases) and Extortion with 3.8% (3,326 cases). **[Table – 9A.3]**

O) Offences against State

A total of 4,873 cases have been registered in 2023 as compared to 5,610 cases in the year 2022, showing a decline of 13.1%. Out of 4,873 cases, 81.9% of cases were registered under The Prevention of Damage to Public Property Act (3,989 Cases) followed by 750 (15.4%) cases under The Unlawful Activities Prevention Act. **[Table - 10A.2]**

P) Environment Related Offences

During the year 2023, a total of 68,994 cases were registered under Environment Related Offences as compared to 52,920 cases in the year 2022, showing an increase of 30.4%. Crime head-wise cases revealed that the cases registered under The Cigarette and Other Tobacco Products Act (COTPA) with 85.9% (59,279 Cases) were the highest followed by Noise Pollution Acts (State/Central) with 9.6% (6,640 Cases). **[Table – 11.2]**

Q) Crime against Foreigners and Crime by Foreigners

A total of 238 crimes were registered for crime against foreigners (Tourist and Resident) as compared to 192 cases in 2022, showing an increase of 24.0%. Most of the cases registered were under Theft (46) and Rape (27). Out of 266 victims in 238 registered cases, 53.8% of the victims were from Asian Continent (143) followed by 20.7% of victims from European Countries (55). **[Tables – 13A.1-6]**

A total of 2,546 cases were registered in 2023 on crime by foreigners as compared to 2,100 cases in the year 2022, showing an increase of 21.2% Crime head-wise cases revealed that 48.5% of the cases registered were under Foreigners Act & Registration of Foreigners Act (1,234 Cases), followed by 17.7% of Cases under Passport Act (451 Cases) **[Tables – 13B.1-6]**

R) Human Trafficking

A total of 2,183 cases of Human Trafficking were registered in 2023 as compared to 2,250 cases in the year 2022, showing a decline of 3.0%. A total of 6,288 victims have been reported to be trafficked in which 2,687 children and 3,601 adults were trafficked. During the year, 6,043 victims have been rescued from clutches of traffickers and 6,024 persons were arrested for trafficking. **[Tables – 14.1-7]**

S) 1) Missing Persons

A total of 4,84,584 persons (1,59,811 male, 3,24,763 female and 10 transgender) were reported missing in 2023. The number of persons reported missing has increased by 9.5% in 2023 from 4,42,572 persons missing during 2022. **[Table – 15.2]**

During the year 2023, a total of 4,60,886 persons (1,55,283 males, 3,05,585 females and 18 transgender) were recovered/traced. **[Table – 15.2]**

2) Missing Children[2]

A total of 91,296 children (22,460 male, 68,835 female and 1 transgender) were reported missing in 2023. The number of children missing has increased by 9.5% in 2023 from 83,350 children missing during 2022. **[Table – 15.1]**

During the year 2023, a total of 89,809 children (22,838 male, 66,965 female and 6 transgender) were recovered/traced. **[Table – 15.1]**

T) Offences against Property

The cases registered under offences against property have increased by 4.7% from 8,39,252 cases in 2022 to 8,78,307 cases in 2023. During 2023, maximum cases reported were of theft (6,89,580 cases), followed by burglaries (1,07,573 cases), accounting for 78.5% and 12.2% respectively. **[Table – 1A.4]**

During 2023, Properties worth Rs.6,917.2 Crores were stolen and Properties worth Rs.2,065 Crore were recovered accounting for 29.9% recovery of stolen properties. **[Table – 20A.1]**

During 2023, 3,01,082 cases of property crimes registered took place at residential premises. However, majority of Robberies registered took place on roadways (includes highways and roads) with 15,193 cases. **[Table – 20A.2]**

Note 2: The Hon'ble Supreme Court direction on Writ Petition (Civil) No. 75 of 2012 on 10.05.2013, Bachpan Bachao Andolan vs Union of India - In case of complaint with regard to any missing children; made in a police station, the same should be reduced into a First Information Report with an initial presumption of either abduction or trafficking.

U) Offences Relating to Documents & Property Marks

As compared to 1,71,571 cases in 2022, 1,82,214 cases were registered under offences against documents & property marks in 2023 comprising of FCF (forgery, cheating & fraud), out of which, FCF (1,81,553 cases) accounted for 99.6% of total such cases. **[Table – 1A.4]**

V) Seizures under Arms Act

As compared to 80,118 cases under arms act during 2022, 73,388 cases were registered during 2023 in which 82,756 Arms were seized, comprising of 2,153 arms as licensed/factory made and 80,603 Arms as Unlicensed/improvised/crude/country made. A total of 1,09,254 number of ammunitions were also seized during 2023. **[Table – 20B.1]**

W) Seizure of Explosives

As compared to 88,987 Kgs of Explosives recovered in 2022, a total of 10,09,627 Kgs Explosives (RDX, TNT, Plastic Explosives, Gun Powder, Pyrotechnic/Fireworks etc.) have been seized during 2023. This comprises of seizures from Extremists/Insurgents/Terrorists (1,303 Kgs) and seizures from Other Criminals including smugglers (10,08,324 Kgs).

A Total of 4,49,768 Number of explosive devices (Detonators, Gelatin Sticks, Grenades, Landmines & IEDs etc.) have also been recovered during 2023, as compared to 2,79,986 number in 2022. **[Table – 20B.4]**

X) Seizure of Fake Indian Currency

A total of 3,51,656 fake Indian currency notes worth ₹ 16,86,23,100 were seized during 2023. **[Table – 20B.2(ii)]**

Y) Disposal of IPC Cases by Police & Court

S. No.	Crime Head under IPC	Total Cases for Investigation	Cases Charge-Sheeted	Charge-sheeting Rate	Total Cases for Trial	Total Cases Convicted	Conviction Rate
1.	**Murder**	45,544	24,575	85.7	2,72,198	7,181	37.7
2.	**Rape**	40,393	24,582	80.3	2,03,067	4,464	22.7
3.	**Kidnapping & Abduction**	1,80,591	42,635	37.0	3,51,090	3,541	20.2
4.	**Hurt (including acid attack)**	8,65,112	5,85,413	90.7	39,43,129	90,900	36.2
5.	**Rioting**	66,876	32,876	89.2	5,70,044	4,591	17.4

Note : Chargesheeting Rate = Cases Chargesheeted / Total Cases Disposed off by Police * 100
Conviction Rate = Cases Convicted / Cases in which Trials Completed * 100

Z) **Disposal of SLL Cases by Police & Court**

S. No.	Crime Head under SLL	Total Cases for Investigation	Cases Charge - Sheeted	Charge-sheeting Rate	Total Cases for Trial	Total Cases Convicted	Convi-ction Rate
1.	The Excise Act	4,00,658	3,56,881	97.3	14,22,143	2,49,982	83.2
2.	Narcotics Drugs & Psychotropic Substances Act, 1985	1,71,030	1,13,868	98.1	4,74,167	50,982	83.7
3.	The Arms Act	88,860	71,288	98.8	5,81,935	27,615	65.9

Note : Chargesheeting Rate = Cases Chargesheeted / Total Cases Disposed off by Police * 100
Conviction Rate = Cases Convicted / Cases in which Trials Completed * 100

AA) **Arrests, Convictions & Acquittals**

A total of 51,28,163 persons were arrested under IPC & SLL cases combined, as follows:

A total of 30,03,024 persons were arrested under 37,63,102 cases of IPC crimes. A total of 47,66,289 persons were charge-sheeted, 11,37,639 persons were convicted, 11,84,027 persons were acquitted and 98,372 persons were discharged. **[Table – 19A.6]**

A total of 21,25,139 persons were arrested under 24,78,467 cases of SLL crimes. A total of 28,17,073 persons were charge-sheeted, 16,98,457 persons were convicted, 4,60,268 persons were acquitted and 32,220 persons were discharged. **[Table – 19A.8]**

The State/UT reporting highest Charge-sheeting Rate under IPC Crimes are Kerala (95.6%), Puducherry (92.5%) and Andhra Pradesh (91.6%).

भारत में महिलाओं के संदर्भ में घटित अपराधों के संदर्भ में यहां मध्य प्रदेश के शहर भोपाल की दो बेटियों के साथ किये गये दुष्कर्म, रेप तथा ब्लैकमेलआदि से संबंधित तीन समाचारों के स्क्रीनशॉट नीचे संदर्भित किए गए हैं, जिससे कि वे सभी इस संदर्भ में सावधान तथा सचेत रह सकें।इस संदर्भ में मध्य प्रदेश के भोपाल में कोई तीन बेटियों के साथ दुष्कर्म, ब्लैकमेलिंग तथा सोशल मीडिया के माध्यम से मुलाकात करके फ्रेंडशिप

(मित्रता) तथा इसके पश्चात रेप से संबंधित एक रेप तथा दो ब्लैकमेलिंग सहित तीन सत्य घटनाओं की न्यूज़, जिनमें दो 15 फरवरी 2026 को तथा रेप संबंधित घटना 2 मार्च 2026 को अंग्रेजी समाचार पत्र-Times Of India में भोपाल से प्रकाशित हुई थीं, जिनके स्क्रीनशॉट यहां संदर्भित किये गये हैं, ताकि प्रत्येक बेटी तथा उसके माता-पिता के द्वारा इस न्यूज़ का अध्ययन करने के उपरांत इस न्यूज़ से मिली सीख को गंभीरता से उनके जीवन में अपना सकें -

SUNDAY TIMES OF INDIA, BHOPAL
FEBRUARY 15, 2026

Rape accused stalks, harasses girl, tries to stop her wedding

Blackmails Through Pics, Held

TIMES NEWS NETWORK

Bhopal: A 21-year-old, who has been booked for the rape of a minor in the past, was stalking and harassing a 22-year-old girl for nearly 8 months. He was arrested on Saturday.

The accused allegedly barged into the woman's home and shared her photographs on a social media platform in a desperate attempt to stop the woman's wedding. He also issued death threats to the girl's brothers.

Police said the girl met the accused around 7-8 months ago. During their initial acquaintance, he reportedly captured several photographs of the woman.

However, as his criminal nature became apparent, the woman attempted to distance herself. The boy responded with intimidation, even visiting her house to threaten her brothers' lives, which led the woman to completely sever all communication with him.

The harassment escalated to a dangerous level once the accused learned that the woman's family finalised her marriage to another man. On the night of Feb 13, just days before the wedding, he forcibly entered the survivor's home. He confronted her brother, aggressively asserting that he would not permit the marriage to proceed. When the family resisted, the accused brutally assaulted the brother, hurled abuses, and issued death threats before fleeing the scene. Later on Saturday, Meena used his Instagram account to upload and circulate the woman's photographs, aiming to tarnish her reputation and break the engagement. Eintkhedi SHO Ashish Sapre revealed that the accused is a seasoned criminal with four prior cases on his record, including the rape of a minor.

The accused was charged under IT Act for uploading pictures, the SC/ST (Prevention of Atrocities) Act, and multiple sections of BNS

WOMEN UNDER ATTACK

Following a strategic raid, the police nabbed the accused in the Eintkhedi township. He was charged under the Information Technology (IT) Act, the SC/ST (Prevention of Atrocities) Act, and multiple sections of the BNS for assault and criminal intimidation. After being produced before the court on Saturday, the accused was remanded to judicial custody and sent to jail.

In rape, blackmail case, SUV, cars seized, remand extended: Cops

TIMES NEWS NETWORK

Bhopal: In the rape, blackmail and extortion case of a 17-year-old girl, a 3-day extension of police remand for a 21-year-old co-accused on Friday.

The case involves a harrowing ordeal that began in July 2025 in the Khanugaon area. The 17-year-old girl is a student of class 11. According to police, the 19-year-old prime accused, a student of class 12, was acquainted with the survivor's friend and often visited her school to meet her.

He later lured her to meet at a deserted location in the Khanugaon area in an SUV owned by the co-accused and raped her. While the boy allegedly raped the survivor inside the vehicle, his accomplice, the 21-year-old, stood outside and reportedly recorded the assault on his mobile phone.

Fed up with their constant harassment, the girl mustered courage and reported the matter to police. The main accused was arrested on Feb 3. When he was produced before the court, lawyers assaulted him. ACP Ankita Khatarkar said that police are yet to recover the mobile phone on which the alleged obscene video was recorded but the cars have been seized. Police also said the girl alleged pressure to convert her religion.



Minor raped by teen social media friend

Bhopal: A friendship struck on social media allegedly turned into a sexual assault case within a week, with Civil Lines police registering an FIR under relevant sections of the Protection of Children from Sexual Offences (POCSO) Act.

Police said the survivor, a 16-year-old girl, and the accused, a 17-year-old boy, both local residents, first came into contact on social media and started meeting in person as their online conversations increased.

The alleged incident took place on Feb 27 at the room of the survivor's friend within Civil Lines police station limits. The survivor alleged the accused made her consume an intoxicant and sexually assaulted her. She also sustained minor injuries. "The minor accused was rounded up and produced before the Juvenile Justice Board, which sent him to a reform house on Sunday. A case was registered, and a detailed probe is going on," a police officer told **TOI**. TNN

7. सातवां अनुकरण : स्वजातीय-अंतर्जातीय-अंतरधार्मिक विवाहोपरांत भी नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणालीय संस्कृति निरंतरता

पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले माता-पिता के यहां सांस्कृतिक रूप से अधिकतर सामाजिक मान्यताओं के अनुसार, बेटे को वंश का प्रतीक तथा बेटी को प्रतिष्ठा का प्रतीक माना जाता है।ऐसे परिवार में

जन्मी बेटी के जीवन में संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग करने के संदर्भ में एक तथ्य यह है कि वह स्वयं की पसंद से या परिवार की सहमति से स्वजातीय, अंतर्जातीय या अंतरधार्मिक किसी भी प्रकार से विवाह करे। उसके जीवन में, उसे सहज सांस्कृतिक रूप से संपूर्ण सामाजिक समानता के अधिकार के उपभोग करने के अवसर के बिना ही जीवन जीने के लिए विवश होना पड़ता है, जबकि परिवार की सहमति से उसके द्वारा विवाह करने पर उसे परिवार की प्रतिष्ठा के प्रतीक के रूप में देखने या मानने से अधिक उसे संपूर्ण सामाजिक समानता के उपभोग करने के अधिकार के संदर्भ में और कुछ नहीं माना जाता, जबकि नव उभय सामाजिक प्रणाली के इस अनुकरण के अनुसार उसके द्वारा किन्हीं भी कारणों के होते स्वजातीय, अंतर्जातीय या अंतर- धार्मिक विवाह हो जाने पर भी उसे तथा उसके पति दोनों को सहज सांस्कृतिक रूप से महिला या पुरुष होने के आधार के माने बिना ही उन्हें समान रूप से शत-प्रतिशत संपूर्ण सामाजिक समानता के अधिकार के साथ जीने के अवसर मिलते हैं। एक बेटी के सामाजिक जीवन में इससे अधिक महत्व का कोई अन्य विषय हो ही नहीं सकता।

इस अनुकरण के अनुसार कोई भी नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले माता-पिता की संतति विशेषकर बेटी स्वजातीय सदस्य के अतिरिक्त किसी कारण वश किसी अन्य जाति, धर्म या पंथ के व्यक्ति से विवाह करने के उपरांत भी नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी 12 अनुकरणों के अभ्यास के पालन की निरंतरता बनी रहती है। अर्थात नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन की संस्कृति के अभ्यास की निरंतरता अखंड रहती है।

8. आठवां अनुकरण : विधिक विवाह, समतावादी विवाह स्वीकार्यता, बारात आगमन सह बेटी विदाई निषेधता-

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली (New ambilineal descent system) की इस आठवीं सामाजिक मान्यता के अनुसार माता-पिता के बेटे-बेटियों की सगाई के स्थान पर विधिक विवाह (court marriage) पहले करने के पश्चात, समतावादी विवाह करने एवं इस विवाह के समय बारात आगमन निषेधता सह ' समतावादी विवाह संबंध-संबोधन' की सामाजिक मान्यता के

अनुसार, अतिथि पति, अतिथि पत्नी, अतिथि बहू, अतिथि जमाई, अतिथि सास, अतिथि ससुर, अतिथि वर तथा अतिथि वधु आदि संबंध-संबोधन की सामाजिक मान्यता का पवित्र अंतःकरण से पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 1

समतावादी विवाह होने के तत्काल बाद, बेटी (अतिथि वधू) को उसके माता-पिता के साथ उनके घर चले जाने तथा इसी प्रकार बेटे (अतिथि वर) को उनके माता-पिता के साथ घर चले जाने की प्रतिपादित परंपरा वाली सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 2

विवाह पत्रिका में वर के स्थान पर अतिथि वर और वधु के स्थान पर अतिथि वधू का उल्लेख किये जाने की प्रतिपादित समाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 3

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अंतर्गत विधि से लिखे वंश लेखन की इस सामाजिक मान्यता के अनुसार समतावादी विवाह में कन्यादान जैसी सामाजिक मान्यता का पालन नहीं किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 4

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली (New ambilineal descent system) की सामाजिक मान्यता के अनुसार समतावादी विवाह कराने में ब्राह्मणों की भूमिका की स्वीकार्यता तो है, लेकिन अनिवार्यता नहीं है। इसे कोई भी वरिष्ठ निकट रक्त संबंधी व्यक्ति (महिला या पुरुष) संपन्न करा सकता है। इस विवाह में एक-दूसरे के हाथों में पहले से अविवाहित लड़के तथा लड़कियों के बाएं हाथों में धारण किये हुये एक दूसरे के ताम्र बंधनों को उनकी माता या इनके समकक्ष रक्त संबंधियों के द्वारा उतार कर, उन्हें पारस्परिक रूप से बदलकर दूसरे पक्ष के होने वाले नव दंपतियों के दांए हाथों में धारण करवाये जाने तथा इसके पश्चात अतिथि वर तथा अतिथि वधु के द्वारा एक-

दूसरे के गलों में अतिथि वर माला तथा अतिथि वधु मालाओं को पारस्परिक रूप से पहनवाने के पश्चात, उनका समतावादी विवाह संपन्न होना मान लिया जाता है तथा इसी के साथ संयुक्त रूप से नव दंपतियों के द्वारा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी १२ अनुकरणों के पालन किये जाने की शपथ लेने की जन घोषणा किये जाने के साथ ही उनका विवाह संपन्न हो जाता है।

इस प्रकार से नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली (New ambilineal descent system) के अंतर्गत समतावादी विवाह संपन्न हो जाता है। ताम्र बंधनों पर 'जय प्रकृति, जय मानव जय राष्ट्र', 'नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली साधक' तथा इन सिद्धान्तों को प्रतिपादित किये जाने की तिथि सन् सहित '6 मार्च, 2022' आदि तीन जानकारियां अंकित होती हैं तथा इस सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के महत्व को प्रदर्शित करने के उद्देश्य से, संख्या '12' को, शुभ संख्या माना जाता है। इसके कारण, ताम्र बंधन पर कहीं न कहीं वृत्त के चिन्ह के अंदर '12' अंकित किये जाने की परंपरा को भी शुभ माना जाता है।

सहायक अनुकरण - 5

इस सामाजिक प्रणाली को मानने तथा अपनाने में घर बहू तथा घर जमाई जैसी स्वाभिमान विरोधी सांस्कृतिक (पारंपरिक) मान्यताओं को नहीं माना जाता है, अपितु इनके स्थान पर, अतिथि बहू तथा अतिथि जमाई जैसे संबंध-संबोधन की संस्कृति जनित प्रतिपादित सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 6

इस सहायक अनुकरण के अनुसार महिला तथा पुरुष के रूप में जन्मी संततियों की मृत्यु उपरांत उनके अंतिम संस्कार, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार उनके अपने वंश संबद्धता ग्रहण करने वाले वंशवाहकों के द्वारा उनके अपने जन्म स्थानों (जन्मभूमियों) पर संपन्न करवाये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 7

समतावादी विवाह संपन्न किये जाने की तिथि हमेशा, प्रत्येक वर्ष 6 मार्च ही अति शुभ है, क्योंकि **बेटी की सामाजिक गरिमा की पुनर्स्थापना** के उद्देश्य से इस प्रणाली का प्रतिपादन मेरे द्वारा 6 मार्च 2022 को किया गया।

9.नवां अनुकरण : प्रतिवर्ष 6 मार्च को 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' तथा नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली प्रतिपादन दिवस उत्सव पालन

इस अनुकरण के अनुसार नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली तथा प्रकृति मानव राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत आदि को 6 मार्च, 2022 को प्रतिपादित किये जाने के कारण प्रतिवर्ष 6 मार्च को इन्हें नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली शिक्षण-प्रशिक्षण तथा अनुकरण विमर्शालाय में एकत्र होकर इन्हें उत्सव के रूप में मनाने की सांस्कृतिक मान्यता का पालन किया जाना चाहिए।

10.दसवां अनुकरण : मातृ-पितृ संपत्ति का विधिक इच्छा पत्र लेखांकन-

इस अनुकरण के अनुसार माता-पिता के द्वारा उनमें से किसी एक के जीवित रहते भी संततियों को संपत्ति वितरण नहीं की जाती, अपितु संततियों के नाम संपत्ति विधिक इच्छा पत्र लेखांकन कर दिये जाने की संस्कृति जनित प्रतिपादित सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

11.ग्यारहवां अनुकरण : आयु वरिष्ठताधारित चिताग्नि (मुखाग्नि) या वरिष्ठ संतति सहभागिता अंत्येष्टि संस्कार तथा मृत्युभोज सह सिरकेश त्यागन निषेधता पालन

इस अनुकरण के अनुसार माता या पिता के देहांत होने पर आयु में वरिष्ठ संतति के द्वारा ही उनके अंतिम संस्कार के समय चिताग्नि संस्कार संपन्न किया जाता है तथा माता-पिता या किसी भी रक्त-संबंधी की मृत्यु होने के

पश्चात उनके संदर्भ में मृत्यु भोज तथा उनके लिए सिरकेश त्यागन जैसे कृत्यों की निषेधता का पालन किया जाता है।

इस अनुकरण की इस प्रतिपादित सामाजिक मान्यता के उल्लंघन का एक जीवंत उदाहरण उस हिंदू सांस्कृतिक मान्यता के पालन में आज भी देखा जा सकता है, जहां पति की मृत्यु होने पर, पत्नी से, उसके विवाह के समय संपन्न किये गये विवाह परिक्रमाओं को उसके पति की मृत्यु होने के पश्चात उसके पति के पार्थिव शरीर के चारों ओर विपरीत दिशा में परिक्रमा करवाकर त्याग करवाये जाते हैं तथा उसके विवाह के समय उसके विवाह की सांस्कृतिक पहचान का उन्मूलन करवा दिया जाता है।जबकि उसी पत्नी की मृत्यु होने पर, इस सांस्कृतिक मान्यता की समानता मृत पति के द्वारा ऐसे कैसे संपन्न करवाई जा सकती है। यदि नहीं हो सकता, तो इस संस्कृति जनित सामाजिक मान्यता प्रेरक कृत्य संपादन करवाया जाना समानता के सिद्धांत के अनुसार नहीं होना चाहिए।यह एक महिला की गरिमा और सम्मान के विरुद्ध है। क्योंकि यह एक पक्षीय सामाजिक परंपरा (संस्कृति) है।जिसका उन्मूलन किया जाना न्यायसंगत है और ऐसी संस्कृति जनित सामाजिक परंपरा का उन्मूलन भारतीय संविधान सम्मत भी है।क्योंकि भारतीय संविधान में उल्लेखित 11 बाध्यकारी मौलिक कर्तव्यों की अनुसूची के क्रमांक (ड.) पर सूचीबद्ध बाध्यकारी मौलिक कर्तव्य को यहां उल्लेखित करना भी अति महत्वपूर्ण तथा प्रासंगिक होगा जिसका संदर्भ इस प्रकार है-

भारत का संविधान भाग 4 'क' अनुच्छेद 51 'क' के अंतर्गत उल्लेखित मूल्य कर्तव्य क्रमांक (ड.) भारत के सभी लोगों में समरसता और सामान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करें, जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करें, जो महिलाओं के सम्मान के विरुद्ध हों।

सहायक अनुकरण - 1

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के इस 11वें अनुकरण के पहले सहायक अनुकरण के अनुसार महिला अथवा पुरुष की मृत्यु होने के उपरांत सफेद रंग का कफ़न ही प्रयुक्त किया जाता है।

सहायक अनुकरण - 2

अतिथि पति तथा अतिथि पत्नी दोनों में से किसी की भी मृत्यु होने पर, विवाह के पूर्व बायें हाथों में पहने हुये ताम्र बंधनों को समतावादी विवाह के समय पारस्परिक रूप से उन्हें दायें हाथों में पहने ताम्र बंधनों को यथावत रखे जाते हैं। मृत पति या पत्नी के ताम्र बंधनों को उनके वंश वाहकों द्वारा स्मृति के रूप में संरक्षित कर लिये जाते हैं।

12.बारहवां अनुकरण : 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' समर्थित सामाजिक परिवर्तन स्वीकार्यता-

इन 12 प्रतिपादित अनुकरणों के संदर्भ में यदि कोई अपेक्षित परिवर्तन, उन्मूलन तथा प्रतिस्थापन किया जाना नितांत आवश्यक हो, तो 'प्रकृति-मानव-राष्ट्र हित प्रोत्साहक संस्कृति स्थापना सिद्धांत' समर्थित परिवर्तन, उन्मूलन तथा प्रतिस्थापन ही स्वीकार किये जाने के अनुकरण का पालन किया जाता है। इसके अंतर्गत जिस अनुकरण से संबंधित परिवर्तन किया जाना है, उसी मुख्य अनुकरण के अंतर्गत पहले से प्रतिपादित सहायक अनुकरण के अगले क्रम में एक या एक से अधिक सहायक अनुकरण जोड़े जा सकते हैं।

सहायक अनुकरण - 1

वंश की इस नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली (New ambilineal descent system) के अनुसार, न बेटे को पराया माना जाता है, न बेटी को पराया माना जाता है। यह सामाजिक प्रणाली मात्र किसी भी संदर्भ तथा प्रसंग में, एक बेटे और एक बेटी को किसी भी अधिकार के उपभोग करने तथा किसी भी कर्तव्य के निर्वहन करने के लिये एक समान स्थिति में एक समान अवसर दिये जाने का समर्थन करती है, जो न्यायसंगत भी है और संविधान सम्मत भी।

निष्कर्ष : लिंग-भेद रहित संस्कृति की स्थापना के लिये नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों के अतिरिक्त किसी भी पितृवंशीय एवं

मातृवंशीय सामाजिक प्रणाली जनित उत्सवों एवं सामाजिक मान्यताओं के प्रचलन को तत्काल रोके जाने के पश्चात ही, नव उभयवंशीय सामाजिक के पालन किये जाने की ओर क़दम उठाना सार्थक है, अन्यथा नहीं।

अध्याय 19
नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली को समाज में लागू करने में चुनौतियां तथा उनके समाधान

इस प्रणाली के औचित्य के बारे में विचार करने पर, यह कहा जा सकता है कि यह प्रणाली समाज में लिंग-भेद को कम करने और सामाजिक समानता को बढ़ावा देने में मदद कर सकती है।यह प्रणाली संततियों को अपने माता-पिता के वंशों में से किसी एक की वंश संबद्धता चुनने की स्वतंत्रता देती है, जिससे उन्हें लिंग-भेद रहित आधार पर उनकी संस्कृति जनित सामाजिक पहचान बनाये रखने में निर्णायक सिद्ध होती है।

हालांकि, इस प्रणाली को लागू करने में कुछ चुनौतियाँ भी हो सकती हैं, जैसे कि-

1. पारंपरिक प्रणालियों के साथ टकराव: यह प्रणाली पारंपरिक पितृवंशीय और मातृवंशीय प्रणालियों से अलग है, जिससे समाज में इसके लागू होने में कुछ चुनौतियां हो सकती हैं।
2. सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता: इस प्रणाली को लागू करने के लिए समाज में परिवर्तन की आवश्यकता होगी, जो एक चुनौतीपूर्ण कार्य हो सकता है।
3. कानूनी और प्रशासनिक समर्थन: इस प्रणाली को लागू करने के लिए कानूनी और प्रशासनिक समर्थन की आवश्यकता होगी, जो एक बड़ा काम हो सकता है।
4. यह प्रणाली मातृवंशीय तथा पितृवंशीय सामाजिक प्रणालियों के व्यक्तिगत स्वरूपों से चाहे कितनी भी भिन्न हो, परंतु उनके दोषों से लगभग मुक्त है और इसीलिए, इस वंश की सामाजिक प्रणाली को भारतीय संविधान में उल्लेखित, स्वतंत्रता और समानता आदि मौलिक अधिकारों का समर्थन करने वाली सामाजिक प्रणाली कहा

जा सकता है। इस प्रणाली को अपनाने में किसी भी तरह की बाधाएं या अवरोध आने पर इन बाधाओं तथा अवरोधों की चुनौतियों से निपटने के लिए भारत के सर्वोच्च न्यायालय की शरण भी ली जा सकती है, जो एक पूर्णतः कानूनी क़दम है।

5. इस सामाजिक प्रणाली को अपनाने में, पुरुष विवाह के पश्चात उसकी पत्नी के माता-पिता के यहां अतिथि की हैसियत (Status) में उसका सारा जीवन व्यतीत करता है, लेकिन नव वंशीय सामाजिक प्रणाली अपनाने के पश्चात पति को, पत्नी की भी यही हैसियत (Status) स्वीकार करने के लिये मानसिक रूप से सहमत होना होगा।

6. यह प्रणाली पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के लगभग सभी दोषों से मुक्त तो है, लेकिन प्रारंभ में इसे अपनाने की शुरुआत कुछ लोगों के द्वारा होने के उपरांत ही, अन्य लोग इसके गुणों, महत्व तथा लाभों से परिचित हो सकेंगे।

7. समाज में कुछ लोगों के द्वारा इस सामाजिक प्रणाली के अपनाने पर, कुछ उन्मादी कट्टरपंथियों के द्वारा इसे धर्म के विरुद्ध बताकर, समाज के कुछ लोगों के द्वारा इसे अपनाने पर वे उनका विरोध कर सकते हैं।

8. कोई भी सामाजिक परिवर्तन कितना भी सकारात्मक हो, कुछ उन्मादी कट्टरपंथियों तथा रूढ़िवादियों के द्वारा ऐसे सकारात्मक सामाजिक परिवर्तन को अपनाने वाले लोगों का विरोध तो किया ही जाता है। इसलिये नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों को अपनाने वाले लोगों का विरोध भी किया जा सकता है।

अंत में, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली एक नवीन और प्रगतिशील सामाजिक प्रणाली है, जो समाज में लिंग-भेद को कम करने और सामाजिक समानता को बढ़ावा देने में मदद कर सकती है। हालांकि, इसके लागू होने में कुछ चुनौतियाँ भी हो सकती हैं, जिन्हें ध्यान में रखना होगा।

भारत में नव उभयवंशीय समाजिक प्रणाली एक महत्वपूर्ण सामाजिक व्यवस्था है, जो लिंग-भेद रहित आधार पर व्यक्तियों को अपनी परिस्थितियों के अनुसार वंश का चुनाव करने की अनुमति देती है। यह प्रणाली सामाजिक लचीलापन, सांस्कृतिक विविधता और पारिवारिक संबंधों को बढ़ावा देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

अध्याय 20
पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के दोषों तथा नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के गुणों का तुलनात्मक विश्लेषण

तो आइये अब पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की अधिकांश लिंग-भेदात्मक सामाजिक मान्यताओं का, नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली की लिंग-भेद रहित सामाजिक मान्यताओं के एक तुलनात्मक विश्लेषण का अध्ययन शुरू करें-

1. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का सबसे बड़ा समाजिक दोष यह है कि इस प्रणाली की सभी सामाजिक मान्यताएं मात्र पुरुष की सुख-सुविधाओं, गरिमा, सामाजिक पहचान तथा स्वाभिमान को ध्यान में रखते हुये ही प्रतिपादित की गई हैं, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के सभी अनुकरण (सामाजिक मान्यताएं) पुरुष या महिला होने के आधार पर नहीं, अपितु व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में, महिला-पुरुष दोनों के लिये एक समान अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन किये जाने की समानता तथा भारतीय संविधान में उल्लेखित समानता के मौलिक अधिकार (Fundamental Right to equality) के आधार पर प्रतिपादित किये गये हैं, जो पूर्णतः न्यायोचित हैं।

2. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार, पुत्र के जन्म होने से ही पिता का वंश आगे बढ़ता है,

   जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार पुत्री का जन्म होने पर भी माता तथा पिता के पृथक-पृथक वंश आगे बढ़ने की सामाजिक मान्यता प्रतिपादित है।

3. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार, पिता के पुत्र होने पर ही मात्र-पिता का वंश ही आगे बढ़ता है। माता के नाम, उपनाम या गोत्र से उसके वंश की किसी भी परिस्थिति में आगे नहीं बढ़ने की सामाजिक मान्यता नहीं होती, जबकि नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार, पुत्र हो अथवा पुत्री दोनों में से कोई माता अथवा पिता की पृथक वंश संबद्धता चुनने के पश्चात, माता-पिता-दोनों के ही वंश आगे बढ़ाने की सामाजिक मान्यता का पालन कर सकते हैं, जो समानता पर आधारित है।

4. पितृवंशीय सामाजिक सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार सिर्फ पुत्र के ही द्वारा पिता के गोत्र को ग्रहण करने तथा पिता के ही वंश को आगे बढ़ाने की सामाजिक मान्यता का निर्वहन किया जाता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, एक या एक से अधिक पुत्र या पुत्री होने पर, एक ही या उनमें से कोई भी पुत्र या पुत्री अपने पिता या माता के पृथक वंश को आगे बढ़ाने के स्वेच्छिक या विचार विमर्शीय चुनाव करके, किसी के भी उपनाम या गोत्र को ग्रहण करके, वे उनके पृथक-पृथक वंशों को आगे बढ़ाने के पारंपरिक कर्तव्य के निर्वहन करने की सामाजिक मान्यता का पालन कर सकते हैं।

5. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार, माता या पिता के अंतिम संस्कार के समय, पुत्र के द्वारा ही मुखाग्नि जैसा संस्कार संपन्न किया जाता है, जबकि नव

   उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, आयु में वरिष्ठ पुत्री या पुत्री के द्वारा ही मुखाग्नि संस्कार संपन्न किये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है।

6. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं के अनुसार, महिलाओं तथा पुरुषों के द्वारा किये जाने वाले सामाजिक, धार्मिक, पंथ प्रेरित आदि अधिकतर कार्य तथा उनकी भूमिकाएं महिला या पुरुष होने के आधार पर पहले से ही निर्धारित मानकों

के अनुसार संपन्न किये जाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों के अनुसार, किसी भी तरह का कार्य, कोई भी महिला या पुरुष संपादित कर सकता है, जो समानता के सिद्धांत के अनुसार न्यायोचित भी है।

7. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की लिंग-भेदात्मक सामाजिक मान्यताओं का पालन किये जाने के कारण, महिलाओं की सोच तथा मानसिकता मतारोपित (Brain washed) हो चुकी होती है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों के अनुसार महिला तथा पुरुष के लिये कोई भी कार्य संपादित करने की सामाजिक स्वीकृति की संस्कृति होती है। इस कारण महिला अपने आप को दोयम दर्जे का महसूस नहीं करती है।

8. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यताओं के प्रतिपादन करते समय पुरुषों की श्रेष्ठता (Male supremacy) को ध्यान में रखते हुये, महिला-पुरुष होने के आधार पर, महिला तथा पुरुषों के द्वारा किये जाने वाले कार्य व्यवहार के लिये अलग-अलग मानकों का प्रयोग किया जाता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) को प्रतिपादित करते समय, एक ही मानक - 'जय प्रकृति, जय मानव, जय राष्ट्र' अर्थात मन, कर्म तथा वचन से किसी भी महिला या पुरुष द्वारा किया जाने वाला कृत्य, जो प्रकृति, मानव तथा राष्ट्र के हितों को प्रोत्साहित तथा संवर्धित करते हों, मान्य होते हैं अन्यथा नहीं, का प्रयोग किया गया है, जो समानता के सिद्धांत के अनुकूल तथा सभी के लिये हितकारी है , इसीलिए यह सामाजिक प्रणाली सर्वाधिक उपयुक्त है।

9. हिंदू पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली की सामाजिक मान्यता के अनुसार तो महिलाओं के मासिक धर्म की शारीरिक अवस्था को, अपवित्र माना जाता है, जबकि नव उभय वंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण अनुसार, किसी महिला की इस शारीरिक अवस्था को, अपवित्रता का नहीं अपितु, एक महिला के स्वस्थ स्त्रित्व का

प्रकृति जनित प्रतीक माना जाता है। यह अलग बात है कि ऐसे समय में महिला के द्वारा स्वच्छता का ध्यान रखे जाने या न रखे जाने के संदर्भ में उसके निजी स्वास्थ्य का एक विषय हो सकता है।

10. संयोग से या प्रेम प्रसंगवश, पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले हिंदू परिवार में जन्मे पुत्र और पुत्री के पिता के समान गोत्र होने के उपरांत भी, विवाह कर लेते हैं। ऐसी स्थिति में समाज के लोग उन्हें सामाजिक अपराध बोध की दृष्टि से देखते हैं, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण (सामाजिक मान्यता) के अनुसार उन दोनों में से किसी एक के द्वारा अपनी माता का गोत्र ग्रहण करके, सगोत्र विवाह निषिद्धता की सामाजिक मान्यता के उल्लंघन के अपराध बोध के भाव से मुक्ति का अनुभव कर सकते हैं, तथा ऐसे दंपति को यहां से नव उभयवंशीय सामाजिक के 12 अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं) वाली संस्कृति मनाना शुरू करना पड़ता है।

11. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में, बेटी अपने परिवार को छोड़कर, पति के परिवार के साथ रहने में, बिछुड़ने के पीड़ादायी अनुभव के साथ सारा जीवन व्यतीत कर देती है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्मी बेटी, ससुराल वालों के लिये, एक अतिथि बहू की भूमिका के साथ ही सारा जीवन जीती है और उसे उसके माता-पिता तथा बहन-भाइयों से बिछुड़ने की पीड़ा से मुक्त जीवन जीने का अवसर मिलता है।

12. पितृवंशीय परिवार में जन्मी बेटी, विवाह के पहले कम तथा विवाह के पश्चात जाने-अनजाने में, स्वयं उसके माता-पिता के द्वारा ही ठगा हुआ अनुभव करती है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले परिवार में जन्मी बेटियां, उनकी ससुराल के लिये जीवन पर्यंत अतिथि बहू की भूमिका का निर्वहन करने के कारण, उसके माता-पिता द्वारा, सगे द्वारा ठगे जाने का अनुभव नहीं कर पातीं।

13. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्म लेने वाली बेटी को अपने परिवार से उसकी सामाजिक पहचान को, विवाह के पश्चात छोड़ने के लिए मजबूर होना पड़ता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्मे बेटे और बेटी दोनों में से किसी को भी विवाह के पश्चात, उनके माता-पिता के द्वारा मिली विरासती सामाजिक पहचान के साथ ही जीवन जीने की सामाजिक स्वीकृति वाली संस्कृति के साथ जीने का अवसर मिलता है, जो समानता के सिद्धांत पर आधारित होता है।

14. पितृवंशीय परिवारों में जन्मी बेटी को माता-पिता के द्वारा, उसके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में बेटे के समान अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन करने की सामाजिक स्वीकृति तो दूर की बात है, अपितु विवाह के पश्चात् उनकी बेटी के प्रति संवेदनहीनता की पराकाष्ठा तो तब देखने-समझने को मिलती है, जब उसे बेटे के समान उनके परिवार का सदस्य ही मानना छोड़ देते हैं। बेटी उनकी इतनी निकृष्ट संवेदनहीनता का अनुभव करते हुये भी उनके प्रति संवेदनशील बनी रहती है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों (सामाजिक मान्यताओं / social assumptions) के अनुसार, एक बेटी को एक बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा सभी कर्तव्यों के निर्वहन की संस्कृति के साथ जीने का अवसर मिलता है।

15. पितृवंशीय परिवारों में जन्मी बेटी के विवाह होने के पश्चात, उसके ससुराल पक्ष में वैवाहिक कार्यक्रमों के आयोजनों के दौरान चीकट जैसी प्रथा का निर्वहन करके, बेटे की अपेक्षा उसके साथ किये जाने वाले भेदभावों की पीड़ा पर प्रतीकात्मक मरहम लगाने के समान है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरणों तथा वैचारिकी सिद्धांतों के अनुसार चीकट, भाई दूज तथा यहां तक कि रक्षाबंधन आदि को माने जाने की निषिद्धता का पालन किया जाता है, क्योंकि जब एक बेटी को बेटे के समान सभी अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन की समानता रहती है, तो बहन

के लिये यह प्रतीकात्मक सांत्वना सोचे समझे छल-कपट तथा संवेदनहीनता से अधिक और कुछ नहीं माना जाता है।

16. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्मी बेटियों के जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में, बेटे के समान ही माने जाने की कोई संस्कृति नहीं होती, जो बेटियों के लिये अति पीड़ादायक सिद्ध होती है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवारों में जन्मे बेटे-बेटियों को, उनके जीवन के प्रत्येक संदर्भ तथा प्रसंग में एक समान अधिकारों के उपभोग तथा एक समान कर्तव्यों के निर्वहन करने की संस्कृति जीने की सामाजिक स्वीकृति होती है, जो विशेष कर बेटियों के सर्वांगीण विकास के लिये तथा पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले माता-पिता के द्वारा, उनकी बेटी के साथ लिंग-भेदात्मक व्यवहार किये जाने के पाप से मुक्ति तथा प्रायश्चित की प्रेरणा लेने हेतु एक अद्वितीय, अद्‌भुत तथा अभूतपूर्व सामाजिक प्रणाली है।

17. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले हिंदू परिवारों में, पिता के गोत्र की लड़की या लड़के के साथ हमेशा-हमेशा वैवाहिक संबंध स्थापित होने की निषिद्धता का पालन किया जाता है, एवं माता की ओर की पांच पीढ़ियों तक के लड़के-लड़की पारस्परिक रूप से बहन-भाई माने जाते हैं, इसके पश्चात छठवी पीढ़ी के नहीं, उनके साथ वैवाहिक संबंध स्थापित करने की सामाजिक स्वीकृति होती है, जबकि मेरे द्वारा प्रतिपादित नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के अनुकरण के अनुसार, एक ही माता-पिता के बच्चे उनके समान गोत्र या उपनाम के स्वजातीय सदस्यों के साथ विवाह करने की निषिद्धता का पालन तो किया जाता है। लेकिन पिता अथवा माता की पांचवी अथवा सातवीं पीढ़ी के बाद वाली पीढ़ीयों के लड़के-लड़कियों के पारस्परिक वैवाहिक संबंध स्थापित करने की सामाजिक स्वीकृति होती है।

18. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले माता-पिता की ओर से पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले लड़के

के साथ बेटी का विवाह करने के पश्चात उसे पराया मानने के कारण, उस बेटी (लड़की) को ससुराल में प्रायः पति या पति पक्ष की तरफ से कई प्रकार की शारीरिक तथा मानसिक प्रताड़ना का सामना करना पड़ता है, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले लड़के तथा लड़कियों का अतिथेय दांपत्य विवाह होने के कारण, दोनों दंपतियों की उनकी ससुरालों में सिर्फ अतिथियों की हैसियत होने के कारण विशेष कर बेटी को ससुराल की ओर से किसी भी प्रकार की शारीरिक तथा मानसिक प्रताड़ना का सामना नहीं करना पड़ता।

19. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले माता-पिता के यहां पुत्र का जन्म न होने पर, इसकी हताशा, निराशा, प्रतिपूर्ति के रूप कुंठित रहते, उनकी बेटी को भी, बेटा कहकर संबोधित करते दिखाई देते हैं, जबकि नव उभयवंशीय प्रणाली के पालन करने वाले माता-पिता के द्वारा बेटा हो या न हो भी तब बेटी की स्वतंत्र गरिमा बनाए रखने के लिये, बेटी को, बेटी ही कहकर संबोधित किया जाता है, जो लिंग-भेद उन्मूलन की एक सहज तथा आदर्श स्थिति को दर्शाता है ।

20. पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में सामान्यतः बेटियों का जन्म या बेटियों की संख्या बेटे या बेटों की चाहत में ही बढ़ती है, लेकिन इसके बावजूद भी ऐसी बेटियों के माता-पिता इस सत्य को स्वीकार करने से कतराते दिखाई देते, ताकि वे उनकी बेटियों की नज़र में उनकी इस निकृष्ट सोच के सत्यापन की पुनरावृत्ति होने से बचते रहे, जबकि नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्म लेने वाली बेटियों के माता-पिता को, उनकी बेटी या मात्र बेटी ही होने पर, ऐसी निकृष्ट सोच न होने के कारण उन्हें ऐसी निकृष्ट मानसिकता के उजागर होने का कोई लोकभय नहीं होता।

अध्याय 21
पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली का पालन करने वाले माता-पिता का उनकी बेटियों के प्रति एक सोचे-समझे तथा षड्यंत्रात्मक पहलू का स्पष्टीकरण

किसी भी सामाजिक संदर्भ में किन्हीं भी माता-पिता के लिये उनके यहां पुत्री नहीं, अपितु मात्र पुत्र का जन्म होना भर एक गर्व या श्रेष्ठता का अनुभव करने वाला विषय नहीं हो सकता और इसके विपरीत किन्हीं भी माता-पिता के यहां कोई पुत्र का नहीं, अपितु मात्र पुत्री का ही जन्म होना उनके लिये हीनता या आत्मग्लानि का विषय नहीं हो सकता, लेकिन कुछ माता-पिता के द्वारा उनकी बेटियों के प्रति किये जाने वाले व्यावहार में ऐसी मानसिकता दिखाई देती है। उनके द्वारा ऐसे व्यवहार के लिये कुछ पुरुष उत्तरदाई है, जिन्होंने ऐतिहासिक रूप से कुछ महिलाओं के सहयोग से महिलाओं के लिये लिंग-भेद जैसी षड्यंत्रात्मक घिनौनी सामाजिक मान्यता सृजित करके उन्होंने पुरुषों को महिलाओं से श्रेष्ठ तथा महिलाओं को उनसे हीन माने जाने के लिये पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली स्थापित करके उन्हें दास तुल्य हैसियत में रख दिया, जबकि आदि मानव समाज के एक समय की अवधि विशेष में महिलाओं के लिये लिंग-भेद जैसी कोई स्थिति नहीं थी, और न यह प्रकृति प्रदत्त हैसियत (Status) है। **ऐ**तिहासक रूप से कुछ कुटिल पुरुषों ने कुछ तथाकथित महिलाओं के सहयोग से षड्यंत्र के तहत तथा उनके स्वार्थ पूर्ण उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु उनके लिये लिंग-भेदात्मक भूमिका सृजित करके उन्हें परंपरागत रूप से समाज में स्थापित किया गया।इस कारण इस ऐतिहासिक लिंग-भेद को ऐतिहासिक पहल के द्वारा ही सभी तर्कवादी तथा नारीवादी महिलाओं तथा पुरुषों के द्वारा इसे समाज से उन्मूलित किया जा सकता है ।

प्रायःसभी माता-पिता के द्वारा उनकी बेटियों के साथ पीढ़ी-दर-पीढ़ी किये जाने वाले लिंग-भेदात्मक व्यावहार के उन्मूलन के उद्देश्य से पिता नहीं तो,

कम से कम महिला के रूप में एक बेटी की मां से उसकी बेटी के साथ किये जाने वाले लिंग-भेदात्माक व्यवहार के उन्मूलन की प्रभावी पहल किये जाने के उद्देश्य से मैंने एक नारे को सृजित किया है।वह नारा है- *'बेटी-बेटा एक समान, पिता नहीं तो, मां क्यों न समझे यह ज्ञान ?'*

मेरे द्वारा रचित एक और दोहे के माध्यम से बेटे की चाह में जन्मी एक बेटी को, बेटे समान मन मार कर स्वीकार करने वाले माता-पिता की कपटपूर्ण मानसिकता को व्यंगात्मक रूप से उद्घाटित किया गया है-

चाहत थी सुत जन्म ले, बेटी जन्मी आन।मन मारे मुख से कहे, दोनों एक समान।।

मेरे द्वारा मूलतः ये दो और दोहे मात्र ऐसे माता-पिता की निकृष्ट छवि तथा मानसिकता को अभिव्यक्त करने के लिये सृजित किये हैं, जो उनकी बेटी के साथ अति लिंग-भेदातमक व्यवहार करते हैं-

जिस मां को बेटी-बेटा, एक समान न भाय।
वह तो पशु से भी गिरी, कौन उसे समझाय ।।

(2) बेटा होने मात्र पर, जो माता इतराय।
वह मां बेटी के लिये, न कुछ कलंक सिवाय ।।

मेरे द्वारा सृजित उक्त दोनों दोहे वर्णित करने के पश्चात ऐसे माता-पिता की निकृष्ट मानसिकता को उद्घाटित करने के लिये तथा उन्हें इस संदर्भ में सत्य से साक्षात्कार कराने के लिए मेरे द्वारा, 19 दिसंबर 2024 को दो और दोहे सृजित करने पड़े, जो क्रमशः इस प्रकार हैं-

(1) मात-पिता की संतती, होय सुता या पूत ।
वंश न भाये सुता से, जन्मे चाहे कपूत ।।

(2) ऐसी गिरी हुइ मां तो, पशु तक की नहिं होय।
नर शिशु जन्मे तो खुशी, मादा जन्मे रोय।।

पितृवंशीय या पितृसत्तात्मक सामाजिक प्रणाली (patriarchy) की लिंग-भेदात्मक तथा दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं का पालन करने वाली सोच

का, हिंदू धर्म, किसी अन्य दीन-धर्म या पंथ से कोई लेना-देना नहीं है, क्योंकि ऐसी निकृष्ट सोच तो पशुओं में भी नहीं पायी जाती है, बावजूद इसके कि वे पशु हैं, तो मनुष्य में ऐसी निकृष्ट सोच का क्या औचित्य ? हां, यह तो एक पुरुष सत्तात्मक सोच की नकारात्मक विशेषता है, जिसे किसी पंथ की मान्यता तो कहा जा सकता है, पर इसे किसी धर्म की मान्यताओं से जोड़कर देखना तो, धर्म के अनुयायियों को तथ्यों से भ्रमित बनाये रखने जैसा कुकृत्य है, क्योंकि धर्म तो वह है, जिसके धारण करने से न्याय तथा सामानता की स्थापना के लिये अनुकूल परिवेश का निर्माण होता हो।क्या पितृसत्तात्मक सोच से यह संभव है और क्या भारत का सर्वोच्च न्यायालय इसे सही मान सकता है ? बिल्कुल नहीं, क्योंकि ऐसी अन्याय तथा लिंग-मतारोपित सोच (Gender indoctrinated mindset) के अस्तित्व मात्र से ही, एक बेटी और महिला के अधिकारों के उपभोग तथा उनके सभी कर्तव्यों के निर्वहन करने के रास्ते में उनके लिये एक चुनौती के रूप में, उनके अपने ही माता-पिता के द्वारा उनके रास्ते में खड़ी की गई बिना सिर-पैर वाली एक सबसे बड़ी बाधा है, जिसका जड़ से उन्मूलन किया जाना ही, इस अस्थाई समस्या का एक स्थाई समाधान है। इस संदर्भ में सामाजिक सुधारों के लिये बेटी के रूप में जन्मी महिलाओं के द्वारा लोकतांत्रिक विद्रोह की भूमिका में जीने की नितांत आवश्यकता है और इसके अतिरिक्त इसके उन्मूलन के लिये कानूनी प्रावधानों का होना भी प्रभावी क़दम सिद्ध हुआ है और भविष्य में भी ऐसा ही सिद्ध होगा, लेकिन इस दिशा में सामाजिक सुधार होने की प्रतीक्षा किये बिना ही, कानूनी प्रावधानों के द्वारा भी समय रहते इसे जड़ से उन्मूलित किया जा सकता है, जिसमें सरकार की निर्णायक भूमिका अपेक्षित है तथा इससे आगे बढ़कर यह भी कि समाज से लिंग-भेद के उन्मूलन के लिये समाज के बुद्धिजीवियों, तर्कवादियों, महिला-पुरुष नारीवादियों, पितृवंशीय या पितृसत्तात्मक सामाजिक प्रणाली (patriarchy) की दोषपूर्ण सामाजिक मान्यताओं से मुक्त सोच वाले लोगों के समुदाय का निर्माण किया जाना भी आज के समय की एक मांग है तथा एक नितांत आवश्यकता भी।

पितृवंशीय सामाजिक प्रणाली के पालन करने वाले परिवार में जन्म लेने वाली बेटी को उसके अपने ही माता-पिता के द्वारा, उनके बेटे के समान अधिकार न देकर, अप्रत्यक्ष तरीके से सभी पुरुषों के समान उसके अधिकारो के

उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन नहीं करने देने वाली लिंग-मतारोपित मानसिकता (Gender-indoctrinated mentality) उसके मस्तिष्क में आरोपित कर देते हैं और इसी कारण ऐसी बेटी को उसके विवाह के समय उसके माता-पिता पक्ष से जो कुछ भी थोड़ा या बहुत, लेकिन बेटे के समान नहीं मिली धन-दौलत तथा ससुराल पक्ष से मिलने वाली सुविधाओं को ही, वह उसके अधिकार, स्वतंत्रता तथा उसकी सामाजिक पहचान समझने लगती है, जबकि हक़ीक़त में इन सब सुख-सुविधाओं में उसकी निजी गरिमामय पहचान का अस्तित्व नहीं होता है, बल्कि वह उसकी ऐसी सोच के साथ पुरुष पिछलग्गू या पुरुष दासता वाली महिला की छवि के साथ पीढ़ियों से जीती चली आ रही हैं और इससे आगे बढ़कर यह भी कि वह स्वयं एक बेटी की मां और एक महिला होने के बावजूद भी, जब वह उसकी बेटी के लिये, बेटे के समान अधिकारों के दावे को कार्यान्वित करवाने की बात तो दूर, अपितु वह उसके मन में भी उसे ऐसी संपूर्ण सामाजिक समानता देने की इच्छा तक नहीं रखती, और-तो-और बेटे की चाहत रखते जन्मी अतिरिक्त बेटियों को, **बेटे की चाह में जन्मी अतिरिक्त बेटियों वाले तथ्य तथा सत्य** को, बेटी या समाज के सामने बेटी के प्रति ऐसी निकृष्टतम सोच उद्घाटित तथा सिद्ध होने के लोकभय के कारण स्वीकार करने से कतराती दिखाई देती है । ऐसे लिंग-भेदात्मक मानसिकता वाले माता-पिता के लिये इससे बड़े शर्म की बात और क्या हो सकती है ? प्रत्येक बेटी के ऐसे माता-पिता को समय रहते इस तथ्य से परिचित होकर, उनके द्वारा उनकी बेटियों के साथ किये गये ऐतिहासिक छल कपट पर प्रायश्चित किये जाने के साथ उसे संपूर्ण सामाजिकता समानता मिले, इसलिये प्रत्येक बेटी उसकी मां की छल कपट रहित ममता तथा एक पिता के निष्पक्ष पितृत्व का अनुभव करने के लिये एक उम्मीद लिये खड़ी है।

किसी भी समाज में लिंग-भेद उन्मूलन के उद्देश्य को प्राप्त करने के लिये किसी भी सामाजिक प्रणाली की किसी भी ऐसी सामाजिक मान्यता को नहीं माना जाना चाहिये, जिसके कारण व्यक्ति के जीवन के किसी भी संदर्भ तथा प्रसंग में एक बेटी और बेटे या महिला और पुरुष में से, किसी को भी किसी भी संदर्भ में किसी को भी दूसरे की अपेक्षा कमतर, अयोग्य या हीन माना जाता हो।

अध्याय 22
वंश बेटी से, बेटे से या दोनों से ?

इस पुस्तक के इस अंतिम अध्याय में इस पुस्तक के प्रश्नात्मक शीर्षक के माध्यम से यह उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है कि विशेषकर कुछ पुरुषों के द्वारा वंश के नाम पर महिलाओं के साथ कुछ महिलाओं के सहयोग से किस प्रकार से एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र के द्वारा समाज में लिंग-भेद निर्माण के उद्देश्य से उनकी लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को बदलने के साथ, मानव समाज के आदि विकास की अवधि विशेष में उनकी पुरुष तुल्य भूमिका के इतिहास को नकारते हुये, उन्हें पुरुषों की अपेक्षा कमतर (हीन) दिखने के लिये प्रशिक्षित किया गया तथा उनके प्रति इस में विशेषकर इस प्रकार से सभी लिंग-मतारोपित पुरुषों की किस प्रकार नकारात्मक भूमिका रही।अब इसके बारे में और अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है।

इस अध्याय के पहले, वंश की सभी सामाजिक मान्यताओं का तथ्यात्मिक रूप से विष्लेषण करने के पश्चात अंत में यह समझ में आता है कि मानव समाज के आदि सांस्कृतिक विकास की अवधि विशेष में सामाजिक रूप से वंश की कई दोषपूर्ण महिला गरिमा विरोधी सामाजिक मान्यताएं, वंश तथा लिंग-भेद के नाम पर समाज में स्थापित की गईं तथा ऐसी महिला गरिमा तथा स्वाभिमान विरोधी सामाजिक मान्यताएं किस प्रकार से विकसित होकर, आज तक समाज में किस स्तर तक स्थापित हो चुकी हैं तथा आज समाज में माता-पिता के द्वारा उनकी बेटियों तथा पुरुषों के द्वारा महिलाओं के प्रति कितना हीनता जनक व्यवहार किया जाता है।

माता-पिता तथा बेटियों-महिलाओं के प्रति किया जाने वाला लिंग-भेद न तो प्रकृति जनित है और न जीव-विज्ञान जनित, अपितु यह 'लिंग-भेद' पुरुष द्वारा महिला के प्रति रचे गये एक अप्रत्याशित ऐतिहासिक षड्यंत्र का परिणाम है।

यदि हम निष्पक्षता से यह देखने का प्रयास करें कि पुरुषों और महिलाओं के शरीर की जैविक रचना में समानताएं बहुत अधिक हैं तथा भिन्नताएं बहुत कम। वे भी कुछ जैविक भिन्नताएं इसलिये कि प्रजनन के माध्यम से मात्र पुत्र या मात्र पुत्री ही नहीं, अपितु मात्र संयोग से किसी बार किसी महिला के गर्भ से पुत्र तथा किसी बार किसी महिला के गर्भ से पुत्री आदि के रूप में जन्मी संततियों के माध्यम से अन्य प्राणियों की भांति मनुष्य प्रजाति के अस्तित्व की निरंतरता भी बनी रहे।

इस पुस्तक के अध्याय 5, 6 तथा 7 की विषय वस्तुओं का अध्ययन करने के पश्चात इस निष्कर्ष पर आसानी से पहुंचा जा सकता है कि जीव विज्ञान के दृष्टिकोण से कुछ जैविक संदर्भों में यदि पुरुष, महिला की अपेक्षा अपने-आप में कुछ अद्वितीयता रखता है, तो महिला भी इस इस संदर्भ में पुरुषों की अपेक्षा कुछ अद्वितीयता रखती है, लेकिन जीव विज्ञान के दृष्टिकोण से ये एक-दूसरे के अस्तित्व के पूरक मात्र हैं, एक-दूसरे से कोई श्रेष्ठ या हीन नहीं। इसलिये सामाजिक रूप से भी उन्हें एक समान माना जाना चाहिए। इसलिये वंश की सामाजिक मान्यता के संदर्भ में मात्र पुत्र ही या मात्र पुत्री ही के जन्म से पिता या माता के वंश को आगे बढ़ने की लिंग-भेदात्मक सामाजिक मान्यता के बजाय मात्र संतति के रूप में जन्म लेने वाली बेटी या बेटे, किसी के भी द्वारा उसके माता या पिता या किसी भी अन्य व्यक्ति की सामाजिक वंश संबद्धता ग्रहण करते हुये , और उक्त बेटी या बेटे द्वारा लिंग-भेद रहित आधार पर उनके माता या पिता के पृथक-पृथक वंश को आगे बढ़ाने की सामाजिक मान्यता के दायित्व का निर्वहन किया जा सकता है। इसलिये सारे समाज के द्वारा इस प्रकार के वंश की सामाजिक मान्यता को स्वीकार किया जाना चाहिए, जिससे कि समाज में समय रहते लिंग-भेद जैसे सामाजिक दोषों के उन्मूलन के साथ बेटी के रूप में जन्मी सभी महिलाएं भी पुरुष के समान संपूर्ण सामाजिक समानता के साथ जीने वाली समाज की मुख्य धारा से जुड़ सकें।

अब यदि हम 'वंश' शब्द की सामाजिक संदर्भ में व्याख्या या विचार करें, तो वंश की सामाजिक मान्यता के विचार पर आगे बढ़कर हम एक निष्कर्ष पर पहुंच चुके हैं, वह यह कि यदि 'वंश' शब्द की जीव विज्ञान के संदर्भ में व्याख्या या विचार करें, तो मात्र इतना कहना ही पर्याप्त है कि सारी दुनिया

के सभी मनुष्य एक ही वंश के हैं, वह है मनुष्य प्रजाति का वंश, लेकिन इस पुस्तक में 'वंश' शब्द की व्याख्या या विचार वंश की सामाजिक मान्यता के संदर्भ में व्याख्यायित की गई है।

वंश की दोष रहित सामाजिक मान्यता का स्वरूप तो यही हो सकता है कि वंश, पुत्र या पुत्री के जन्म होने से ही आगे बढ़ने की बजाय मात्र संतति के जन्म होने तथा किसी व्यक्ति के द्वारा किसी की भी ऐसी वंश संबद्धता ग्रहण किये जाने से ही उक्त व्यक्ति के पृथक वंश की अभिवृद्धि माना जाना उचित है तथा ऐसा माने जाने से बेटा या बेटी होने से नहीं, अपितु मात्र संतति के जन्म होने अर्थात किसी भी बेटी या बेटे के द्वारा संतति के रूप में ऐसे व्यक्ति के वंश की वंश संबद्धता ग्रहण करने से उस व्यक्ति के द्वारा माता या पिता या किसी की भी पृथक रूप से वंश की अभिवृद्धि होती है, न कि माता तथा पिता के यहां मात्र पुत्र के जन्म होने से पिता के ही वंश की अभिवृद्धि। माता-पिता के द्वारा पुत्र के जन्म होने से ही पिता का वंश आगे बढ़ता है, यह पुरुषों द्वारा महिला के साथ, उसे मिलने वाली संपूर्ण सामाजिक समानता से वंचित बनाये रखने के उद्देश्य से, उसके साथ किये जाने वाले ऐतिहासिक षड्यंत्र का एक हिस्सा मात्र है, संपूर्ण षड्यंत्र नहीं।

इस प्रकार समाज में जो कहा या सुना जाता है कि बेटे का जन्म होने से ही मात्र पिता का ही पृथक वंश आगे बढ़ता है, न सत्य है न ठीक, अपितु बेटी, बेटे या दोनों के ही जन्म होने से लिंग-भेद रहित आधार माता-पिता दोनों के पृथक-पृथक वंश आगे बढ़ते हैं।वंश की इस सामाजिक मान्यता में संतति या किसी व्यक्ति का पुरुष ही या महिला ही होना आवश्यक नहीं है।वंश की इस संपूर्ण सामाजिक समानता के कालजयी विचार को समाज में स्थापित करने के लिये मात्र सामाजिक स्वीकृति दिये जाने की आवश्यकता शेष है और इससे आगे बढ़कर यह भी कि किसी सत्य को सत्य के रूप में स्थापित होने के लिये किसी व्यक्ति या समाज विशेष की स्वीकृति अनिवार्य तो नहीं होती, बस वांछनीय होती है। हां, इसे समाज में सत्य के रूप में स्थापित होने में समय चाहे जितना लगे, यह तथ्य अलग है।

हां, इस पहल में महिला के रूप में बेटी को भी बेटे के समान उसके परिवार से मिलने वाली वंश की सामाजिक पहचान को पीढ़ी-दर-पीढ़ी जीवंत रखकर, पितृसत्तात्मक सामाजिक प्रणाली की उस लिंग-मतारोपित धारणा

(Gender-indoctrinated myth) को तोड़ना तथा छोड़ना होगा कि महिला की वंश के सामाजिक संदर्भ में कोई जाति, पंथगत या उपनाम वाली सामाजिक पहचान नहीं होती।वह जिस जाति, पंथ या सामाजिक पहचान वाले व्यक्ति के साथ विवाह करती है, वह उसकी ही जाति, पंथ या सामाजिक पहचान की हो जाती है।महिला के रूप में ऐसी दृढ़ इच्छा शक्ति वाली बेटियों की संख्या आज यदि अधिक नहीं है, तो इसके लिये बेटियां ही उत्तरदाई हैं, क्योंकि उन्होंने कभी ऐसी सामाजिक पहचान के साथ जीने की ऐसी दृढ़ इच्छा शक्ति दिखाने का विचार ही नहीं बनाया। इसीलिये तो उनके जीवन में ऐसी दृढ़ इच्छा प्रायः दिखाई नहीं देती। महिलाओं के रूप में जन्मी गेरडा लर्नर, एंजिला सैनी तथा कमला भसीन जैसी बेटियों ने इसे समझा, जाना तथा महिला के रूप में जन्मी सभी बेटियों को लिंग-भेद से मुक्ति के लिये, उन्हें इस सत्य तथा ऐतिहासिक तथ्य से परिचित कराया कि वे भी व्यक्ति के जीवन के प्रत्येक संदर्भ में पुरुषों की ही भांति उनके सभी अधिकारों के उपभोग तथा कर्तव्यों के निर्वहन करने के लिये जन्मी हैं, लेकिन उनकी इस लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को पुरुषों के द्वारा षड्यंत्रात्मक तरीकों से ऐतिहासिक रूप से बदला गया । इस संदर्भ में ऐसी भी कुछ नारीवादी महिलाएं तथा बेटियां हैं, जो उनकी लिंग-भेद रहित सामाजिक हैसियत (Genderless social status of a woman) को पुनः प्राप्त करने के लिये लोकतांत्रिक विद्रोह की भूमिका में उनका जीवन जिया है तथा कुछ आज तक भी जी रही हैं ।

नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों में से किसी न किसी अनुकरण के अनुसार एक ही परिवार में जन्मी संतति के द्वारा माता तथा पिता के उपनामों तथा गोत्रों के नामों को ग्रहण करके उन दोनों के वंशों को आगे बढ़ाने की सामाजिक मान्यता का पालन किया जाना युक्ति-युक्त, तर्कपूर्ण, उचित तथा समाज में महिला तथा पुरुष के मध्य संपूर्ण सामाजिक समानता (Complete social equality) स्थापित किये जाने के साथ ही वंश के नाम पर किये जाने वाले लिंग-भेद के उन्मूलन के संदर्भ में एक प्रभावी, अद्वितीय, अभूतपूर्व तथा ऐतिहासिक पहल सिद्ध किया जाना अति प्रासंगिक है, जिसे किया जाना चाहिए ।

उपरोक्त के अतिरिक्त इस पुस्तक के अंत में मेरे द्वारा यह भी कि समाज के उदारवादी तथा सहज मन वाले लोगों के हाथों से बेटी को बेटे के समान तथा महिला को पुरुष के समान शत-प्रतिशत संपूर्ण सामाजिक समानता दी तो जाना चाहिये, लेकिन सामान्यतः बेटी के माता-पिता तथा समाज के द्वारा ऐसी वृहद स्तरीय पहल किये जाने की संभावना तो बहुत कम दिखती है। हां, इस प्रकार के लिंग-भेद उन्मूलन के संदर्भ में तुरंत सकारात्मक परिवर्तन देखे जाने के लिये क्रमशः तीन स्तरों पर पहल किया जाना ही अधिक प्रभावी सिद्ध हो सकता है-

(1) इस संदर्भ में सबसे पहले तो बेटी के रूप में जन्मी महिला को

स्वयं इसके लिये जागरूक होना होगा।

(2) प्रत्येक परिवार के द्वारा इस दिशा में सामाजिक जागृति लाये

जाने के लिये, उन्हें स्वयं की बेटियों के लिये स्वयं के परिवार

में उनके लिये संपूर्ण सामाजिक समानता दिये जाने वाली

संस्कृति स्थापित करना तथा नव उभयवंशीय सामाजिक

प्रणाली के 12 अनुकरणों के पालन किये जाने की परंपरा

स्थापित करना होगा।

(3) इस विषय में, संबंधित राष्ट्र की सरकारों द्वारा अपेक्षित, प्रभावी तथा बाध्यकारी कानूनी क़दम उठाये जाने होंगे।

यदि किसी भी बेटी का विवाह उसकी व्यक्तिगत परख से या परिवार की सहमति या असहमति आदि किन्हीं भी कारणों से किसी भी रुप में अर्थात स्वजातीय, अंतर्जातीय या अंतर्धार्मिक विवाह हो, परंतु बेटी या बेटी के माता-पिता द्वारा उसे उसके जीवन में संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता की सहज संस्कृति के अधिकारों के उपभोग करने के साथ जीने देने के लिये किसी व्यक्ति को उसका भावी दांपत्य साथी बनने या बनाने का विचार मस्तिष्क में लाने के पूर्व तथा उसके साथ बेटी का समतावादी विवाह (Egalitarian marriage) होने या किये जाने के पूर्व उस व्यक्ति तथा उसके परिवार के समक्ष नव उभयवंशीय सामाजिक प्रणाली के 12 अनुकरणों (

सामाजिक मान्यताएं) के माने जाने के लिये पारस्परिक रूप से सदैव के लिये लिखित रूप में पूर्व से ही पूर्ण सहमति बनाये जाने का प्रस्ताव रख जाना भी अति आवश्यक है।ऐसी सहमति बनाने के उपरांत ही समतावादी विवाह करना सार्थक है, अन्यथा तो उसके लिये संपूर्ण सामाजिक समानता के संदर्भ में, किसी भी स्थिति के पुरुष के साथ एक बेटी या लड़की का विवाह उसकी स्वयं की पसंदगी, इच्छा या परिवार की सहमति या असहमति से होने का कोई अर्थ नहीं रह जाता।उसका ऐसा विवाह, मात्र लिंग-भेद के रूप में कुछ पुरुषों के द्वारा कुछ महिलाओं के सहयोग से उसके साथ किये गये षड्यंत्र की छाया रुपी दासता में आजीवन जीने देने के लिये दी जाने वाली सामाजिक स्वीकृति की पुनरावृत्ति है, और बेटी तथा उसके माता-पिता के द्वारा यह सब कुछ जानते हुये भी, विवाह के नाम पर स्वयं की इच्छा या माता-पिता की सहमति-असहमति से ऐसी हीनता जनक लिंग-भेद की स्थिति में आजीवन जीने के लिये अपने आप को इस लिंग-भेद की भयानक खाई में धकेलने जैसा है, जबकि किसी भी बेटी के माता-पिता या किसी भी माता-पिता की बेटी के द्वारा ऐसे भयानक तथा हीनता जनक लिंग-भेद आधारित सामाजिक जीवन को जड़ से नकारा जाना चाहिए, इसलिये विवाह के संदर्भ में विवेकहीनता तथा यौन आकर्षण के वशीभूत होकर किसी भी बेटी के द्वारा किसी भी पुरुष व्यक्ति को उसके भावी दांपत्य साथी के रूप में चुने जाने का विचार, उसके जीवन की निश्चित सामाजिक समानता की राह में जीवन पर्यंत जीने के लिये एक लिंग-भेद को जानबूझकर निमंत्रण देना है, जो नहीं होना चाहिए, क्योंकि समाज में एक विवाह शारीरिक रूप से भावुक होने का विषय नहीं है, अपितु यह एक बेटी के रूप में जन्मी महिला के लिए संपूर्ण सामाजिक समानता की मानवीय गरिमा के साथ जीवन जीने का एक विषय है ।

समाज के सभी लोगों के लिये तथा समाज की प्रत्येक बेटी के लिये लिंग-भेद जैसे सामाजिक दोष के उन्मूलन के संदर्भ में यह सीख भी विचारणीय तथा अनुकरणीय हो सकती है कि ग़लती से किसी ग़लत रास्ते पर पहुंच जाना-ग़लत नहीं है, लेकिन उस रास्ते के गलत सिद्ध होने पर भी, उसी रास्ते पर आगे बढ़ते जाना ग़लत है।

निष्कर्षत:यह कहा जा सकता है कि एक बेटी के रूप में जन्मी महिला को परजीवी पौधे की तरह नहीं, अपितु उसे एक स्वपोषित वट वृक्ष की तरह संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता की सहज संस्कृति के अधिकार के उपभोग करने की अखंड ज़िद के साथ जीते रहना होगा। तव ही उसके साथ कुछ पुरुषों के द्वारा कुछ महिलाओं के सहयोग से लिंग-भेद के रूप में रचे गये ऐतिहासिक षड्यंत्र से मुक्ति मिल सकेगी, अन्यथा नहीं ।

बेटी के रूप में जन्मी प्रत्येक महिला किसी की दास बनने के लिये नहीं जन्मी है, अपितु वह भी संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता की सहज संस्कृति के साथ जीने के लिये जन्मी है और उसे ऐसा अधिकार न मिलने पर इसे प्राप्त करने के लिये लोकतांत्रिक विद्रोह की भूमिका में जीना उसका जन्म सिद्ध अधिकार है। इसलिये संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता के साथ जीने के संदर्भ में मेरा यह कथन उसके लिये एक मील का पत्थर सिद्ध होगा-

'महिला के रूप में जन्मी प्रत्येक बेटी, बेटे की ही तरह प्रकृति की देन है, और इससे आगे बढ़कर यह भी कि महिला के रूप में जन्मी बेटी, लोगों को सुंदर दिखने के लिये नहीं, अपितु वह भी संपूर्ण सामाजिक तथा राजनैतिक समानता के साथ औरों की भांति, उसके सभी कर्तव्यों के निर्वहन, अधिकारों के उपभोग तथा उन पर शासन करने के सामर्थ्य के साथ जन्मी है।'

इसी के साथ मेरी ओर से आप सभी पाठकों लिये हृदय से-'जय प्रकृति-जय मानव-जय राष्ट्र' ***